MVS-011

वास्तुशास्त्र का स्वरूप एवम् इतिहास

पाठ्यक्रम-निर्माण विशेषज्ञ-समिति

प्रोफेसर चन्द्रमौली उपाध्याय पूर्व विभागाध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी- उत्तर प्रदेश	प्रोफेसर मालती माथुर निदेशक, मानविकी विद्यापीठ इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय इग्नू, नई दिल्ली
प्रोफेसर विनय कुमार पाण्डेय अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी	प्रोफेसर देवीप्रसाद त्रिपाठी कुलपति, उत्तराखण्ड संस्कृत यूनिवर्सिटी हरिद्वार,उत्तराखण्ड
प्रोफेसर श्यामदेव मिश्र ज्योतिष विभाग,केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर, राजस्थान	**कार्यक्रम एवं पाठ्यक्रम समन्वयक** **Programme and Course Coordinator** डॉ. देवेश कुमार मिश्र एसोसिएट प्रोफेसर संस्कृत इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय इग्नू, नई दिल्ली

प्रोफेसर कौशल पंवार
वर्तमान निदेशक
मानविकी विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

मुख्य-सम्पादक	**सह-सम्पादक**
डॉ. राजेश्वर शास्त्री मुसलगांवकर संस्कृत, वेद, ज्योतिर्विज्ञान, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन	डॉ.देवेश कुमार मिश्र एसोसिएट प्रोफेसर संस्कृत, मानविकी विद्यापीठ इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम-लेखक

लेखक	**खण्ड**	**इकाई**
डॉ. जितेन्द्र कुमार दुबे, असिस्टेण्ट प्रोफेसर, लाड देवी शर्मा पंचोली, आदर्श संस्कृत महाविद्यालय राजस्थान	1	01 से 06
डॉ. अम्बुज त्रिवेदी, असिस्टेण्ट प्रोफेसर, ब्रजभूषण संस्कृत महाविद्यालय, खरखुरा, गया	2	02, 03
डॉ रत्न लाल शर्मा, अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार	2	01, 04, 05
मृत्युञ्जय कुमार तिवारी, सहायक आचार्य एवं अध्यक्ष ज्योतिष विभाग, श्री कल्लाजी वैदिक विश्वविद्यालय निंबाहेडा, चित्तौडगढ राजस्थान	3	01 से 06
डॉ. योगेन्द्र शर्मा, वास्तुशास्त्र विभाग, लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, कटवारिया सराय, नई दिल्ली	4	01 से 05

कार्यालयीय सहयोग:

जानकी भट्ट, मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

सामग्री निर्माण

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव, इग्नू, नई दिल्ली

फरवरी, 2023

ISBN-

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, सामग्री निर्माण एवं वितरण प्रभाग, इग्नू द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कंप्यटूर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

मुद्रक :

विषय-सूची

पाठ्यक्रम परिचय

वस् निवासे धातु से वास्तु शब्द की सिद्धि हुई है। इसका आशय यह है कि मानव द्वारा निर्मित भवन वह कला है जिसके द्वारा मनुष्य प्राकृतिक आपदाओं एवं उपद्रवों से छुटकारा प्राप्त करता है। साथ ही वास्तुशास्त्र वह ज्ञान है, जो भूखण्ड पर भवन निर्माण से लेकर उसमें प्रयोग होने वाले सभी वस्तुओं के बारे में मार्गदर्शन करता है। वास्तुशास्त्र के अनुसार शाला, अलिन्द, गुंजारी, दिवार, पट्टे, स्तम्भ, झरोखा, एवं मण्डप आदि के भेद से 16384 प्रकार के घर बनते हैं। परन्तु इन सबके नाम वर्तमान में नहीं मिलते हैं , किन्तु ध्रुवादि एवं शांतनादि गृहों के नाम शास्त्रों में उपलब्ध है। प्रथमखण्ड में यही वर्णन किये गये हैं। द्वितीय खण्ड में पुराणों में वास्तुशास्त्र के उत्पत्ति का प्रसंग प्राप्त होता है। रामायण,महाभारत तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दुर्ग निर्माण की विधि, दुर्ग-निवेश इत्यादि का उल्लेख प्राप्त होता है, जो उस काल में भी वास्तु शास्त्र सम्मत गृह, भवन, प्राचीर आदि निर्माण के साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। तृतीय खण्ड में आपके अध्ययन के लिए वास्तुशास्त्र के विभिन्न आचार्यों का वर्णन किया गया है। आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में गर्ग, मनु, वशिष्ठ, पाराशर, विश्वकर्मा, नम्नजित, मय आदि सात आचार्यों की चर्चा वास्तुशास्त्रज्ञ के रूप में की है। सनत्कुमार कृत वास्तुशास्त्र में ग्यारह वास्तुविदों का उल्लेख मिलता है। जिनके नाम क्रमशः ब्रह्मा, गौतम, भग, इन्द्र, गार्ग्य, अंगिरा, यम, मनु, विश्वकर्मा, भार्गव, तथा व्यास है। वास्तुकौस्तुभ ग्रन्थ में शौनक, राम, रावण, परशुराम, हरि, गालव, विश्वकर्मप्रकाश, मयशिल्पगौतम, शौभित, वैद्याचार्य, कार्तिकेय और च्यवन आदि आचार्यों का उल्लेख किया गया है। विश्वकर्माप्रकाश में पन्द्रह वास्तुविदों का उल्लेख मिलता है।

इस पाठ्यक्रम का चौथा खण्ड वास्तुशास्त्र की अवधारणा में पंचमहाभूत, प्राकृतिक शक्ति, देश, दिक् और काल के वर्णन प्रस्तुत करता है।

अखिल ब्रह्माण्ड में आकाश - वायु - अग्नि - जल - पृथ्वी आदि पंचमहाभूतों की सत्ता सर्वत्र विराजमान है। इन पाञ्चमहाभूतों के बिना इस चराचर जगत और जीवन की कल्पना असंभव है। वस्तुतः इस सम्पूर्ण सौरमण्डल में ग्रह - नक्षत्र - तारे आदि के मूर्तत्व में आनुपातिक रूप से इन पाञ्चमहाभूतों का ही योगदान है। इन पञ्चमहाभूतों में पृथ्वी आदि से गुणों में क्रमिक ह्रास भी होता है जैसे पृथ्वी नामक महाभूत में सबसे अधिक पांच गुण हैं इसी प्रकार अब क्रमशः गुणों में ह्रास भी देखने को मिलता है यथा जल में चार गुण और अग्नि में तीन गुण तथा वायु में दो गुण एवं आकाश में एक गुण ही विद्यमान है।

उक्तानुसार वास्तुशास्त्र का स्वरूप एवं इतिहास नामक इस पाठ्यक्रम के चारों खण्डों में कुल 22 शीर्षकों के भीतर समाहित विषयवस्तु का अध्ययन कर लेने के बाद आप वास्तु के स्वरूप, इतिहास, प्रकार, सिद्धान्त, वास्तु और ज्योतिष का सम्बन्ध , वेद, पुराण,काव्य, तन्त्र, आगम, नाटक, आदि में वास्तुशास्त्र के विभिन्न पक्षों की व्याख्या करने में सक्षम होंगें। साथ ही खण्ड तीन के वर्णन में वास्तुशास्त्र के प्रवर्तकों, ग्रन्थों भारतीय वास्तुकला आदि का अध्ययन करके वास्तु में देश, काल, पन्चमहाभूत आदि की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगें।

खण्ड एक
वास्तुशास्त्र का स्वरूप

प्रथम खण्ड का परिचय

वास्तुशास्त्र का स्वरूप एवम् इतिहास इस खण्ड का नाम है। यहाँ पर अध्ययन की सुविधा के लिए 06 शीर्षकों में विषयवस्तु के विवेचन का प्रस्तुतीकरण किया गया है। इस खण्ड में आप वास्तु की विभिन्न् परिभाषाओं से अवगत होंगें। इसकी ऐतिहासिक स्थिति जानेगें। वास्तु के प्रकार इसकी अवधारणा तथा वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्तों के विविध रूपों का वर्णन भी इसी खण्ड में है। वास्तुशास्त्र का ज्योतिष से बहुत गहरा सम्बन्ध है। यह ज्योतिष के किन्-किन पक्षों से सम्बन्धित है, इसका विचार प्रथम खण्ड के अन्तिम भाग में प्रस्तुत है। मुहूर्त के अन्तर्गत सम्पूर्ण पंचांग रहता है। इसमें तिथि, योग, करण आदि सबकुछ सम्मिलित होते हैं। लाभ, हानि , सुख,दुख सभी का विचार वास्तु और ज्योतिष दोनों में होता है। अत: उक्त खण्ड में आप इस समस्त तथ्यों का अध्ययन निम्नलिखित इकाइयों में करेंगें -

1. वास्तुशास्त्र की परिभाषा एवं परिचय
2. वास्तु की अवधारणा
3. वास्तु के प्रकार
4. वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त (-भाग-1)
5. वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त (भाग-2)
6. वास्तुशास्त्र एवं ज्योतिष का अन्त:सम्बन्ध

इस प्रकार प्रथम खण्ड के अध्ययन से आप स्वरूप, इतिहास आदि के साथ-साथ इस खण्ड में वर्णित विभिन्न विषयों की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् उनकी व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे।

इकाई 1 वास्तुशास्त्र की परिभाषा एवं परिचय

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप:

- वास्तुशास्त्र क्या है एवं मानव जीवन पर इसका क्या प्रभाव होगा इससे परिचित होंगे।
- वास्तु पुरुष की उत्पत्ति एवं स्वरूप को बतायेंगे।
- वास्तु भेद एवं इसका प्रयोजन क्या है इससे परिचित होंगे।
- वास्तु से सम्बन्धित परम्परागत त्तथा आधुनिक विचारधाराओं को भी बतायेंगे।
- परिसरीय वातावरण के अनुसार बने हुए गृह पर सुप्रभावों अथवा कुप्रभावों को वास्तुशास्त्र के अनुसार बताने में सफल होंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई संस्कृत विभाग , मानविकी विद्यापीठ , इन्दिरा गांधी रास्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में संचालित वास्तुशास्त्र में स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के अन्तर्गत वास्तुशास्त्र के स्वरूप एवं इतिहास नामक प्रथम पाठ्य क्रम की खण्ड एक "वास्तुशास्त्र का स्वरूप " नामक उपशीर्षक के अन्तर्गत यह पहली इकाई है इस इकाई का नाम है "वास्तुशास्त्र की परिभाषा एवं परिचय " इस विषय को इस प्रकार सामान्य भाषा में कह सकते हैं कि वास्तु

शब्द के दो अर्थ है पहला अर्थ- वह जगह जहाँ लोग रहते हैं। अर्थात् वे सभी स्थान, जहाँ मानव निवास या कार्य करता है। दूसरा अर्थ – वस्तुओं का अध्ययन भी वास्तुशास्त्र कहलाता है , वेद ऋचाओं में "वास्तु" को गृह निर्माण के योग्य उपयुक्त भूमि के रूप में परिभाषित किया गया है। (समरांगणसूत्रधार) के अनुसार (वास्तु) शब्द "वसु " या पृथ्वी से उत्पन्न है। पृथ्वी को मूलभूत (वास्तु) माना गया है और वे सभी रचनाएँ जो पृथ्वी पर स्थित है उनको भी (वास्तु) कहा जाता है। चूँकि वास्तुशास्त्र का उद्भव ऋग्वेद , बौद्ध साहित्य, स्कन्द पुराण, नारद पुराण आदि ग्रन्थों में देखा जा सकता है। नकारात्मक वास्तु के प्रभाव से आर्थिक परेशनियाँ, व्यापारिक घाटा, ऋण सम्बन्धित समस्या ,निराशा जनित जीवन , निरन्तर सफलताओं से समस्या, परिश्रम का फल न मिलना,स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्या , रोग का अधिक समय तक ठहरना, दुर्घटनाओं का होना ,पारिवारिक झगडा, तलाक का माहौल , नकारात्मक स्थिति, मानसिक तनाव ,अवसाद या डिप्रेशन ,अनिद्रा ,घबराहट , अनिर्णय की स्थिति, किसी प्रकार के अपराध का शिकार होना, परिवार के किसी सदस्य में किसी प्रकार की आपराधिक प्रवृति उत्पन्न होना ,संघर्षपूर्ण जीवन इत्यादि समस्या आती है। परन्तु सकारात्मक वास्तु के लाभ भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है जैसे – वित्तीय लाभ ,व्यापर में मुनाफा ,आर्थिक सम्पन्नता, आकस्मिक धन प्राप्ति ,अप्रत्याशित सम्पत्ति अर्जन ,प्रसिद्धि और सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि, अच्छा स्वास्थ्य ,सुरक्षित एवं लाभदायक यात्रायें , सौहार्दपूर्ण पारिवारिक माहौल, बच्चों के कैरियर के लिए बेहद लाभदायक , रचनात्मक विचारों और नए लाभदायक अवसरों का श्रृजन ,शांतिपूर्ण जीवन इत्यादि फल प्राप्त होता है। दिशाओं के अनुसार यदि बात करें तो घर के पूर्व , उतर की दिशाएँ एवं ब्रह्म स्थान , अर्थात् घर के बीचो-बीच के स्थान को हमेशा हल्का खाली –खाली रखें। वहीं दूसरी तरफ बात करें तो दक्षिण दिशा में भारी-भरकम ढाचें का निर्माण किया जा सकता है या फिर आप दक्षिण दिशा में कोई भारी वस्तु भी रख सकते हैं, ऐसा करना शुभ माना जाता है और घर की सकारात्मकता भी बनी रहती है इस प्रकार इस पाठ के अध्ययन से पाठकगण अधिक ज्ञानार्जन करके वास्तुशास्त्र के बारे समाज को अवगत करायेंगे तथा वास्तु जनित दोषों से छुटकारा दिलायेंगे।

1.2 वास्तु की परिभाषा

वस् निवासे धातु से वास्तु शब्द की सिद्धि हुई है। इसका आशय यह है कि मानव द्वारा निर्मित भवन वह कला है जिसके द्वारा मनुष्य प्राकृतिक आपदाओं एवं उपद्रवों से छुटकारा प्राप्त करता है। साथ ही वास्तुशास्त्र वह ज्ञान है जो भू खण्ड पर भवन निर्माण से लेकर उसमें प्रयोग होने वाले सभी वस्तुओं के बारे में मार्ग दर्शन करता है अर्थात् इससे सिद्ध होता है की घर निर्माण के भूमि को ही वास्तु कहते हैं। क्योंकि वास्तुशास्त्र के सिद्धान्त प्रकृति में सन्तुलन बनाए रखने के लिए है, प्रकृति में विविध बल उपस्थित है जिसमें जल ,पृथ्वी ,वायु ,अग्नि और आकाश सामिल है। इसके बीच परस्पर क्रिया होती है जिसका ब्यापक प्रभाव पृथ्वी पर निवास करने वाले प्राणी पर पड़ती है वास्तु ज्योतिष के अनुसार भी यही मत है। इसके सभी सिद्धान्त पूर्णतया वैज्ञानिक है ,और उनका एक मात्र उदेश्य मानव मात्र का कल्याण निहित है मनुष्य मात्र का सुगमता से एवं शीघ्रता से कल्याण कैसे हो – इस बात का जितना गम्भीर विचार हिन्दू संस्कृति एवं वास्तुशास्त्र में किया गया है , उतना अन्यत्र नहीं मिलता है।

चूँकि जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त मनुष्य जिन –जिन वस्तुओं एवं व्यक्तिओं के सम्पर्क में आता है और जो –जो क्रियाएं करता है उन सबको हमारे दूरदर्शी ऋषि –मुनियों ने बहुत ही वैज्ञानिक

प्रक्रिया से मर्यादित एवं सुसंस्कृत किया है। इतना ही नहीं मनुष्य अपने निवास के लिए भवन – निर्माण करता है तो उसको भी वास्तुशास्त्र के द्वारा मर्यादित किया गया है।

भारतीय वास्तु विद्या का जन्म वेदांग षट्क (विशेषतः ज्योतिष एवं कल्प)से हुआ है।वस्तुतः भारतीय वास्तु कला का आश्रय धर्म रहा है अतः धार्मिक संस्कारों, यज्ञों एवं पूजाओं के सम्बन्ध में आवश्यक भूमि चयन ,भू –संस्कार .भूमि के नाम और उन्मान (नाप – जोख)एवं वेदी –रचना आदि –आदि आवस्यकीय अंगों के सम्बन्ध में जो निर्देश तथा विवरण सूत्र ग्रन्थों में मिलते है वे ही कालान्तर में वास्तु –विद्या के सूत्रपात करने में सहायक हुए।हमारे देश के प्राचीन परम्परा में जिन –जिन विद्याओं का एक साथ उल्लेख हुआ है उनमे वास्तु विद्या का समुल्लेख नहीं जान पड़ता है।अतः ये नहीं कहा जा सकता है की वास्तु-विद्या विद्या-स्थान को ही नहीं प्राप्त थी।आवश्यकता अविष्कारों की जननी कही गई है।और भवन सम्बन्धी आवश्यकता (निवास) मानवता एवं मानव साथ –साथ सनातन से सर्वत्र रही है।ऋग्वेद में ही वास्तु सम्बन्धी बहुत सकेत है जिनसे तत्कालीन वास्तु –विद्या एवं वास्तु –कला का सुदृढ अनुमान किया जा सकता है। वेदों से संगृहित शास्त्रों में से "ज्योतिष शास्त्र " एक है। इसे "वेदों " का नेत्र भी कहते है। एवं वास्तुशास्त्र इसी का एक अंग है यह शास्त्र मंगलमय एवं भवन आदि निर्माण का आधार है , यह इस सम्पूर्ण मानव जीवन के लिए लाभदायक शास्त्र है, इसे प्रगति दायक निर्माण भी कह सकते हैं। ये कल्पनाओ के बजाय अनुभव को प्रधानता देनेवाला एक अपूर्व शास्त्र है। इस शास्त्र को सृष्टी वैचित्र्य एवं मानव कल्याण के बीच की कड़ी भी माना जा सकता है क्योंकि दिशा मानव की दशा को बदल सकती है।

"देश: पुरम् निवासश्च सभा वेश्माऽऽसनानि च।
यद् यत्तदीशमन्यत्वं ततच्छ्रेयस्करं मतम्" ॥(वास्तुसारसंग्रह श्लोक संख्या 2)

मनुष्य की सुख –सुविधा हेतु देश-पुर –ग्राम निवास व आसन (शयन यान उपवेशन) ये सभी समान रूप में अपेक्षित है ,अर्थात्त सबकी अनुकूलता होने पर शुभ और प्रतिकूल लक्षणयुक्त होने पर अशान्ति का वातावरण बना रहता है। इस श्लोक के अनुसार शुभाशुभ फल प्रकाशक वास्तुशास्त्र से भिन्न कोई उपाय न होने से लोकानुक्म्पया ब्रह्म देव ने वास्तु विद्या का विधान बनाया। सृष्टि के आरम्भ में आवास इत्यादि व्यवस्था हेतु जल – स्थल –वन –उद्यान , ऊँच-नीच भूभाग को समतल करने के लिए तत्पर पृथु के भय से भयभित भू गाय का रूप धारण करने वाली निमिलिताक्षी निखिल देवों के साथ जाकर महाराज सृष्टिकर्ता पितामह से अपना दुःख निवेदन की ।भगवन् मैं अत्यन्त विस्तृत तेज वाले महाराज पृथु से पीड़ित होकर आपके शरण में आई हूँ . मेरी रक्षा करें।

भू के निवेदन के बाद श्रीपितामह ने महाराज पृथु से कहा कि हे पृथु - पृथ्वी के अनुकूलता से ही तुम्हारे निवास इत्यादि निष्पत्ति –सम्बन्धित प्रयोजन , त्रिदशाचार्य श्रीविश्वकर्मा के सहयोग से सिद्ध होंगे। अतः तुम इसकी भली-भांति रक्षा करो।तत्पश्चात वास्तु का परिचय कराते हुए प्रवास वसु के पुत्र और बृहस्पति के भगिनेय यह विश्वकर्मा देव दनुज –मानव प्रभृति प्राणियों के निवास- सुखासन –शयन –आसन आदि की पूरी तरह व्यवस्था किए

वर्तमान समय में आवास एवं भूमि के प्रकार देव अथवा मनुष्य जहाँ –जहाँ निवास करते हैं उसी को विज्ञजन वास्तु कहते है।उन निवास स्थलों का वर्णन इस प्रकार है , भूमि –प्रासाद –देवालय –यान एवं शयन , इसमें प्रधान वास्तु भूमि ही है क्योंकि शेष सभी इसी से उत्पन्न होते

है, दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रासाद वास्तु आदि भूमि से उत्पन्न होने एवं उस पर आश्रित होने के कारण वास्तु ही है ,इसी कारण आचार्यों ने इन्हें वास्तु की संज्ञा प्रदान की है , इसलिए भवन प्रासाद आदि के निर्माण के लिए भूमि की परीक्षा वर्ण – रंग –गंध –रस –स्वाद आकृति – दिशा शब्द एवं स्पर्स के द्वारा करनी चाहिए। परीक्षा के बाद ही निर्माण कार्य की आवश्यकता के अनुसार (वास्तु) भूमि ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार आप को वास्तु का आशय भूमि ही जानना चाहिए और इसे ही वास्तु समझना चाहिए।

1.2.1 वास्तु विमर्श क्रम

वास्तु विमर्श क्रम में सर्व प्रथम भूमि एवं भवनों के प्रकार का ज्ञान , उसके बाद भूमि के गुण दोषों की परीक्षा। उपयुक्त भूमि के चयन के बाद उसका मापन एवं शंकु की स्थापना की जाती है।

नियम नं. 1 सर्व प्रथम भूमि का परीक्षण करना चाहिए –इसके लिए जिस भूखण्ड पर घर बनाना है उस भूखण्ड पर एक हाथ गहरा खड्डा खोदें और उसमें से निकली हुई मिट्टी को पुनः उसी गड्ढे में भर कर देखें।

1. यदि मिट्टी कम पड़ती है तो उस भूमि पर निवास करने वाले ब्यक्ति के लिए अशुभ कारक समझना चाहिए।
2. यही मिट्टी समतल या बराबर हों तो समान्य फल समझना चाहिए अर्थात् न हानि और न लाभ।
3. यदि उस मिट्टी से खात भरने के बाद भी मिट्टी बच जाय तो वह भूमि बहुत ही शुभ फल को देने वाली होती है उस वास्तु पर निवास करना बहुत ही शुभकर समझना चाहिए।

नियम नं. 2 इसी प्रकार एक अन्य युक्ति के साथ भी भूमि परिक्षण किया जाता है इसके लिए उस खात को पानी से भरा जाता है फिर सौ कदम दूर उत्तर दिशा में जाकर लौट कर देखें की एक चौथाई पानी घटता है तो वह भूमि मध्यम फल दायक होती है , तथा खात में आधे से कम पानी शेष रहने पर उस भूमि को निवास के लिए अधम कोटि का समझना चाहिए एवं विल्कुल पानी कम न हो तो वह भूमि वृद्धिकारक एवं निवास के लिए सर्वोत्तम होती है।

यथा - खातं भूमिपरिक्षणे करमितं तत् पुरयेत्तन्मृदा
हीने हिनफलं समे समफलं लाभो रजोवर्धने।
तत्क्रित्वा जलपूर्णमाशतपदं गत्वा परिक्ष्यं पुनः
पदोनेऽर्धविहीनकेऽथ निभृते मध्याधमेष्टावनी ॥

(शिल्पदीपकमं श्लोक संख्या 26)

अब भूमि के ढलान के बारे में भी जानना आवश्यक है चूँकि जिस भूमि पर भवन निर्माण करना हो वहां यदि पानी का बहाव पूर्व –उत्तर –ईशान दिशा के तरफ हो तो उस भूमि पर निवास करना उत्तम बताया गया है। इस बात को आप चक्र के माध्यम से समझ सकते है कि जल का बहाव किस दिशा के तरफ हों तो क्या फल होगा।

॥जल प्रवाह एवं भूमि ढलान चक्र ॥

क्रम	दिशा	फल	क्रम	दिशा	फल
1	पूर्व, ईशान, उत्तर प्लव	सुखद	4	नैऋत्य	चोर भय
2	आग्नेय	अग्निभय	5	वायव्य कोण	धान्य चोरी
3	दक्षिण	मृत्युभय	6	पश्चिम	शोक प्रदायक

इस प्रकार जिस भूमि पर निवास करना हो या भवन निर्माण करना हो वहां पर ब्राह्मण आदि वर्णों के अनुसार खूंटी रोपण इत्यादि करके भूमि के भीतर शल्य (हड्डी) इत्यादि का पता लगाया जाता है ।जिस भूमि में शल्य हों अथवा भूमि में दरार अथवा छारीय भूमि , चूहे व सापों के बिल वाली एवं खोदने पर हड्डी इत्यादि निकले तो इस भूमि पर मकान नहीं बनाना चाहिए।

शास्त्रों में उल्लिखित विधि के अनुसार शल्य शोधन करना चाहिए। शुभ दिन ,शुभ नक्षत्र ,तारा एवं चन्द्र जिस दिन अनुकूल हों , ऐसे दिन शुभ लग्न एवं शुभ मुहूर्त में शल्योद्धार करना चाहिए।

भूमि के अन्दर शल्य (हड्डी) ज्ञान करने की विधि - जिस भूमि पर घर या मन्दिर निर्माण करना हो उस भूमि को नव भाग करें। इन नव भागों में पूर्व से प्रारम्भ करके ब , क , च , त , ए , ह , स ,प , ज लिखें। फिर नीचे लिखे हुए प्रारूप के अनुसार यन्त्र बनावे। कुमारी कन्या को तिलक लगाकर श्रीफल देकर पूर्व के तरफ मुख करके बैठावें।

ईशान – प	पूर्व – ब	आग्नेय – क
उत्तर - स	मध्य – ज	दक्षिण - च
वायव्य –ह	पश्चिम –ए	नैऋत्य - त

इसके बाद " ॐ ह्रीं श्रीं ऐ नमो वाग्वादिनी मम प्रश्ने अवतर –अवतर " इस मंत्र से खड़िया (सफेद चाक) से लिखकर 108 बार पढ़ कर कुमारी कन्या के हाथ में दें तथा कोई भी प्रश्नाक्षर कन्या से लिखवाए। लिखे अक्षर को कोष्टक से मिलान करें। यदि मिल जाय तो उस भाग में शल्य (हड्डी) समझना चाहिए।

प्रश्न अक्षर से शल्य मिलने का संकेत

ब आये तो पूर्व दिशा में डेढ़ हाथ के नीचे मनुष्य की हड्डी इसका फल निर्माता की मृत्यु

क	आग्नेय में दो हाथ के नीचे	गधे की हड्डी	राजभय
च	दक्षिण में कमर जितना गहरा	मनुष्य की हड्डी	निर्माता की मृत्यु
त	नैऋत्य में डेढ़ हाथ नीचे	कुत्ते की हड्डी	बालकों को हानि (सन्तान सुख का अभाव)
ए	पश्चिम में दो हाथ नीचे	बच्चे की हड्डी	स्वामी का परदेश वास
ह	वायव्य में तीन हाथ नीचे	पक्षी की हड्डी	मित्रों से मनमुटाव
स	उत्तर में कमर जितना गहरा	विप्र की हड्डी	स्वामी का नाश

प ईशान में डेढ़ हाथ नीचे	गाय की हड्डी	स्वामी का धन नाश
ज मध्य में छाती जितना गहरा	कपाल,केश ,अतिसार	स्वामी की मृत्यु

भूमि शुद्ध करना सर्व प्रथम भूमि को झाड़ना चाहिए गाय के गोबर इत्यादि से अभिसिंचित करके गोमूत्र गंगाजल से, उसके बाद उपर की कुछ मिट्टी को खोद कर हटाना चहिए और एक दिन –रात अर्थात् 24 घंटा गाय को वहां ठहराना चाहिए इन पांच विधाओ से भूमि की शुद्धि होती है। यथा –

सम्मार्जनोपञ्चजनेन सेकेनोल्लेखनेन च।
गवां च परिवासेन भूमि; शुद्धयति पञ्चभि ; ॥ (मनुस्मृति 5 ।124)

1. भूमि के भीतर अगर यदि गाय का शल्य (हड्डी) हो तो राज भय ,मनुष्य का शल्य हो तो सन्तान का नाश , बकरे का शल्य हो तो अग्नि से भय , घोड़ा का शल्य हो तो रोग , गधे या ऊँट का शल्य हो तो हानि , कुत्ते का शल्य हो तो कलह तथा नाश होता है। यदि भूमि में एक पुरुष नाप के नीचे शल्य हो तो उसका दोष नहीं लगता। इसलिए यदि सम्पूर्ण भू खण्ड की मिट्टी एक पुरुष तक खोदकर फेंक दिया जाय और उसकी जगह दूसरी नयी मिट्टी छानकर भर दी जय तो वह भूमि मकान बनाने के लिए श्रेष्ठ होती है। (यहां पर मनुष्य के शिर से लेकर पैर तक नापें यह एक पुरुष का नाप समझना चाहिए। बारह अंगुल का एक बित्ता होता है और दस बित्ते का (120 अंगुल) का एक पुरुष का प्रमाण होता है ऐसा जानना चाहिए।

अब भूमि के प्लव के बारे में जानना आवश्यक है क्योंकि भूमि का झुकाव अगर यदि पूर्व ,उत्तर और ईशान दिशा में नीची भूमि हो तो वह भूमि सब मनुष्यों के लिए अत्यन्त वृद्धिकारक होती है। अन्य दिशाओं में नीची भूमि सबके लिए हानिकारक होती है। अब इस बात को विस्तार से समझते है –

नियम 1 . पूर्व में ऊँची भूमि पुत्र और धन का नाश करने वाली होती है , अग्नेय में ऊँची भूमि धन देने वाली होती है , दक्षिण में ऊँची भूमि सब कामनाओं को पूर्ण करने वाली तथा आरोग्यता प्रदान करने वाली होती है।नैऋत्य में ऊँची भूमि धनदायक है , पश्चिम में ऊँची भूमि पुत्र प्रद तथा धन धान्य की बृद्धि करने वाली होती है ,वायव्य में ऊँची भूमि धनदायक है ,उत्तर में ऊँची भूमि पुत्र और धन का नाश करने वाली होती है , ईशान में ऊँची भूमि महा क्लेश कारक है।

नियम 2 . पूर्व में नीची भूमि पुत्र दायक तथा धन की वृद्धि करने वाली होती है , आग्नेय में नीची भूमि धन का नाश करने वाली , मृत्यु तथा शोक देनेवाली और अग्निभय करने वाली होती है।

दक्षिण में नीची भूमि मृत्यु दायक ,रोगदायक , पुत्र- पौत्रविनाशक , क्षयकारक और अनेक दोष करने वाली होती है।

नैऋत्य में नीची भूमि धन की हानि करने वाली , महान भय दायक , रोग दायक और चोर भय करने वाली होती है।

पश्चिम में नीची भूमि धन नाशक , धान्य नाशक ,कृति नाशक ,शोकदायक पुत्र क्षय कारक तथा कलह कारक होती है। वायव्य में नीची भूमि परदेश वास कराने वाली ,उद्वेग कारक , मृत्यु दायक कलह कारक ,रोगदायक तथा धान्य नाशक है। उत्तर में नीची भूमि धन –धान्यप्रद और वंश वृद्धि करने वाली अर्थात् पुत्रदायक है।

ईशान में नीची भूमि विद्या देने वाली ,धनदायक , रत्न संचय करने वाली और सुखदायक होती है। मध्य में नीची भूमि रोग प्रद तथा सर्वनाश करने वाली होती है।

नियम 3 . पूर्व आग्नेय के मध्य ऊँची और पश्चिम , वायव्य के मध्य में नीची भूमि पितामह वास्तु कहलाती हैं।

यह सुख देने वाली हैं। दक्षिण व आग्नेय के मध्य ऊँची और उत्तर और वायव्य के मध्य नीची भूमि सुपथ वास्तु कहलाती हैं यह सब कार्यो में शुभ हैं । उत्तर व ईशान के मध्य नीची और नैऋत्य व दक्षिण के मध्य ऊँची भूमि ' दीर्घायु वास्तु ' कहलाती हैं। यह कुल की वृद्धि करने वाली हैं। पूर्व व ईशान में नीची और पश्चिम व नैऋत्य में ऊँची भूमि 'पुण्यक वास्तु ' कहलाती हैं। यह द्विजो के लिए शुभ है।

पूर्व व आग्नेय के मध्य नीची और वायव्य व पश्चिम के मध्य ऊँची भूमि 'अपथ वास्तु' कहलाती हैं। यह वैर तथा कलह करने वाली है।

दक्षिण व आग्नेय के मध्य नीची और उत्तर व वायव्य के मध्य ऊँची भूमि 'रोगकर वास्तु' कहलाती हैं। यह रोग पैदा करने वाली हैं।

दक्षिण व नैऋत्य के मध्य नीची और उत्तर व ईशान के मध्य ऊँची भूमि 'अर्गल वास्तु ' कहलाती हैं। यह पापों का नाश करने वाली हैं

पूर्व व ईशान के मध्य ऊँची और पश्चिम व नैऋत्य के मध्य नीची भूमि 'श्मशान वास्तु' कहलाती हैं। यह कुल का नाश करने वाली हैं।

आग्नेय में नीची और नैऋत्य , ईशान तथा वायव्य में ऊँची भूमि 'शोक वास्तु' कहलाती हैं। यह मृत्यु कारक हैं।

ईशान, आग्नेय व पश्चिम में ऊँची और नैऋत्य में नीची भूमि 'श्वमुख वास्तु' कहलाती हैं। यह दरिद्र करने वाली हैं।

नैऋत्य,आग्नेय व ईशान में ऊँची तथा पूर्व व वायव्य में नीची भूमि 'ब्रह्मघ्न वास्तु' कहलाती हैं । यह निवास करने योग्य नही हैं।

आग्नेय में ऊँची और नैऋत्य,ईशान तथा वायव्य में नीची भूमि 'स्थावर वास्तु' कहलाती हैं। यह शुभ है।

नैऋत्य में ऊँची और आग्नेय, वायव्य व ईशान में नीची भूमि 'स्थण्डिल वास्तु' कहलाती हैं। यह शुभ हैं।

ईशान में ऊँची और वायव्य,आग्नेय व नैऋत्य में नीची भूमि 'शाण्डुल वास्तु' कहलाती हैं। यह अशुभ हैं।

नियम 4 . दक्षिण , पश्चिम, नैऋत्य और वायव्य की ओर ऊँची भूमि 'गजपृष्ठ भूमि' कहलाती हैं। यह धन,आयु और वंश की वृद्धि करने वाली हैं।

मध्य में ऊँची तथा चारों ओर नीची भूमि 'कूर्मपृष्ठ भूमि' कहलाती हैं। यह उत्साह, धन –धान्य तथा सुख देने वाली हैं।

पूर्व, आग्नेय तथा ईशान में ऊँची और पश्चिम में नीची भूमि 'दैत्यपृष्ठ भूमि' कहलाती हैं, यह धन , पुत्र, पशु आदि की हानि करने वाली तथा प्रेत-उपद्रव करने वाली हैं।

पूर्व –पश्चिम की ओर लम्बी तथा उत्तर –दक्षिण में ऊँची भूमि नाग पृष्ठ भूमि कहलाती है। यह उच्चाटन , मृत्युभय ,स्त्री पुत्र आदि की हानि , शत्रु बृद्धि , मानहानि तथा धन हानि प्रदान करने वाली होती है।

इस प्रकार निवास योग्य भूमि इत्यादि का विचार करके गृह निर्माण इत्यादि का कार्य आरम्भ करवाना चाहिए।

1.2.2 वास्तुपुरुष की उत्पत्ति

भगवान शंकर ने जिस समय अन्धकासुर का वध किया उस समय उनके ललाट से पृथिवी पर पसीने की बूंदें गिरी। उसने एक विकराल मुखवाला प्राणी उत्पन्न हुआ। उस प्राणी ने पृथ्वी पर गिरे हुए अन्धकों के रक्त का पान कर लिया। फिर भी जब वह तृप्त नहीं हुआ , तब वह भगवान शंकर के सम्मुख घोर तपस्या करने लगा ।उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शंकर ने उससे कहा कि तुम्हारी जो कामना हो , वह वर मांग लो। उसने वर माँगा कि मैं तीनों लोकों को ग्रसने में समर्थ होना चाहता हूँ। वर प्राप्त करने के बाद वह अपने विशाल शरीर से तीनों लोकों को अवरुद्ध करता हुआ पृथ्वी पर आ गिरा। तब भयभीत देवताओं ने उसको अधोमुख करके वहीं स्तम्भित कर दिया। जिस देवताओं ने उसको जहाँ दबा रखा था , वह देवता उसके उसी अंग पर निवास करने लगे। सभी देवतओं के निवास करने के कारण वह "वास्तु " नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार उस दबे हुए प्राणी ने देवतओं से निवेदन किया कि हे देवगण आप लोग मुझ पर प्रसन्न हो , आप लोगों के द्वारा मैं दबकर निश्छल हो गया हूँ तथा इस तरह दब कर मैं कबतक नीचे मुख कर के रहूँगा इस प्रकार उस वास्तु पुरुष के निवेदन से देवगण प्रसन्न हुए तथा ब्रम्हा आदि देवतओं ने कहा कि आज से वास्तु शांति के लिए जो भी यज्ञ होगा वह तुम्हारा आहार होगा इस प्रकार घर में वास्तु पूजन किया जाता है जिससे की वास्तु देव प्रसन्न होते हैं।

वास्तुशास्त्र के उपदेशक – 1- भृगु , 2 –अत्रि , 3 –वशिष्ठ , 4 – विश्वकर्मा ,5 –मय ,6 –नारद, 7 –नग्नजित , 8 – भगवान शंकर ,9 – इन्द्र ,10 –ब्रह्मदेव , 11 – कुमार , 12 – नन्दीश्वर , 13 –शौनक,14 –गर्ग ,15 – भगवान वासुदेव 16 – अनिरुद्ध . 17 – शुक्र , 18 – बृहस्पति ये अठारह वास्तुशास्त्र के उपदेशक माने गये हैं। यथा –

भृगुरत्रिर्वशिष्ठश्च विश्वकर्मा मयस्तथा।
नारदो नग्नजीच्येव विशालाक्ष: पुरन्दर:।
ब्रह्मा कुमारो नन्दीश: शौनको गर्ग एव च।
वसुदेवोऽनिरुधश्च तथा शुक्र बृहस्पति ।
अष्टादशैते विख्याता वास्तुशास्त्रोपदेशका॥ (मत्स्य पुराण 252। 2 – 4)

जब मनुष्य अपने निवास के लिए ईंट – पत्थर आदि से गृह का निर्माण करता है , तब उस गृह में वास्तुशास्त्र के नियम लागू हो जाते हैं ।वास्तुशास्त्र के नियम ईंट- पत्थर आदि दीवार के अन्दर ही लागू होते हैं। तारबंदी आदि के भीतर , जिसमें से वायु आर –पार होती हों , वास्तुशास्त्र के नियम उसमें लागु नहीं होते हैं।

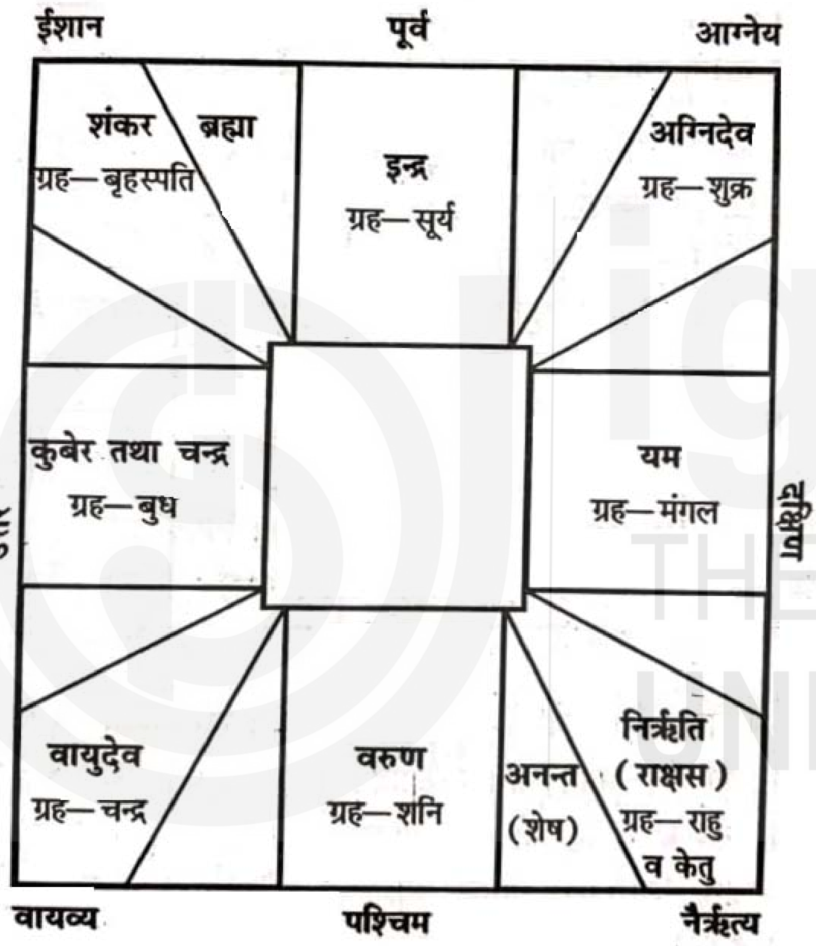
वास्तुशास्त्र में दिशाओं का बहुत महत्व है। सूर्य के उत्तरायण या दक्षिणायन में जाने पर उत्तर और दक्षिण तो वही रहते है , पूर्व और पश्चिम में अन्तर पड़ जाता है ।इस लिए ठीक दिशा का

ज्ञान करने के लिए दिग्दर्शक यन्त्र (कम्पास) की आवश्कता लेनी चाहिए इस यन्त्र में 360 डिग्री रहती है। अत : दिशा का सही ज्ञान करने के लिए डिग्री को देखना आवश्यक है।

दिशाओं की स्थिति इस प्रकार है

ईशान ne	पूर्व east	आग्नेय se
उत्तर north	केन्द्र centre	दक्षिण south
वायव्य nw	पश्चिम west	नैऋत्य sw

॥ दिशाओं के देवता ॥



अमरकोष के अनुसार – "गृहरचनावच्छिन्न भूमे " अर्थात् गृह रचना के योग्य अविछिन्न भूमि को ही वास्तु कहा जाता हैं। वास्तु वह स्थान कहलाता है , जिसपर कोई इमारत खड़ी हो , अथवा घर बनाने योग्य भूमि को वास्तु कहते है।घर के लिए ऋग्वेद काल से ही वास्तु शब्द का प्रयोग किया गया है। वास्तुशास्त्र- स्थापत्य-शास्त्र , भवन निर्माण कला का प्रतिपादक समझा जाता है। दुनिया की अन्य सभ्यताओं के माध्यम से ये पता चलता है कि भवन निर्माण या नगर रचना एक प्रकार का सांसारिक कृत्य है , वहीं भरतीय संस्कृति , भवन निर्माण को एक धर्मिक कृत्य मानती है।

वास्तुशास्त्र और शिल्प विद्या पहले से ही चला आ रहा है फिर भी ऋग्वेद काल से इसका प्रचलन अधिकाधिक रूप में प्राप्त होता है , चूँकि हजारों वर्ष पहले भारत में खगोल एवं ज्योतिष शास्त्र की परम्परा चली आ रही है , आदि काल से ही ऋषि –मुनियों ने इस विषय पर विशेष चिन्तन करके ज्योतिष शास्त्र को विभिन्न भागों में विभाजित किया है जिसमें वास्तुशास्त्र का भी स्थान है। भवन निर्माण के संदर्भ में ऋग्वेद में वर्णित मण्डप , वेदी, हवन कुण्ड इत्यादि विषयों के बारे में चर्चा प्राप्त होती है जिससे स्पष्ट होता है कि ऋग्वेद काल में भी वास्तुशास्त्र अपना स्थान अवश्य प्राप्त कर चुका था। ईशापूर्व एक सौ पचास ईस्वी के लगभग हडप्पा एवं मोहन जोदड़ो के नगरों की खोज से नगरों के जो अवशेष मिले उनसे भी पता चलता है कि उस समय भी उत्कृष्ट भवन निर्माण की प्रक्रिया थी , ठीक वहीं पर कनिष्क कालीन बौद्धस्तुप भी पाया गया। वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण में अयोध्या के बारे में प्राप्त जानकारी से हम सभी को वास्तुशास्त्र के उत्पत्ति के बारे में निर्देश प्राप्त होता है। ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार वास्तुशास्त्र का संकेत मिलता है "शिल्प" शब्द की प्राप्ति एवं उसका प्रयोग प्रस्तर कला , मूर्ति कला , तथा संगीत कला में किया गया है। वास्तुशास्त्र के प्रारम्भिक स्वरूप का विकास सूत्र कअल से ही प्रारम्भ होती है ,इस काल में भारतीय वास्तुशास्त्र का स्वरूप प्राय: स्थिर हो चुका था। गृह्य सूत्रों को देखने से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि वास्तु –कर्म , वास्तु मंगल , वास्तु होम , वास्तु परीक्षा , भूमि चयन (रूप , रस ,गन्ध , स्पर्स भेद) से द्वार एवं स्तम्भ –नियम ,वृक्षारोपण , पद-विन्यास वास्तुशास्त्र तथा ज्योतिष , वस्तुफल इत्यादि वास्तु विद्या के सिद्धान्त , अश्वलायन , गोभिल , शखायन ,पारस्कर तथा हिरण्याक्ष के गृह्य सूत्रों में पद –पद पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। चूँकि पूर्व कालीन वास्तुशास्त्र को दो कालों में विभाजित कर सकते है , पहली से छठी शताब्दी और सातवीं से दसवीं शताब्दी , प्रथम काल में प्राप्त वास्तु ग्रंथो में बृहत्संहिता , मत्स्य पुराण और विस्वकर्म –प्रकाश आदि ग्रन्थों में वास्तुशास्त्र का वर्णन पाप्त होता है , इसमें भी विशेष रूप से विश्वकर्मा –प्रकाश ही एक मात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसमें केवल वास्तुशास्त्र वर्णित है। तथा बृहत्संहिता ज्योतिष का ग्रन्थ है , जिसमें ५३ अध्याय में वास्तु विषय से सम्बन्धित , वास्तु चयन , भूमि परीक्षा ,वृक्षा रोपण , पद विन्यास आदि पर विवेचन मिलता है अत: उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह कहना अतिष्योक्ति नहीं होगी की वास्तुशास्त्र की उत्पत्ति प्राचीन कल में ही हो गयी थी। (वास्तु विद्या पृष्ठ संख्या २५)

1.2.3 वास्तुपुरुष का स्वरूप

वास्तु पुरुष ईशान में शिर किये हुए अधोमुख होकर स्थित हैं तथा इनके शिर में (शिखी)का निवास है। बायें नेत्र में (दिति) तथा दाहिने नेत्र में (पर्जन्य) है , मुख में (आप) , बायें कान में (अदिति) , तथा दाहिने नेत्र में (पर्यन्य) , तथा मुख में (आप) हैं। बायीं कान में (अदिति) , तथा दाहिने कान में जयन्त हैं। बायीं कन्धा में (भुजंग) तथा दाहिने कन्धा में (इन्द्र) है। बायीं भुजा में (सोम,भल्लाट ,मुख्य ,नाग ,और रोग) स्थित है। दायीं भुजा में (सूर्य , सत्य ,भृश, अन्तरिक्ष और अनिल) स्थित हैं। बायीं मणिबन्ध में (पापयक्ष्मा) तथा दायीं मणिबन्ध में (पूषा) हैं। बायाँ हाथ (रूद्र,और राजयक्ष्मा) तथा दाहिनी हाथ में (सावित्री और सविता) हैं। छाती में (आपवत्स)। बायीं स्तन पर (पृथ्वीधर) तथा दायीं स्तन पर (अर्यमा) स्थित हैं। हृदय में (ब्रह्म) एवं पेट में (मित्र और विवश्वान) स्थित हैं। बायीं बगल में (शोष एवं असुर) दायीं बगल में (वितथ और बृहत्क्षत) हैं। बायाँ घुटने से उपर के भाग में (वरुण) तथा दायें में (उरु और यम) स्थित हैं। बायाँ घुटना में (पुष्पदन्त) तथा दायाँ घुटना में (गन्धर्व) हैं।बायीं जन्घा घुटने से नीचे का भाग में (सुग्रीव) तथा दायीं जन्घा में (भृंगराज) स्थित हैं। एवं लिंग में (इन्द्र तथा

जय) स्थित हैं , बायाँ नितम्ब में (द्वौवारिक) तथा दायाँ नितम्ब पर (मृग) हैं एवं पैर में (पिता) स्थित हैं।

1) सिर , मुख , हृदय , दोनों स्तन और लिंग – ये स्थान वास्तु के मर्म स्थान हैं।

2) रोग से अनिल तक , पिता से शिखी तक , विपथ से शोष तक ,मुख्य से भृश तक , जयन्त से भृंगराज तक और अदिति से सुग्रीव तक विस्तृत सूत्रों का जो नव स्थानों में जहाँ स्पर्श होता है वे ही वास्तु के मर्म स्थान हैं।ये नव अन्तिम मर्म स्थान ब्रह्म स्थान के अन्तर्गत हीआते हैं।

3) वास्तु पुरुष के जिस मर्म स्थान (अंग) में कोई शल्य हो अथवा वहां कील ,खम्भा आदि लगाया जाय तो गृह स्वामी के उसी अंग में पीड़ा या रोग उत्पन्न हो जाता है।

4) यदि मर्म स्तन में लकड़ी का शल्य हो तो धन की हानि होगी , हड्डी का शल्य हों तो रोग का भय होगा , लोहे का शल्य हो तो शस्त्र का भय होगा , कपाल या केश हो तो मृत्यु होगी ,कोयला हो तो चोरभय होगा , भस्म हो तो अग्निभय होगा।

5) यदि वास्तु की दायीं भुजा भवन में विस्तृत रूप से न हों तो धन का नाश एवं स्त्री कृत दोष होता है बायीं भुजा भी न हों तो धन –धान्य का नाश होता है। सिर से रहित हों तो धन ,आरोग्यता आदि सब गुणों का नाश होता है। पैर से रहित हो तो स्त्री दोष ,पुत्र नाश एवं दासत्व की स्थिति प्राप्त होती है।

6) घर के मध्य में स्थित ब्रह्म स्थान (ब्रह्म के नव पद) की यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिए। उस जगह कोई निर्माण नहीं करना चाहिए , वहां जुठे वर्तन ,अपवित्र पदार्थ इत्यादि नहीं रखना चाहिए। यदि ब्रह्म स्थान में दीवार , खम्भा , दरवाजा आदि बनाया जाय तो गृह स्वामी के परिवार में तमाम तरह की समस्याएं आती रहती है।

ब्रह्म स्थान निकलने के लिए गृहभूमि की लम्बाई और चौड़ाई के तीन-तीनबराबर-बराबर भाग करने पर बीच वाला भाग ब्रह्म स्थान होगा।

1.3 वास्तु परिचय

वास्तुशास्त्र का उपवेद –स्थापत्य वेद है वास्तुशास्त्र की दो परम्परा रही है , जिसमें उत्तरापथिय के प्रवर्तक विश्वकर्मा तथा दक्षिणापथिय के मय दानव थे। गृह निर्माण सम्बन्धित सभी बातों को जानना सर्वसाधारण को आवश्यक है चूँकि किस स्थान पर घर बनाना चाहिए अर्थात् भूमि शोधन सम्बन्धित सभी बातें, भवन के किस स्थान पर कितने दुरी पर जलाशय इत्यादि रहना चाहिए , गज पृष्ट भूमि , कुर्म पृष्ठ आदि का लक्षण,जो कि पूर्व में बताया गया है पिण्ड निर्माण , ऋषियों के मत से दकार्गल , बृक्ष इत्यादि का रोपण , मंडलेश सिद्धि , पिण्ड इत्यादि का साधन, शिलान्यास इत्यादि का मुहूर्त ,चरणी विचार , देवमन्दिर निर्माण इत्यादि विषय वास्तु परिचय के अन्तर्गत ही आता है।

यह विश्व विदित है कि प्राणी मात्र सुख तथा सुरक्षा की दृष्टि से अपने रहने योग्य भवन का निर्माण करता है उन सबमें बुद्धिमान प्राणी मानव ही है जिसका जीवन वेद शस्त्रों से निर्धारित है। ज्योतिष शास्त्र का अन्यतम अंग वास्तुशास्त्र है जिसका ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनेक ग्रन्थों में है।

"गृह्यतीति गृहम " जो दूरस्थ प्राणी को अपनी ओर आकृष्ट करे , उसे ही गृह कहते हैं। इसमें भी तृण, मिट्टी ,ईंट, एवं पत्थर द्वारा निर्मित गृह उत्तरोतर क्रम से श्रेष्ठ माने गये है। इस विद्या का संकलन पूर्व काल के हमारे ज्योतिर्विद , ऋषि-महर्षियों ने पल्लवित एवं पुष्पित किया , अत: इनके कुछ –कुछ निर्देश भिन्न –भिन्न ग्रन्थों में उपलब्ध है , जिनकी मान्यता धर्मप्राण भारत वर्ष में चिरकाल से चली आ रही है। आज हम भारतीय पाश्चात्य भी विज्ञान के अलोक से इतने अधिक प्रभावित हो गये है कि हमको अपने शास्त्र पर तथा अपने पूर्वजों के उपदेश अच्छे नही लग रहें हैं। फलत: हम उनकी उपेक्षा करते जा रहे हैं , फिर भी कतिपय धर्म प्राण लोग आज भी है और रहेंगे , जिनकी आस्था अपने धर्म- ग्रन्थों , विज्ञान तथा पूर्वजों के उपदेशों के प्रति अडिग हैं। उन्हीं के सबल कन्धो पर धर्मपुर को धारण किए हुए हैं ,इस प्रकार की प्राचीन संस्कृति के संरक्षक भी वे ही हैं ।जिनके कारण भारत वसुन्धरा आज भी गौरवान्वित है तथा वास्तु के अवधारणा को भलीभांति जाना जा रहा है। दूसरे शब्दों हम यह कह सकते हैं कि –

वास्तव में दूसरे के घर में निवास करना स्वतन्त्रता एवं स्वाभिमान की दृष्टि से सर्वथा त्याज्य है , चूँकि दूसरे के घर में बिना किराया दिए रहकर जो भी पूजा –पाठ किया जाता है वह सब निष्फल हों जाता है क्यों कि इन सभी क्रियओं का फल भवन के स्वामी को प्राप्त होता है। इस लिए अपने लिए वास्तु के अनुसार घर अवश्य ही बनवाना चाहिए जैसा कि कहा भी गया है -

परगेहकृतास्सर्वा: श्रौतस्मार्तक्रिया: शुभा:।
निष्फला: स्युर्यतस्तासां भुमिश: फलमश्नुते ॥(बृहद्वास्तुमाला श्लोक संख्या 7)

1.3.1 वास्तु भेद

वास्तु के क्षेत्र वर्तमान समय में बहुत ही विस्तृत है फिर भी इसका विभाजन मुख्यतः चार भागों में किया जा सकता है।

1. भूमि इसका अभिप्राय हमको यह समझना चाहिए कि भूमि कैसी है रहने योग्य है या नहीं तथा उपरोक्त विधि के अनुसार परीक्षण करके ही उस पर भवन निर्माण इत्यादि का कार्य करना चाहिए।

2. प्रासाद इसके दो भेद है सर्वप्रथम (देव मन्दिर प्रासाद) जिसमें कि देवता लोग निवास करते है या मन्दिर भी देवताओं के नाम के अनुसार विभिन्न प्रकार के होते है।

   द्वितीय भेद (राजप्रासाद) जिसमें प्राचीन कल में राजा लोग रहते थे तथा अपने प्रजा के लिए भी भवन निर्माण करवाते थे अथवा वर्तमान समय में भी मानव अपना भवन बनाकर रहता है ये सभी वास्तु के भेद या प्रकार के अन्तर्गत ही समझना चाहिए। वैसे तो बृहत्संहिता में 20 प्रकार के प्रसादों का उल्लेख मिलता है ।परन्तु अलग –अलग पुराणों के अनुसार अलग –अलग प्रसादों की कोटि बताया गया है।

3. शयन यहाँ पर आप को शयन का आशय भूमि शयन से समझना चाहिए जिस दिन आप गृहारम्भ कर रहे है उस दिन भूमिशयन नहीं होना चाहिए कलश चक्र भी होना चाहिए।

   द्वितीय आशय मकान में बने हुए शयन कक्ष अथवा वेडरूम से है यह स्थान सुख और शान्ति भरा होना आवश्यक है , कई बार देखा गया है कि शयन कक्ष में अधिकाधिक

सुबिधा होने के कारण भी चैन की नींद नहीं आती है कोई टेन्सन नहीं है फिर भी चैन की नींद नहीं आती है इसका मात्र एक ही कारण है शयन कक्ष सही स्थान पर न होना।

शयन कक्ष मकान के दक्षिण – पश्चिम (नैऋत्य) या उत्तर पश्चिम (वायव्य) की ओर होना चाहिए।

इस प्रकार विचार करके शयन कक्ष का निर्माण करवाना चाहिए

4. यान (वाहन) इस वास्तु भेद के अन्तर्गत शकट यान , उष्ट्र यान , अश्व यान , गज यान, रथ यान , वायुयान इत्यादि भेद प्रमुख है।

वास्तु भेद को इस प्रकार समझना चाहिए जैसे – गृह , विद्यालय , उद्योग कारखाना ,पशुशाला, धान्य गृह , देवालय , बाग , यज्ञशाला , प्रशासन स्थान , कोषागार , यात्रा स्थान , राजभवन , सैन्यबल , मनोरंजन ,बहुद्देशीय , एयर पोर्ट आदि।

1.3.2 गृह प्रयोजन

मुख्य रूप से धर्म , अर्थ , काम को देने वाला साथ ही स्त्री –पुत्र आदि के भोग एवं सुख के लिए तथा प्राणियों के सुख का स्थान भवन ही है क्योंकि सर्दी – वायु – गर्मी आदि कष्टों से रक्षा करता है। विधि के अनुसार भवन निर्माण करने वाले को वापी (बावड़ी) , देवालय आदि के निर्माण का पुण्य भी प्राप्त होता है अत : विश्वकर्मा इत्यादि देव शिल्पकारों ने भी सर्व प्रथम भवन निर्माण का निर्देश किया है

"बृहद्वास्तुमाला" के अनुसार " पर्णशाला बनाने से कोटि गुण फल प्राप्त होता है , मिट्टी का घर बनाने से दस करोड़ गुना , ईंट का घर बनाने से सौ करोड़ गुना , और पत्थरों द्वारा घर बनाने से अनन्त गुण पुण्य फल की प्राप्ति होती है। बावड़ी, कुवा , प्रासाद (देव अथवा राजमहल) और जो घर का जीर्णोद्वार करते हैं , उनको आठगुना फल प्राप्त होता है। चूँकि वास्तव में दूसरे के घर में निवास करना स्वतन्त्रता एवं स्वाभिमान की दृष्टि से सर्वथा त्याज्य है , भारत में भवन निर्माण एक धार्मिक कृत्य है जिससे पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति होती है।

धर्म - मानव को धर्म का लाभ भी होना चाहिए भवन में निवास करने वाले प्राणी को अध्यात्मिक व आत्मिक सुख मिलना चाहिए क्योंकि भवन आधिभौतिक , आधिदैविक , और आध्यात्मिक त्रिविध तापों से मुक्ति दिलाता है , गृह में निवास करने वाले प्राणी को देखते ही आदमी का सिर श्रद्धा और विश्वास से झुक जाता है। अक्सर आप सुने होंगे कि प्राचीन समय में ऋषि- मुनियों के आश्रम में आते ही हिंसक प्राणी अपना नैसर्गिक वैर भाव भूल जाते थे। बाघ एवम बकरी एक साथ , तथा सर्प और नेवला एक साथ बैठे होते थे , यह वास्तु का धार्मिक प्रयोजन हुआ।

अर्थ – गृह प्रवेश के बाद ही अच्छे वास्तु में धन की बृद्धि होने लगती है चूँकि भवन बनाने के बाद ब्यक्ति कर्ज में दब जाय तो समझना चाहिए कि मकान का वास्तु खराब है।इसके विपरीत भवन स्वामी का पद प्रतिष्ठा में बृद्धि हो तभी भवन निर्माण की सार्थकता है।

काम – स्वय के भवन में पत्नी सुख – शयन सुख प्रयाप्त मात्रा में मिलता है , जिसके फल स्वरूप गृह स्वामी को सुख एश्वर्य एवं सांसारिक सुखों में बृद्धि होती है यह शुभ वास्तु का उद्देश्य है परन्तु अशुभ स्थिति में परिवार में कलह , कोर्ट केस इत्यादि से ब्यक्ति मानसिक तनाव

में हों जाय तो भी समझना चाहिए कि गृह में वास्तु दोष है। इसके अलावा गृह स्वामी की पत्नी एवं सन्तति तथा परिवार के लोग उसके आज्ञा में रहें एवं आदर भी करे तो यही भवन की सार्थकता होगी।

मोक्ष – उसे मोक्ष की प्राप्ति होनी चाहिए अच्छे गृहस्थ की सद्ब्योहर के कारण सद्गति होती है वास्तुशास्त्र इन चरों सिद्धियों को प्राप्त करने में मनुष्य की सहायता करता है। इसलिए इसकी उपयोगिता अपेक्षित है।

चूँकि धार्मिक मान्यताओं के अनुसार भूखण्ड खरीदने से पूर्व वास्तु नियमों के अनुसार भूमि की परीक्षा एवं पूजन जरूर करना चाहिए। भवन बनाने से पूर्व शुभ मुहूर्त में भूमि पूजन नीव पूजन इत्यादि करना चाहिए तथा भवन बन जाने के बाद विधिवत गृह प्रवेस करना चाहिए जिससे की भवन में रहने वाले का सर्वांगीण विकास होता है (विश्वकर्मा प्रकाश के अ . 1 के 17 वें श्लोक के अनुसार) जो लोक नास्तिक प्रवृति के है तथा प्रमाद वस वास्तु शांति नहीं करते उन लोगों का एश्वर्य नष्ट हों जाता है तथा वे अकाल मृत्यु को प्राप्त होते है। तथा उनके प्रत्येक कार्य में रुकावटें आती हैं ,एवं ए लोग वास्तु – पुरुष के प्रकोप से दुर्भाग्य के चक्कर में फंस जाते हैं। तथा पुनः उपाय करने पर उनको लाभ होता है।

1.3.3 परिसरीय वातावरण

परम्परागत विचार के अनुसार भवन के परिसरीय वातावरण की शुद्धि के लिए प्राकृतिक सानिध्य होना आवश्यक है , जलाशय इत्यादि का होना भी आवश्यक है।चूँकि आप इस बात को समझ चुके हैं कि अच्छे भवन में पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति होती है।सभी आश्रमों के उत्पत्ति का कारण भी गृहस्थ आश्रम ही है। परम्परा की मानें तो वेद काल , सनातन , सृष्टि –प्रकृति जन्म इत्यादि का भी पूर्णतया प्रभाव वातावरण की शुध्दि के लिए ही बनाया गया है। संस्कृति एवं संस्कार के प्रभाव से भी वातावरण को शुद्ध किया जा सकता है। वास्तु शास्त्र के अनुसार घर में पेड़ –पौधे लगाने से सकारात्मक उर्जा का संचार होता है ,वही बिभिन्न पेड़ –पौधों का एक अलग ही महत्व माना जाता है , वास्तु के अनुसार बृक्ष लगाया जाय तो घर में वास्तु दोष दूर होता है , गुणों से भरपूर निम का वृक्ष दूषित वायुमण्डल को शुद्ध कर स्वच्छ पर्यावरण प्रदान करता है। बीमारियों को दूर करने के लिए नीम के पेड़ को वायव्य कोण में लगाना शुभ प्रद होता है। वातावरण शुध्दि के उपाय वेद पुराणों की मानें तो हवन , जप, तप से किया जा सकता है। बल्कि अच्छी सेहत के लिए भी जरूरी है हवन के धुंए से प्राण में संजीवनी शक्ति का संचार होता है। हवन के माध्यम से विमारियों से छुटकारा पाने के सन्दर्भ में ऋग्वेद इत्यादि में पचुर मात्रा में वर्णन किया गया है।

आधुनिक मतों के अनुसार – स्कूल , हास्पिटल ,होटल , स्टेशन ,एयरपोर्ट ,बाजार ,महामार्ग इत्यादि का भी परिसरीय वातावरण शुद्ध हों तो मानव समाज को अधिकाधिक लाभ प्राप्त होता है। स्कूल की बात करें तो विद्यालयीय जीवन का सम्बन्ध विद्यालय के उन सारे वातावरण से जुड़ा हुआ है जिसके अन्तर्गत केवल सुरक्षित एवं स्वच्छ सुबिधाएं ही नहीं अपितु अध्ययन , क्रीड़ा , छात्र अध्यापक सम्बन्ध भी इसमें जुड़ा हुआ है। स्कूली बच्चों के विकाश के लिए और शिक्षा के लिए विद्यालय के वातावरण का एक आवश्यक उपचार आवश्यक है , विद्यालयी वातावरण से तात्पर्य है विद्यालय के कक्षा , कमरे , भवन एवं आस –पड़ोस क्रीड़ा

स्थल , बैठने का प्रबन्ध , वायु एवं प्रकाश ,पेयजल , कार्यक्रम एवं समय सरणी तथा कार्य करने की अनुकूल परिस्थितियों से है।

1.3.4 परम्परागत तथा आधुनिक

वास्तु दो प्रकार होते है , गृह वास्तु और परिसर वास्तु , परिसर के निम्नवत स्थान भारी निर्माण, जल प्रवाह आदि का प्रभाव प्रहरी पर होता है इस लिए वास्तु में प्रहरी की प्रधानता होती है। अत: प्राचीन ऋषियों ने प्रहरी के निर्माण में सावधानी बरतने को कहा है। अब यह पर प्रश्न यह उठता है कि घर का निर्माण पहले करें की प्रहरी का तो वास्तु के अनुसार पता चलता है कि प्रहरी का निर्माण ही पहले करना चाहिए।

हमेशा भोजनालय आग्नेय कोण में होना चाहिए किसी भी स्थिति में इसको ईशान कोण में नहीं बनवाना चाहिए ,यदि आग्नेय कोण में न बन पाए तो वायव्य कोण में बना सकते हैं , वायव्य कोण के रसोई घर में पूरब की ओर मुख करके भोजन बनाना शुभ प्रद माना गया है। यदि वायव्य हिस्से के आग्नेय में भोजन बनाने की सुविधा न हो तो पश्चिम के तरफ मुख करके भोजन बनाने में कोई दोष नहीं है। मूल रूप से भोजनशाला वायव्य कोण में हो तो खर्च अधिक होता है ,नैऋत्य कोण में हो तो स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्या होती है ईशान कोण में हो तो घर में निवास करने वाला तथा उस घर का नाश होता है।

शयनागार सामान्यतया घर के नैऋत्य में ही होना वास्तुशास्त्र के अनुसार अच्छा माना गया है इसमें गृहस्थ को ईशान द्वार से बाहर निकलना चाहिए ,फलत : गृहस्थ को उच्च स्थिति प्राप्त होगी , इस कमरे में धन रखने का अलमीरा दक्षिण – पश्चिम दीवारों को लगाकर , उतर एवं पूरब दिशाओं के सामने रखना है चाहिए रक्षण की दृष्टि से भी यह ब्यवस्था अच्छा होगा ब्यक्ति अपने शयनागार में अधिक समय ब्यतित करता है इस लिए शयनागार तो वास्तु के अनुरूप होना चाहिए। घर में नैऋत्य हिस्से में स्टोर रूम बनाकर उसके बगल में पश्चिम या दक्षिण की ओर शयनागार बनाना अच्छा होता है , लेकिन बहुत से लोग इसे पसन्द नही करते , तो भी नैऋत्य में स्टोर रूम बनाने वालो को ध्यान रखना स्टोर रूम की उचाई अन्य कमरों से थोड़ी ऊँची होनी चाहिए शयनागार में पलंग बिछाने के बाद पूरब एवं उतर में ज्यादा खाली जगह छोड़ना चाहिए गृहस्थ घर के नैऋत्य में सोता है तो ईशान अथवा आग्नेय हिस्से में बच्चों के सोने की व्यवस्था करनी चाहिए। कुछ वस्तुशास्त्रियों का मत है कि प्रथम सन्तान दक्षिण के कमरे में , द्वितीय सन्तान आग्नेय में , तृतीय सन्तान पश्चिम में चौथा सन्तान वायब्य कोण में सोये तो अच्छा होगा, सोते समय सिर दक्षिण की ओर करना श्रेष्ठ है। शयनागार दक्षिण , पश्चिम , उतर एवं नैऋत्य में बना सकते हैं। लेकिन पूरब, आग्नेय अथवा ईशान में बनाना उत्तम नहीं होता है।

पुराने समय में स्नान गृह मुख्य घर के बाहर पूर्व आग्नेय अथवा उत्तर वायब्य में बनाये जाते थे ,स्नान गृह ईशान कोण के बजाय कहीं भी वास्तु के नियमों का पालन करते हुए बनाया जा सकता है , लेकिन पानी गरम करने का चूल्हा अन्दर नहीं रखना चाहिए। लेकिन वाटर हीटर रख सकते हैं।

पूजा गृह प्राचीन या अर्वाचीन मत में ईशान कोण में ही बनाये जाते हैं। घरवालों के साथ-साथ पुरोहित को भी बैठने लायक बड़े कमरे पूजा गृह कर लिए बनाये जाते थे , लेकिन आज जगह की कमी के कारण पूजा गृह का दायरा कम हो गया है। ईशान में कुछ भी वजनी चीज नहीं

रखना चाहिए इसके अलावा इस स्थान पर कूड़ादान या गन्दगी नहीं होना चाहिए इस लिए नैऋत्य में पूजा गृह नहीं बनाना चाहिए पूर्वी हिस्से में पूजा गृह बनाने से आरोग्यता तथा सौभाग्य की प्राप्ति होती है , लेकिन भगवान की मूर्ति रखने के लिए कोई प्लेटफार्म नहीं बना सकते इन सभी परिस्थितियों को देखते हुए सर्वोत्तम स्थान ईशान कोण ही पूजन गृह के लिए सर्वोत्तम होगा।

शौचालय और स्नान गृह एक साथ नहीं बनाना चाहिए, यह पद्धति भारतीय परम्परा के अनुकूल नहीं है। अगर दोनों साथ में ही बनाना हो तो बीच में एक दीवार अवश्य खड़ा कर लें, शौचालय भवन के मध्य स्थान, ईशान कोण ,आग्नेय कोण या नैऋत्य की ओर नहीं बनाना चाहिए भवन के मध्य में टायलेट पूर्णत : वर्जित है। यह पूरी ब्यवस्था को छिन्न –भिन्न कर डालता है ,प्रगति अवरुद्ध हों जाती है तथा भवन में निवाश करने वाले लोग बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

शौचालय भवन के दक्षिण पश्चिम में रहने से गृहस्वामी के स्वास्थ्य एवं जीवन के लिए अच्छा नही होता है , ईशान क्षेत्र में बना शौचालय आर्थिक परेशनियाँ एवं मानसिक रूप से रोगी बनाकर रखता है। शौचालय भवन के उत्तरी वायव्य एवं पश्चिमी वावब्य के तरफ बनाना चाहिए ,दूसरी प्रार्थमिकता नैऋत्य एवं दक्षिण के मध्य का क्षेत्र है इस स्थान पर शौचालय बनाया जा सकता है। भवन में शौचालय की सीट पश्चिमी –वायव्य या दक्षिण में रखें यथा सम्भव सीट को उत्तर –दक्षिण शौचालय का प्रयोग करते समय चेहरा उत्तर या दक्षिण होना चाहिए , इसका प्रयोग पश्चिम की तरफ मुख करके भी किया जा सकता है।शौचालय में कमोड का नैऋत्य एवं दक्षिण होना भी उत्तम है कमोड पर बैठते समय चेहरा उत्तर या पूर्व की तरफ रखा जा सकता है। इस तरफ चेहरा कर शौचालय का प्रयोग करने से कब्ज , गैस ,और मस्से की बीमारी नहीं होती है , टायलेट सीट भूमि तल से एक या दो फिट ऊँची होनी चाहिए। क्योंकि शौचालय का भूमितल शेष भूमितल से नीचा रहने पर भवन में निवास करने वाले लोगों को रोगी बनाती है। साथ ही आर्थिक ,शारीरिक , एवं मानसिक स्थिति अच्छी नहीं रहती है टायलेट का दरवाजा पूर्व या उत्तर की ओर रखना चाहिए। साथ ही एक छोटी सी खिड़की पूर्व , पश्चिम या उत्तर में रखनी चाहिए , शौचालय में पानी की टंकी या नल पूर्व ,उत्तर या उत्तर पूर्व के कोने में होना चाहिए। इसे कभी भी दक्षिण पूर्व के कोने में होना चाहिए , इसे कभी भी दक्षिण पूर्व या दक्षिण पश्चिम में नहीं रखना चाहिए। शौचालय की छत एवं जमीन का ढाल एवं आउट लेट पूर्व एवं उत्तर की ओर रखें , दीवार का रंग अपनी पसन्द के अनुसार हल्का रखें। वर्तमान समय में पश्चिमी सभ्यता के साथ –साथ बाथ – टब तथा स्नान करने के लिए फव्वारा आदि संयुक्त रूप से लगे रहते हैं। घर में प्रवेश करते ही सामने शौचालय होने से सेहत खराब रहती है , विशेषतया पेट सम्बन्धित बीमारी होती है। इस स्थिति में शौचालय के मुख्य द्वार पर 4x4 का शीशा लगवाना चाहिए ईशान कोण में शौचालय होने से घर या व्यवसाय की आर्थिक हानि और लोगों में मानसिक असंतुलन , असहनीय बिमारी तथा झगड़े की सम्भावना रहती है , शौचालय की उत्तरी दीवार पर छत एकदम नीचे शीशे की एक फूट चौड़ी पट्टी लगाना लाभदायक रहेगा। शौचालय और स्नानागार संयुक्त हों और रसोई के साथ हों अर्थात् शौचालय या स्नान घर में जाने के लिए रसोई घर से गुजरना पड़ता हो तो इस दोष को दूर करने के लिए शौचालय की चौखट के फर्श पर दहलीज की तरफ 4 इंच चौड़ा पिला पेन्ट कर लें और शौचालय की तरफ वाली दीवार जो रसोई के साथ है , उस पर नकारात्मक उर्जा को रोकने हेतु तीन हरे पीरामिड लगावें। शौचालय के अन्दर sea salt , ceramic

bowl आदि को उत्तर –पूर्व या दक्षिण –पूर्व कोने में रखें यह नकारात्मक उर्जा को रोके रखता है।

1.3.5 विचारणीय बिन्दु

वास्तुशाश्त्र को जानने के लिए निम्नलिखित विचारणीय बिन्दु है आत्मा , जैसे वर्ण , नेत्र रूप रंग इत्यादि , आत्मा का सम्बन्ध हमारे शरीर से है , शरीर का सम्बन्ध उस भूभाग से है जहाँ हम गृह निर्माण करते हैं , गृह का सम्बन्ध उस नगर से है नगर का देश से है , देश का सम्बन्ध उस भूभाग से है अर्थात् पृथिवी से है पृथ्वी का सम्बन्ध उस खगोल सौर मण्डल परिवार से होने के कारण समस्त ज्योतिर्पिण्डों से है। अर्थात् उस ग्रहादि पिण्डों से नक्षत्रों से है यह जो क्रम है की शरीर के अन्दर स्थित आत्मादि से लेकर आकाशस्थ जो ग्रह नक्षत्र है इनके सम्बन्धों से जोड़ने का अर्थात् इनसे उर्जा प्राप्त करने का है यह कार्य वास्तुशास्त्र का है। यदि इन सम्बन्धों के विपरीत कोई कार्य करते हैं तो हमें वाधाएं प्राप्त होती है , यदि इनके अनुकूल रहते है तो हमें शुभ फल प्राप्त होता है तो क्या आज भू परिक्षण करने के विभिन्न प्रकार के यन्त्र उपलब्ध है परन्तु इन सब में महत्वपूर्ण यन्त्र हमारा शरीर है क्योंकि इसमें रूप , रस, गन्ध को जानने के लिए हमारे शरीर में जो यन्त्र है जैसे – आँख , घ्राण , जिह्वा इत्यादि से मिट्टी का स्वाद , जानकर बता सकते हैं परन्तु सर्व प्रथम भूमि का परिक्षण हमारा नेत्र करता इससे देखकर बताया जा सकता है कि यह भूमि कैसी है।जिह्वा से रसना इत्यादि के बारे में मृदा का स्वाद जाना जा सकता है की इस भूमि की मिट्टी कटु ,कसाय ,तिक्त कौन से स्वाद है। शरीर में तीसरा हमारा यन्त्र है वह है नासिका इससे गन्ध का पता लगाया जा सकता है कि इस मिट्टी में कौन सा गन्ध है ,पाचवां परिक्षण है स्पर्श उस जगह का स्पर्श करके अर्थात् वहां वास करके हम समझ सकते है कि यह स्थान कैसा है जैसे हम कही मन्दिर इत्यादि में जाते है तो वहां का वातावरण बिल्कुल शान्त प्रतीत होता सर्दी , एवं उष्णता का भी ज्ञान स्पर्श से ही होता है यह शरीर पञ्च तत्व से बना है अत : शरीर में सबका सम्बन्ध है , जैसे – पञ्च इन्द्रियों का सम्बन्ध भी व्यक्ति से है जो की रूप,रस ,गन्ध , स्पर्श को जानने में सहयोगी है तथा शरीर का सम्बन्ध पंचतत्व से है जिससे कि यह शरीर बना है अत : हम कह सकते है कि जो हमारे जीवन का आधार है वही वास्तु का भी आधार है।

1.4 सारांश

वास्तुशास्त्र ज्योतिषशास्त्र का एक अभिन्न अंग है , क्योंकि वास्तु में सर्व प्रथम शुभ मुहूर्त देख कर ही हर एक वास्तु का निर्माण प्रारम्भ होता है चूँकि यह कार्य (मुहूर्त) ज्योतिष शास्त्र के अनुसार ही होता है इस आधार पर हम कह सकते है कि तिथि , वार ,नक्षत्र ,योग , करण का विचार कर ही वास्तु का कार्य आरम्भ करना चाहिए। निवास वास्तु का दिशा आदि ,मुख्य द्वार किस दिशा की ओर होना चाहिए इन सभी विषयों का विचार भवन में ध्यान रखकर करना चाहिए। गृह निर्माण , उच्च प्रासाद , दुर्ग- गांव , नगर , मन्दिर –देवालय ,कूप ,तालाब, वापी , मूर्ति निर्माण स्थापत्य –कला विभिन्न प्रकार के मण्डप ,यज्ञ-शालाएं , सभागृह , शिविका , रथ, विभिन्न प्रकार के यान ,उद्यान , पर्यक , मंच इत्यादि का निर्माण करना , प्रतिष्ठा करना , उनका संशोधन करना अथवा जीर्णोद्वार करना वास्तुशास्त्र का विषय है। विषय वास्तु की दृष्टिकोण से वास्तु –विद्या का भूगोल एवं भूगर्भ विद्या तथा गणित से घनिष्ठ सम्बन्ध है। भूमि के गन्ध , वर्ण, रस (स्वाद) एवं स्पर्श से प्राचीन स्थापति भौगर्भिक परीक्षा से भवन निर्माण का

स्थान निश्चित करते हैं। इन सभी विषयों को आप इस पाठ के अध्ययन से पूर्णतया बतायेंगे साथ ही मैं आशा करता हूँ कि वास्तु की परिभाषा तथा परिचय के सम्बन्ध समाज को बताकर यश , ख्याति , तथा प्रसिद्धि प्राप्त करेंगे।

1.5 शब्दावली

शल्य	=	हड्डी
प्रहरी	=	चहर दीवार
परीसरीय	=	परिसर के
आर्थिक	=	धन से सम्बन्धित
शयनागार	=	सोने वाला प्रकोष्ठ
सानिध्य	=	निकट
राजप्रासाद	=	राजा का भवन
सन्तति	=	बाल – बच्चे
पर्णशाला	=	कुटी –घास पुस का बना हुआ
वसुन्धरा	=	पृथ्वी
निश्छल	=	छल से रहित
अवरुद्ध	=	वाधा
गजपृष्ठभूमि	=	दक्षिण ,पश्चिम , नैऋत्य ,और वायब्य की ओर ऊँची।
कूर्मपृष्टभूमि	=	मध्य में ऊँची चरों तरफ नीची।
स्थापत्य	=	स्थापित करना
शिविका	=	रथ
जीर्णोद्वार	=	नवीनी करण करना
पञ्चइन्द्रिय	=	आँख , कान , नाक , जीभ , त्वचा
पञ्चतत्व	=	पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु और शुन्य
चारपुरुषार्थ	=	धर्म , अर्थ ,काम , मोक्ष
दैत्यपृष्ठभूमि	=	पूर्व , अग्निकोण , तथा ईशान में ऊँची एवं पश्चिम में नीची।

1.6 उपयोगी पुस्तकें

1. बृहद्वास्तुमाला (सम्पादक –डॉ ब्रह्मानन्द त्रिपाठी), संस्करण वर्ष २०१६ ई. चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वास्तुसार संग्रह, लेखक –सम्पादक :- आचार्य श्री कमलाकान्त शुक्ल सम्पूर्णा नन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी, प्रकाशन वर्ष 2002, विक्रय विभाग वाराणसी।

3. शिल्पदीपक, सम्पादक :- डा. श्री कृष्न जुगनू (चौखम्भा संस्कृत सीरिज आफिस वाराणसी), प्रकाशन वर्ष 2004
4. भवन भास्कर, लेखक :- राजेन्द्र कुमार धवन, प्रकाशन वर्ष :- विक्रम संवत २०५७ श्री कृष्ण जन्माष्टमी, गीताप्रेस गोरखपुर
5. वास्तु विद्या, व्याख्याकार – के. महादेव, प्रकाशन वर्ष १९४०

1.7 बोध प्रश्न

1. वास्तुशास्त्र की परिभाषा लिखिए ।
2. वास्तुशास्त्र की उत्पति के बारे में बताइये।
3. गृह प्रयोजन की व्याख्या कीजिए।
4. वास्तु से सम्बन्धित परिसरीय वातावरण कैसा होना चाहिए ?
5. वास्तु के बारे में परम्परागत तथा आधुनिकों के मत प्रदर्शित कीजिए।

इकाई 2 वास्तु की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप:

- वास्तु की अवधारणा को बतायेंगे।
- वास्तुशास्त्र एवं इसके धर्मिक महत्व के बारे में बतायेंगे।
- वास्तु लक्षण एवं ग्रामवास का विचार करेंगे।
- चारों वर्णों के अनुसार भूमि लक्षण तथा इसके फल का कथन करेंगे।
- शल्या नयन प्रकार तथा गृह के समीप शुभाशुभ वस्तुओं के बारे में भी बतायेंगे।
- मुख्यद्वार भवन में कहाँ होना चाहिए तथा द्वार वेध का भी निर्णय कर पायेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई संस्कृत विभाग, मानविकी विद्यापीठ, इन्दिरागांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में संचालित वास्तुशास्त्र में स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के अन्तर्गत वास्तुशास्त्र के स्वरूप एवं इतिहास नामक प्रथम पाठ्यक्रम की खण्ड एक "वास्तुशास्त्र का स्वरूप "नामक उपशीर्षक के अन्तर्गत यह दूसरी इकाई है। इस इकाई का नाम है " वास्तु की अवधारणा " इस

बात को हम इस प्रकार समझ सकते है कि वास्तु की अवधारणा देव तथा मानव मात्र का एक प्रकार का विशिष्ट बन्धन है जिसे हम वास्तु कहते हैं। मानव जीवन को प्रभावित करने वाले बहुत से सकारात्मक कारक हैं, परन्तु वास्तु ही एक ऐसा ज्ञान है जो हमारे एश्वर्य को बहुत आगे तक ले जाता है और हमारे जीवन को आनन्द पूर्ण बनाता है।तथा बाहरी समस्याओं से भी निजात दिलाता है, दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते है कि यह एक चमत्कारिक, रहस्यमय और आध्यात्मिक ज्ञान को प्रदान करता है जिससे कि इस जीवन से परे भी पुण्य फल की प्राप्ति होती है। इसके अलावा हमारे पूर्वज हम से कहीं ज्यादा खुश, सुखी एवं समृद्ध थे, शान्ति तथा स्फूर्ति की सकारात्मक भावनाओं से भरे हुए थे। सुख और समृद्धि के साथ अपना नित्य जीवन ब्यतित करते थे जोकि आज –कल की भाग – दौड़ भरी जिन्दगी से कही ज्यादा उत्पादक तथा सकारात्मक था। आज कल की हमारी वर्तमान पीढ़ी जो की बहुत बड़े –बड़े सपने देखतें है अच्छे वेतन भोगी है, तथा सारी सुख सुविधा के साथ सम्पन्न आधुनिक मकानों में रहते हैं, लेकिन अपना धन- सम्पदा एकत्रित करने के बावजूद भी अनेकों प्रकार के आधुनिक व्यसनों से पूर्ण जीवन चर्या के कारण बीमारियों तथा रोगों से ग्रसित रहते हैं। अति व्यस्तता से पूर्ण आधुनिक जीवन शैली व्यक्ति को बीमार, आलसी तथा शारीरिक एवं मानसिक रूप से पीड़ित बना देती है, यदि ऐसा व्यक्ति परिवार का मुखिया हो तो या कुछ कमाने वाला हों तो फिर स्थिति और ख़राब होती है, यहाँ पर हम देखतें है कि आज के परिवेश में मात्र 20 या 22 वर्ष का अथवा 30 या 40 वर्ष के ब्यक्तियों को असमय ही आधुनिक जीवन शैली के कारण घातक बीमारी से जीवन लीला समाप्त हो जा रही है पुरातन काल से हमारे पूर्वज संयुक्त परिवार में रहते आये है तथा इनकी आयु भी अधिक होती थी। जीवनशैली भी बहुत उत्तम था, चूँकि वास्तु एक बहुत ही विस्तृत तथा उपयोगी ज्ञान है जो की सम्पूर्ण भारत में, वैदिक काल से ही प्रचलित है, तथा इसका प्रमाण हमारे एतिहासिक इमारतों एवं राष्ट्रीय धरोहरों में दृष्टि गोचर होता है जिसका नीव आज भी हमारे पूर्वजों द्वारा वास्तु के सिद्धान्तों की अवधारणा की ओर ध्यान आकर्षित करवाता है। वास्तु की अवधारणा मूल रूप से मानव समाज को सुखी तथा वास्तु के अनुरूप बने भवन में निवास से है ,जो कि मानव समाज को आरोग्यता तथा सुख, शान्ति, की व्यवस्था प्रतिपादित करता है साथ ही इस पाठ के अध्ययन से आप सभी इसके महत्व को बताते हुए समाज को जागृत करके स्वयं को भी लाभान्वित करेंगे।

2.2 वास्तु की अवधारणा

वास्तु की अवधारणा मानव जीवन के कई पहलुओं के लिए फायदेमंद साबित होता रहा है। वास्तु का उपयोग आमतौर पर लोग बेहतर जीवन जीने की इच्छा से करते हैं, चूँकि समय बीतने के साथ –साथ लोगों ने वास्तुशास्त्र का पालन और उपयोग करना आरम्भ कर दिया है, लेकिन क्या हमने कभी वास्तुशास्त्र के इतने जबरजस्त उपयोग के पीछे के वास्तविक कारण के बारे में सोचा है, इसकी इतनी सराहना क्यों की जाती है और यह लोगों को इतना मोहित क्यों करती है , वास्तुशास्त्र की अवधारणा आम तौर पर प्रकृति के तत्वों पर तथा दिशाओं पर आधारित है । वास्तु के अनुसार प्रत्येक दिशा के लिए एक निश्चित नियम होता है जीवन के आठ प्रमुख बातों को आठ दिशाओं की सहायता से समझा जा सकता है इन सभी दिशाओं में सही उर्जा का प्रवाह अत्यन्त सहायक होता है। वास्तु की अवधारणा में प्रकृति के पञ्च तत्व भी शामिल है। इन पांच तत्वों को पञ्चमहाभूत कहते है, जिसमें वायु ,जल ,पृथ्वी ,आकाश और अग्नि ये पांच तत्व है जो पञ्च भूतों का निर्माण करता है। जब इन पांच तत्वों का उपयोग और सही तरीके से किया जाय तो व्यक्ति को आम तौर पर सभी अच्छाई और सौभाग्य और

भाग्य का आशीर्वाद मिलता है। अगर ये दोनों अवधारणाएं पूर्णतया काम करें, तो व्यक्ति का जीवन खुशियों और उल्लास से भरा हो सकता है। इससे व्यक्ति को अधिक आध्यात्मिक जीवन जीने में भी मदद मिलेगी। साथ ही उस घर में रहने वाले लोगों की आवश्यकताओं के आधार पर एक घर का निर्माण किया जाता है। चूँकि व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास वास्तुशास्त्र के अनुसार बने हुए भवन में रहने वाले लोगों का व्यक्तित्व को बढ़ाने में मदद करता है, अन्य लोगों के साथ सम्बन्धों में सुधार भी वास्तु की उपादेयता है क्योंकि वास्तु आप के आस –पास रहने वाले अन्य लोगों के साथ सम्बन्ध बढ़ाने में सहायक है क्योंकि एक ही भवन में रहने वाले कई लोग एक साथ मिल –जुल कर रहते है तथा सौहार्द पूर्ण वातावरण बना रहता है। और भी महत्वपूर्ण बात यह है कि वास्तु लोगों में आन्तरिक ज्ञान और आध्यात्मिकता को विकसित करने में भी मदद करता, मानसिक शान्ति के साथ एक शुद्ध और स्वच्छ वातावरण प्रदान करता है, इसलिए यह मानसिक समर्थन के साथ मानसिक शान्ति भी प्रदान करता है। वास्तु व्यक्ति के जीवन में स्वास्थ्य धन की वृद्धि में मदद करता है, यह लोगों के परिवेश के प्रति अधिक सतर्क और जागरूक बनाता है साथ ही उर्जावान और भी बनाता है मन में अच्छे विचार आते रहते हैं।

इन उक्त बातों से ये तो स्पष्ट होता है कि वास्तुशास्त्र जीवन में आवश्यक है और यह व्यक्ति को अच्छे तरह से जीने में मदद करता है वास्तु का उद्देश्य लोगों के जीवन में सकारात्मक उर्जा को केन्द्रित करना है जिससे कि आनेवाले समय में जो भी शुभ कार्य करना चाहे उसमें सफलता प्राप्त कर सकें।

यह भी स्पष्ट है कि जो लोग वास्तुशास्त्र के अनुसार बने हुए घर में रहते है वे बिना वास्तु के अनुरूप बने हुए घरों में रहने वाले लोगों की तुलना में बेहतर और समृद्ध जीवन जीते हैं। वास्तु अनुपालन वाले गृह निवासियों को सौर उर्जा, चन्द्र उर्जा और ब्रह्मांडीय बलों का लाभ मिलने में सहायता प्राप्त होती है। हांला कि घर के निर्माण के समय वास्तु के सभी नियमों का पालन करना हमेशा सम्भव नहीं होता है, लेकिन इसे रहने के लिए अच्छा जगह बनाने के लिए वास्तु के कम से कम कुछ नियमों को लागू करने की सलाह दी जाती है। कुछ लोगों का मानना है कि वास्तु के अनुरूप घरों में रहने से आप के जीवन में सफलता का उम्मीद ज्यादा रहता है क्योंकि वास्तु का मन्त्र लोगों को सुखद बनाता है। चूँकि वास्तु से जो भी लाभ होता है वह अधिकतर आध्यात्मिक स्थिति में ही प्राप्त होता है, इसका आशय यह है कि आप को तात्कालिक भौतिक सफलता तो नहीं दिखेगी परन्तु वास्तव में अध्यात्मिकता से अर्थात् सात्विकता से मानव जीवन में समृध्दि प्राप्त होती है वास्तुशास्त्र के नियमों अथवा अवधारणा को पालन करना इतना कठिन नहीं है, वास्तु के अधिकांश नियम घरों के निर्माण और उनके उचित रखरखाव के ही सन्दर्भ में है इन सभी बातों को आप लोग क्रमशः अध्ययन करेंगे।

2.2.1 वास्तु का धर्म से सम्बन्ध

इस संसार में जितनी भी मानव मानव सभ्यताएं है उन सब में भवन निर्माण को एक सांसारिक कृत्य माना गया है। जब कि भारत में भवन निर्माण एक धार्मिक कृत्य है, भारत में भवन निर्माण का हेतु पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि है । जब तक कि हम इस धार्मिक रहस्य को नहीं समझ पायेंगे तब तक वास्तु के रहस्य को समझना बहुत कठिन है। यदि भवन निर्माण की कला को धर्म से पृथक कर दिया जाय तो अथवा वास्तु विज्ञान को निकाल दिया जाय तो उसकी

कीमत शून्य हो जाती है। क्योंकि वह केवल ईंट पत्थर, लोहे – सीमेंट का ढेर ही है और कुछ नहीं।

लाखों हजारों रूपये खर्च होते हैं, बहुत भारी उत्सव होता है, विवाह तो बार –बार हो सकता है पर यज्ञोपवीत जीवन में एक बार ही होता है।

यज्ञोपवीत संस्कार से व्यक्ति का इसलोक में दूसरा जन्म होता है। उसको देवत्व की प्राप्ति होती है। यज्ञोपवीत में से यदि धार्मिकता निकाल दिया जाय तो वह मात्र सूत का धागा है। जिसकी कीमत नहीं होगी।

इससे स्पष्ट होता है कि भवन कला में धर्मिक पक्ष को निकाल दिया जाय तो वह लोहे – सीमेंट – रेत के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। वह शून्य है। नि : सन्देह यज्ञोपवीत संस्कार से मनुष्य का दूसरा जन्म होता है, उसे द्विजत्व की एवं देवत्व की प्राप्ति होती है। पर यसोपवीत या राखी में से यदि श्रद्धा, विश्वास, आस्था व धार्मिकता निकाल दिया जाय तो वह मात्र सूत्र (धागा) बनकर रह जाता है। जिसकी कोई कीमत नहीं रह जाती।

इस संसार में सत्य के साक्षात्कार हेतु तीन प्रमाण माने गये हैं, प्रत्यक्ष, अनुमान एवं आप्त वाक्य। वास्तु आप्त वाक्य पर आधारित प्रत्यक्ष ज्ञान है। हमारे सत्य खोजी ऋषियों ने अपने आप को तिल – तिल जलाकर वास्तुशास्त्र के ज्ञान को जीवित रखा। उन्हीं ऋषियों के प्रति आभार मानते हुए हमें ज्ञान- विज्ञान की इस निर्मल धारा को आगे बढ़ाना है। तभी वास्तुशास्त्र की पवित्रता दीर्घ जीवी रहेगी। भारत में भवन निर्माण एक धार्मिक कृत्य है जिससे पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि होती है।

धार्मिक मान्यताओ के अनुसार भवन बनवाने से पूर्व वास्तु पूजन इत्यादि करने के बाद ही (अथवा भूखण्ड खरीदने से पूर्व वास्तु नियमों के अनुसार भूमि की परीक्षा एवं पूजन जरूर करना चाहिए) भवन बनवाने से पूर्व शुभ मुहूर्त में भूमि पूजन, नींव पूजन करना चाहिए। भवन पूरा बन जाने के बाद विविध प्रतिष्ठा, वास्तु पूजा, गायत्री-जप, गणपति पूजन ,नवग्रह पूजन एवं सम्पूर्ण ग्रह शान्ति हवन करना अथवा ब्राह्मण के द्वारा कराना चाहिए। जप के दशांश हवन यज्ञ का विधान है। उसका दशांश ब्राह्मण भोजन, दक्षिणा पूर्वक करना चाहिए। शास्त्रों में तो भवन की कुल लागत का दशांश प्रतिष्ठा कार्य में खर्च करने का निर्देश दिया गया है। विश्वकर्मा प्रकाश में तो स्पष्ट लिखा है कि जो लोग खर्च के लोभ में, नास्तिक भाव से अथवा आलस्य (प्रमाद) से पूजा नहीं करते उन लोगों का एश्वर्य नष्ट हो जाता है। वे अकाल मृत्यु को प्राप्त होते हैं तथा उनके प्रत्येक कार्य में विघ्न-वाधा एवं रूकावटे आती है, तथा वे लोग वास्तु पुरुष के कोप दोष का भाजन होकर दुर्भाग्य के चक्कर में फस जाते हैं। यथा –

आश्रियं मृत्युमाप्नोति विहनतस्य पदे पदे।
वास्तु पूजां अकुर्वाण: तवाहारो भविष्यति॥ (विश्वकर्मा प्रकाश अ . 1 / श्लोक 17)

पाश्चात्य संस्कृति एवं भारतीय संस्कृति (वास्तु कला) में यही मुलभुत अन्तर है। पाश्चात्य संस्कृति आत्म केन्द्रित संकुचित ,अपरोपकारी, एवं अधार्मिकता से परिपूर्ण होती है। कबूतरों को चुग्गा देना, चिडियों को पानी पिलाना, कुत्ते व गाय को रोटी देना, पीपल, तुलसी का पूजन वृक्षों को पानी पिलाना, ब्राह्मणों को भोजन से तृप्त कर आशीर्वाद लेना उनकी संस्कृति का अंग नही है।

एक बार की बात है कि जिज्ञासु ऋशियों ने देवतओं के शिल्पी भगवान विश्वकर्मा से पूछा कि वास्तु तो देव विद्या है । इसे मानव को क्यों बताया जाय, तथा मनुष्य के लिए इसकी क्या उपयोगिता है, इस बात पर भगवान विश्वकर्मा स्वयं अपने मुखारविंद से कहते हैं –

इस शिल्प शास्त्र, वास्तु विज्ञान के ज्ञान से मनुष्य मात्र को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति होती है जिससे उसका मानव जीवन सार्थक हों जाता है। साथ ही इस मृत्यु लोक में ही वह मनुष्य देवत्व को प्राप्त कर जाता है। वह चमत्कारी हों जाता है तथा दूसरों का कल्याण, मंगल करने में समर्थ हो जाता है। और भी कहा गया है –

इदं पवित्रं परमं रहस्यं य : पठेन्नर : ।
स्यातस्यावित्तथा वाणी सत्यं सत्यं वदाम्यहम ॥ (विश्वकर्मा प्रकाश अ . 39 श्लोक सं . 111)

इस परम पवित्र एवं रहस्यमय (गुप्त) विद्या को मनुष्य भलीभांति पढ़ कर समझ लेता है । उसकी वाणी सदैव सत्य एवं सफल होती है, अर्थात् कभी भी निष्फल नहीं होता है।

2.2.2 वास्तु लक्षण एवं स्वरूप

प्राचीन काल में बड़े – बड़े राजप्रसाद, किले ,देवमन्दिर, विद्यालय तालाब, कूप बावड़ी, बगीचे से लेकर सामान्य निवास स्थान बनाने के लिए वेद – पुराण व शास्त्रों में वर्णित वास्तु विद्या, स्थापत्य कला को आधार मानकर विचार किया जाता है ।वास्तुशास्त्र में सुख –समृद्ध के लिए कई तरह के नियम बनाये गये हैं। जिसका पालन करने से घर पर सकारात्मक उर्जा का संचार होता है। साथ ही घर पर वास्तु दोष होने से कई तरह की परेशानियां आती है। जिसमें प्रमुख रूप से धनहानि, मानसिक प्रताड़ना और अशान्ति का सामना करना पड़ता है। वास्तु के अनुसार कुछ घर में वास्तु दोष ऐसे होते हैं जिन्हें आप भूल कर भी न करें नजरअंदाज। दक्षिण मुखी घर होने पर मुख्य दरवाजा दक्षिण मुखी हो तो इस वास्तु दोष को दूर करने के लिए घर के मुख्य दरवाजे पर पंचमुखी हनुमान जी के फोटो को लगानी चाहिए। इसके अलावा मुख्यद्वार पर शीशा लगाने से भी वास्तु दोष दूर होता है। एक ही साथ कई दरवाजे होने पर इसे बड़ा वास्तु दोष माना जाता है, अगर आप के घर में बड़ा वास्तु दोष है तो सबसे पहले दरवाजे पर विंड चाइम लगवाना चाहिए। वास्तु में घर की रसोई के लिए सबसे उपयुक्त दिशा आग्नेय ही होता है ऐसे में अगर इस दिशा में रसोई नहीं है तो घर के पूर्व दिशा जिसे ईशान कोण कहते हैं उस स्थान पर भगवान गणेश की मूर्ति लगाना चाहिए। अगर आप के घर में जिस कोने में वास्तु दोष है वहाँ पर कपूर के दो टुकड़े रखें तो घर पर हमेशा सकारात्मक उर्जा आती रहेगी ।ईशान कोण घर का सबसे शुभ स्थान होता है इसी कोने में भगवान का वास होता है। एसे में अगर घर के ईशान कोण में किसी तरह का वास्तु दोष है तो इस दिशा में तुलसी का पौधा लगाना चाहिए। वास्तुशास्त्र के अनुसार घर का उत्तर – पूर्व कोना बहुत ही शुद्ध एवं सकारात्मक माना जाता है, इसे ईशान कोण भी कहते हैं ।इस जगह पर कभी डस्टबिन या भारी सामान नहीं रखना चाहिए। वास्तु में नल से लगातार पानी टपकना शुभ नहीं माना जाता है ,नल से पानी टपकते रहने से धन का खर्च अधिक मात्रा में होने लगता है और इससे आर्थिक परेशानियां उत्पन्न होती है, इसी लिए शुभ नहीं माना जाता है। वास्तु के अनुसार घर में रसोई घर पश्चिम दिशा में शुभ मानी जाती है लेकिन यहां पर भोजनालय होने से खर्च भी काफी बड़ता है। अगर किसी के घर की ढलान उत्तर – पूर्व की दिशा में उचां हो तो इससे धन की आवागमन में

रुकावटें आती है। वास्तु के अनुसार वेडरूम में आईना नहीं होना चाहिए इससे पति – पत्नी में झगड़े होते हैं।

अन्तरिक्ष का सबसे अधिक उपयोग वास्तुशास्त्र के अनुसार पूर्णतया किया जा सकता है, इस लिए कमरों का निर्माण सही तरीके से और सही जगह पर किया जाता है यह निवासियों को वास्तुशास्त्र के दर्शन से सबसे अधिक लाभ प्राप्त करने की अनुमति देता है। वास्तुशास्त्र का उपयोग तब किया जा सकता है जब जीवन को बेहतर बनाने की अनुमति परमात्मा की ओर से प्राप्त होती हो तो, चूँकि नुकसान और समस्या जीवन का ही एक अंग है, लेकिन इसके साथ जीवन जीना सीखना होगा। जब कोई व्यक्ति जीवन में दर्द भरे समय से गुजरता है तो मानसिक समर्थन देने की बात आती है तो उस समय वास्तु एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। चूँकि वास्तु हमें जीवन में मजबूत और शक्तिशाली बनने में सहायक होता है। यह आम तौर पर एक कला का रूप है जो जो निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। वास्तुशास्त्र का लक्ष्य है व्यक्ति के जीवन को खुशहाल बनाना अगर कोई चीज हमें परेशान करती है तो वास्तु हमारे जीवन को आराम दायक बनाता है। साथ ही हमें मानसिक और भौतिक दुनियां का दोहरा लाभ भी प्रदान करता है। चूँकि विदेशों में भी भारतीय वास्तु कला को लेकर बहुत ही गम्भीर चिन्तन हुआ, इस विषय में जर्मनी में सबसे पहले भारतीय वास्तु ज्ञान, को अंग्रेजी भाषा एवं अन्य भाषाओं में नवीन परिभाषाओं के साथ मुखरित होकर फैलने लगा। अब विदेशों में भी जब भी कोई भवन बनता है तो सबसे पहले भवन का मुख्यद्वार किधर हो, जल स्थान कहां बनाएं, पाकशाला में अग्नि स्थान कहां हो, शयन कक्ष भी उत्तर – दक्षिण चुम्बकीय तरंगों को देख कर बनाया जाता है ताकि सोनेवाले को भरपुर नींद आ सके, और यह सबकुछ भारतीय वास्तुशास्त्र के मानक माप दण्डों पर आधारित होता है। और भी मुख्य बात यह है कि विश्व के अत्याधुनिक कहे जानेवाले प्रगतिशील वैज्ञानिक देश भी अब वेदों में रूचि लेकर भवन निर्माण करने लगे हैं। अभी कुछ समय पूर्व विगत 20 जनवरी 1995 को "लांस एन्जिल्स" में अमेरिका के कारीगरों ने विश्व के अथर्ववेद के स्थापत्य शास्त्र पर आधारित पहला मकान बना लेने का दावा किया है। श्री किरीट कुमार पटेल अपने उपनगरीय मकान में सूर्योपासना करना चाहते थे लेकिन उनके पश्चिमाभिमुख मकान में यह इच्छा पूरी नहीं हो रही थी। इसलिए उन्होंने, अपने भवन निर्माता मोरिस शिंडलर से पूर्वाभिमुख मकान बनाने पर जोर दिया और फिलान्देफिया का यह भवन निर्माता इस काम में जुट गया। वास्तु शिल्प के तीन हजार वर्ष पुराने वैदिक सिद्धांतों का उन्होंने सहारा लिया। अथर्व वेद में शामिल 1000 ई . पूर्व के स्थापना शास्त्र के सिद्धांतों से उन्हें लाभ मिला।

गावों, कस्बों और छोटे शहरों में मनुष्य अपनी इच्छानुसार भूखण्ड खरीदकर, वास्तु विषयों के नियमों के अनुसार द्वार – खिड़किया एवं भवन बना सकते हैं। परन्तु महानगरों में बने –बनाये हाऊसिंग बोर्ड के मकान एवं प्लैट खरीदने वालों के पास आमुलचुक परिवर्तन करने का विकल्प नहीं होता है। बाम्बे, मद्रास, कलकता जैसे शहरों में इस तरह की समस्या बहुत है। कि व्यवसाय नहीं चल रहा है, पत्नी बीमार रहती है शत्रु बढ़ रहे हैं इत्यादि परन्तु इस बात पर गौर करना चाहिए कि कहीं आपके घर का वास्तु खराब तो नही है जिसके चलते इस प्रकार की समस्याए आ रही है जी हां इसके लिए उस फ्लैट में कोणात्मक दिशा – शोधन करके, जल स्थान, अग्नि स्थान, पूजास्थल, शयन कक्ष में पलंग इत्यादि की दिशा बदलकर, सीढियों और खिडकियों की संख्या में हल्का सा परिवर्तन करके भवन सम्बन्धित उसके दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदला जा सकता है।

2.2.3 ग्रामवास विचार

निवास के लिए देश –ग्राम स्थान के चयन में जलवायु, पंचभू तत्व, ग्रह, मास, नक्षत्र, आय, काकिणी इत्यादि परिशुद्ध होना चाहिए।

सुख, धन –धान्य, एश्वर्य, सन्तति सहित निरन्तर सुख के लिए गृह का सुलक्षण होना आवश्यक है। मनुष्य की सुख –सुबिधा हेतु देश, पुर – ग्राम निवास व आसन (शयन, यान, उपवेशन) ये सभी समान रूप से अपेक्षित है, अर्थात् सबकी अनुकूलता होने पर शुभ, और प्रतिकूल होने पर प्रतिकूल लक्षण होने पर अशान्ति का वातावरण बना रहता है।

राशियों के अनुसार जैसे – वृष, मिथुन, सिंह एवं मकर राशि वाले लोगों को गाँव के मध्य में अपना घर अथवा निवास नहीं बनाना चाहिए, पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः वृश्चिक – मीन – कन्या –कर्क –धनु –तुला –मेष एवं कुम्भ राशि वालों को अपना निवास नहीं बनाना चाहिए। और अ-क-च- ट- प- य- श ये आठ अ वर्ग आदि पूर्वादि क्रम से आठ दिशाओं के स्वामी हैं। जिसमें अपने से पांचवां शत्रु होता है, शत्रु की दिशा का वास उत्तम नहीं होता है।

इस बात को इस चक्र के माध्यम से आसानी से समझ सकते हैं।

दिशा	मध्य	पूर्व	अग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
निषिद्ध राशि	वृ . मि . सिं . म .	वृश्चिक	मीन	कन्या	कर्क	धनु	तुला	मेष	कुम्भ
वर्ग	-	अ	क	च	ट	त	प	य	श

बृहद्वास्तुमाला के अनुसार ग्रामवास विचार इस प्रकार है – अपने नाम की राशि से दूसरी, पाचवीं, नवीं, दसवीं, ग्यारहवीं राशि वाले ग्राम में निवास करना शुभ होता है अन्य राशि वाले ग्राम में निवास न करें।

अन्य मतों के अनुसार अपने नाम राशि से ग्राम राशि प्रथम, तृतीय, षष्ठ ,सप्तम ,अष्टम, चतुर्थ, द्वादश इन अंकों में हों तो हानि, वैर, एवं रोग का भय होता है।

ग्राम नाम व निवास करने की दिशा के वर्गो के योग में 9 का भाग देने से शेष के क्रम से सूर्य –चन्द्र –भौम –राहु –गुरु –शनि –बुध –केतु –शुक्र ये ग्रह दशा स्वामी होते हैं।

विशेष :- युक्ति के अनुसार उपर्युक्त तीनों के वर्ग क्रम से ही संख्या ग्रहण करनी चाहिए, जैसा कि दिन का रवि, तिथि की प्रतिपदा, राशि की मेष व नक्षत्र की अश्विनी से संख्या ग्रहण करनी चाहिए। यह युक्तियुक्त परम्परा प्रसिद्ध है ,वर्ग के स्वर की संख्या को ग्रहण करना युक्ति हीन है, अत : अवर्गादि क्रम से संख्या – इस प्रकार है

अ = 1, क = 2, च = 3, ट = 4, त= 5, प = 6, य = 7, श = 8 यही संख्या दशा एवं काकड़ी में लेनी चाहिए।

दशा वर्ष प्रमाण – गृहारम्भ कालिक गत नक्षत्र घटी को दशेश के दशावर्ष से गुणा करके भभोग से भाग देने से दशावर्ष भुक्त वर्षादि होगा, यह क्रिया प्रसिद्ध है। दशा वर्ष मान क्रमशः 6 ।10 ।7 ।18 ।16 ।19 ।17 । 7 ।20 वर्षादि है।

पूर्व स्थित स्वगेह – पण्य स्थान (व्यापार स्थान) आराम (बाग) तड़ाग कूप ग्राम इनमें से जो स्थिर अथवा समीप हो ,उससे किसी नूतन स्थान की दशा का आनयन करना चाहिए। गृह –कूप –बाग –तड़ाग प्रभृति किसी के निर्माण में भी एक दूसरे को स्थिर मानकर दशा का आनयन करना चाहिए।

ग्राम निवास फल इस प्रकार भी समझ सकते हैं – नाम की राशि से ग्राम की राशि 4 \ 8 \ 12 हो तो निवास कर्ता के लिए रोग प्रदान करने वाला होता है। 1 \ 7 हो तो वैर होता है, तथा 3 \ 6 संख्या आवे तो हानि होगा उस स्थान परअथवा उस ग्राम में निवास करने पर ऐसा समझना चाहिए।

सूर्यादि ग्रहों के दशा में निर्माण या निवास का फल इस प्रकार जानना चाहिए – सूर्य की दशा में किसी ग्राम या स्थान में कोई निर्माण कार्य करते है तो धन का नाश होता है, चन्द्रमा के दशा में सुख –सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, मंगल की दशा में राजभय होता है, बुध की दशा में लक्ष्मी व सुख की प्राप्ति होती है, गुरु की दशा में धर्म की प्राप्ति होती है, शुक्र की दशा में शुभ कार्य की सिद्धि, शनि की दशा में दरिद्रता की बृद्धि होती है, तथा राहु व केतु की दशा में सन्तति पीड़ा होता है ।

ग्रामवास - ग्राम के पूर्व दिशा में मीन – बृश्चिक – कन्या – राशिवालों को नहीं निवास करना चाहिए।

तथा ग्राम के मध्य में – वृष – मिथुन –सिंह – मकर राशि वालों को निवाश नहीं करना चाहिए।

ग्राम के पश्चिम में - मेष तथा तुला राशि वालों को निवाश नहीं करना चाहिए।

दक्षिण दिशा में - कर्क एवं धनु राशि वालों को निवाश नहीं करना चाहिए।

उत्तर दिशा - कुम्भ राशि वालों को धन, पुत्र, एवं अर्थ की इच्छा से निवास नहीं करना चाहिए।

काकिणी विचार –

स्ववर्गं द्विगुणीकृत्य परवर्गेण योजयेत् ।
अष्टभिस्तु हरेद्भागं योऽधिक: स ऋणी भवेत्॥

(वास्तुसारसंग्रह, द्वितीय सोपान श्लोक सं .23)

इसका आशय आपको इस प्रकार समझना चाहिए कि वर्ग कुल आठ होते है – जो निम्नलिखित है, (1) अ, (2) क, (3) च, (4) ट, (5) त, (6) प, (7) य, (8) श, । इन आठों वर्गों में क्रमशः गरुण, विडाल, सिंह, स्वान, सर्प, मूषक, मृग, मेष स्वामी होते हैं। और ये पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी भी हैं साथ ही ये वर्ग स्वामी अपने से पाचवें के शत्रु भी होते हैं जैसे - गरुण का शत्रु सर्प है इसी प्रकार आपको शत्रु समझना चाहिए।

अपने- अपने वर्ग को द्विगुणित करके ग्राम या नगर के वर्ग को जोड़कर उस आये हुए योगफल में 8 का भाग देने से जो शेष बचे वही काकड़ी होता है। दोनों की काकड़ी में से जिसकी

काकड़ी की संख्या अधिक हो, वह ऋणी होता है, अर्थात् दूसरे के लिए लाभदायक होता है। जैसे – जितेन्द्र को कृष्ण कुञ्ज नामक स्थान (ग्राम, कालोनी, शहर) में निवास या घर बनवाना है तो इसके लिए काकणी विचार करते हैं इनके लिए कृष्णकुञ्ज में रहना लाभदायक है या हानिकारक है, दायक है इसको समझते हैं।

निवास कर्ता स्थान - कृष्णकुञ्ज

जितेन्द्र का वर्ग = 3 ग्राम वर्ग = 2

3 x 2 = 6 +2 = 8 / 8 = 0 शेष 2 x 2 = 4 + 3 = 7 / 8 = 7 शेष, ग्राम की काकड़ी प्राप्त है।

निवास कर्ता की काकड़ी 0 प्राप्त हुआ। अब यहाँ पर ग्राम की काकड़ी अधिक है इसलिए जितेन्द्र के लिए कृष्णकुञ्ज में निवास करना श्रेयस्कर होगा इसी प्रकार आप को अन्य जगह भी समझना चाहिए।

अन्य प्रकार से ग्रामवास विचार – सेवक अधमर्ण (ऋण गृहीता) युवती व नगर का नक्षत्र क्रमशः स्वामी, धनी (ऋण दाता) भर्ता (पति) व पुर में निवास करने वाले के नक्षत्र से पूर्व या प्रथम हो, तो क्रम से नौकर, धन, पति, व ग्रामवासी की हानि होती है।

यदि गृह पिण्ड व गृहारम्भ का नक्षत्र गृह के मुख्यद्वार के सम्मुख हो तो गृह स्वामी का उद्वास – उच्चाटन व मुख्यद्वार के पीछे हों तो चोरी होती है। अन्यमत-

ग्राम नक्षत्र से नाम नक्षत्र संख्या का फल क्रमशः इस प्रकार जानना चाहिए परन्तु इसमें अभिजित रहित नक्षत्र की गणना करनी चाहिए। तथा चक्र के माध्यम से फल जानेंगे –

स्थान	मस्तक	मुख	कुक्षि	पाद	पृष्ठ	नाभि	गुह्य	हस्त	वामकर
नक्षत्र संख्या	5	3	5	6	1	4	1	1	1
फल	लाभ	धनक्षय	धनप्राप्ति	दरिद्रता	हानि	सम्पत्ति	भयपीड़ा	क्रन्दन	भेद

अभिजित सहित नक्षत्र की गणना क्रम से विचार इस प्रकार है तथा चक्र के माध्यम से फल समझना चाहिए –

स्थान	मस्तक	पृष्ठ	हृदय	पाद
नक्षत्र संख्या	7	7	7	7
फल	धनवान	हानि, निर्धनता	सुख – सम्पत्ति	भ्रमण

विशेष:– गृह – नगर ग्रामादिकों में वास्तु निर्दिष्ट (अपने –अपने) स्थानों में देवता का निवास बताया गया है, अत : देवता के उद्देश्य से पूज्य देव स्थानों में सभी को अपने – अपने अनुकूल देवस्थान में निवास करना बहुत उत्तम होता है। ऐसा समझना चाहिए।

यह मत वराहमिहिराचार्य का है।

नगर – ग्राम, पुर आदि स्थानों में सचिव गृह के समीप निवास से निवास करने से धनानि, धूर्त के समीप निवास से पुत्रवध, तथा देवता के समीप निवास से उद्वेग, एवं चतुष्पद के पास निवास से अपकृति बढती है।

ग्राम या नगर के प्रधान वृक्ष को चैत्य वृक्ष कहते है, उसके समीप निवास से भूतादि पीड़ा होती है ऐसा जानना चाहिए।

2.3 भूमि परीक्षा एवं खात विचार

अभी तक तो आप लोग निवास स्थान , देश- काल- परिस्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त किए अब इस बात को जानते है कि किस प्रकार की भूमि में निवास करना सर्वथा लाभदायक होगा तथा किस प्रकार की भूमि में निवास बनवाना अशुभकर होगा भूमि परीक्षा कैसे करनी चाहिए कि हम यह समझ सकें कि इस भूमि में निवास से मुझे किस प्रकार के फल प्राप्त होंगे। आइए इस बात को समझते हैं –

कटी – फटी, ऊबड़-खाबड़, सशल्य, दीमक से आच्छादित भूमि का सर्वथा त्याग करना चाहिए, अन्यथा गृह स्वामी की आयु व धन की हानि होती है। चूँकि मध्य में सर्वोन्नत और चारों ओर नीची भूमि हो, उसे कुर्म पृष्ठ भूमि कहते हैं ,वहाँ निवास बनवाना श्रेयस्कर नहीं होता है इसका कारण या मतभेद यह है कि मध्यभाग सर्वोत्कृष्ट समुन्नत और चारों तरफ शिखरवत ढाल हो तो निषिद्ध है व पृष्ठ पर जल गिराने से सामान्य रूप से बहाव और उतरते समय प्रपतन का भय न हो साथ ही चारों दिशाओं में प्लवत्व भी हों तो शुभ है।

1) - महर्षि भृगु के अनुसार उत्तर प्लव भूमि ब्राह्मण, पूर्व प्लव भूमि क्षत्रिय ,दक्षिण प्लव भूमि वैश्य, व पश्चिम प्लव भूमि अन्य, तथा सभी दिशाओं में समान प्लव भूमि ब्राह्मणों के लिए अति उत्तम फल को देने वाली होती है।

2)- जहाँ पर मन प्रसन्न हो, आनन्द की अनुभूति हो और देखने से भी प्रसन्नता व सन्तुष्टि हो, उस भूमि पर भी सभी व्यक्ति निवास बना सकते हैं।

3)- जिस भूमि के उपर सुगन्धित मनोहर जयन्ती –जया इत्यादि लतायें, मन को आह्लादित करने वाले वृक्ष हों ,देखने मात्र से स्नेह प्रकट होता हो, तथा आकृति में समान निम्नोन्नत रहित, मूषकादि विवर या किसी प्रकार के दरार (सर्करा) से मुक्त हो, जहाँ पर मार्गजनित श्रम का क्षणिक विश्राम से निराकर व शान्ति सुख की अनुभूति हो, उस भूमि पर निवास बनाकर रहने से सुख-सुविधा व शान्ति शाश्वत बनी रहती है, अर्थात् इसी भूमि हमेशा सुख – सुविधा को प्रदान करने वाली होती है।

भूमि परीक्षण - गृहमध्ये हस्तमितं खात्वा परिपूरितं पुनः स्वभ्रम्।
यन्न्यूनमनिष्टम् तत्समे समं धन्यमधिकं च यच्च॥

(श्लोक सं . 14 तुरीय सोपान वास्तुसार संग्रह)

भूमि परीक्षण के लिए भूखण्ड के बीच में भूमिपति के हाथ से एक हाथ गहरा, एक हाथ लम्बा, एक ही हाथ चौड़ा बिल्कुल बराबर खात (गड्ढा) खोदकर उसमें से मिट्टी निकाल कर पुनः उस मिट्टी को उसी गड्ढे में भरें, उस गड्ढे के भरने के पश्चात अगर यदि मिट्टी बच जाय तो यह समझना चाहिए कि यह भूमि निवास के लिए उत्तम है, तथा मिट्टी खात को भरने के पश्चात बचे

नहीं बराबर हो जाय तो यह समझना चाहिए कि यह भुमि निवास के लिए मध्यम फल को देनेवाली है। एवं खात भरे नहीं और मिट्टी कम पड़ जाय तो यह जानना चाहिए कि यह भूमि निवास के लिए उत्तम नहीं है इस स्थान पर निवास करना हानिकारक होगा ।

ठीक इसी प्रकार उक्त विधि से खात खोदकर उस गड्ढे को जल से भर दें तथा समान गति से सौ कदम जाकर पुनः आने पर गड्ढे में जल कम नहीं हुआ हों तो यह समझना चाहिए कि यह भूमि बहुत ही उत्तम है तथा यहाँ निवास करना सर्वथा लाभदायक होगा। अन्य मतानुसार गड्ढे को जल से पूरित करने के बाद शत निमेश अर्थात् 40 मिनट के बाद यदि गड्ढे का जल स्थिर है तो भी वह भूमि लाभदायक ही है ऐसा जानना चाहिए। भूमि परिक्षण के सन्दर्भ में अन्य विचार और भी है जो निम्नलिखित है –

1)- उक्त विधि से गड्ढे का निर्माण करके उस गड्ढे को गाय के गोबर से लीपकर उसके अन्दर वर्णों के अनुसार मिट्टी के चार दीपक चरों कोणों में स्थापित करें तथा मानसिक निर्धारण करें कि यह दीपक इस वर्ण के लिए है। एवं दीपक में घी रहते हुए जिस वर्ण वाला दीपक मलिन होकर बुझ जाय तो यह समझना चाहिए कि उस वर्ण के लिए वह भूमि लाभदायक नहीं है।

2) उक्त विधि से गड्ढे का निर्माण करके उस गर्त के चारों कोणों में चार फूल वर्णों के अनुसार रखें तथा सुबह उठकर देखें कि कौन सा वर्ण वाला फूल मलिन (मुरझाया हुआ) है जिस वर्ण का फूल मलिन हुआ होगा उस वर्ण के निवास के लिए वह भूमि उत्तम नहीं है, एवं जिस वर्ण का मलिन नहीं हुआ है उसके लिए वह भूमि निवास करने योग्य है।

3) भूमि की खुदाई में यदि हड्डी, कोयला इत्यादि मिले तो ऐसे भूमि पर भवन नहीं बनाना चाहिए। यदि खुदाई में ईंट-पत्थर निकले तो ऐसा भूमि लाभ देनेवाली होती है। भूमि का परीक्षण बीज उगा कर भी किया जाता है, जिस भूमि पर वनस्पति समय –समय पर उगता रहे एवं बीज समय पर अंकुरित होता हो तो इस प्रकार की भूमि अच्छी मानी जाती है।

4) भूमि परीक्षण में भूमि के आकार का भी विचार किया जाता है, इसलिए वर्गाकार भूमि सर्वोत्तम होता है, आयताकार भी शुभ होता है, सिंह मुखी – गोमुखी भू खण्ड भी उत्तम होता है निवास के लिए गोमुखी एवं व्यापार के लिए सिंह मुखी उत्तम समझना चाहिए।

खात विचार – सूर्य के नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक अभिजित सहित गड़ना करने पर 7 नक्षत्र अशुभ, उसके बाद 8 से 18 वे नक्षत्र तक शुभ, उसके बाद 19 वे नक्षत्र से 28 नक्षत्र तक अशुभ समझना चाहिए।

सूर्य के नक्षत्र से	3	4	4	3	4	3	4	3
अंग	मस्तक	अग्रपाद	पृष्ठ पाद	पृष्ठ	दक्षिण कुक्ष	पुच्छे	वामकुक्षे	मुखे
फल	दाह	शून्य	स्थिर	श्री	लाभ	नाश	दरिद्रता	पीड़ा

ए सभी विचार गृहारम्भ में किया जाता है आप को गृहारम्भ में खात की दिशा का निर्णय सूर्य की राशि के अनुसार करना चाहिए इसमें देवालय में, गृहारम्भ में, जलाशय में सूर्य की राशि के अनुसार राहु का मुख तथा खात की दिशा का निर्धारण इस प्रकार समझना चाहिए जो निम्नलिखित चक्र से सरलता से कर सकेंगे –

संक्रांति	विवाह में सूर्य	देवालय में सूर्य	गृहारम्भ में सूर्य	जलाशय में सूर्य	खात की दिशा	राहु मुख
सूर्य	वृष, मिथुन, कर्क	मीन ,मेष, वृष	सिंह, कन्या ,तुला	मकर ,कुम्भ, मीन	आग्नेय	ईशान
सूर्य	कुम्भ, मीन, मेष	धनु, मकर, कुम्भ	वृष, मिथुन, कर्क	तुला, वृश्चिक, धनु	नैऋत्य	आग्नेय
सूर्य	वृश्चिक ,धनु, मकर	कन्या ,तुला ,वृश्चिक	कुम्भ, मीन, मेष	कर्क, सिंह, कन्या	वायव्य	नैऋत्य
सूर्य	सिंह, कन्या, तुला	मिथुन, कर्क, सिंह	वृश्चिक, धनु, मकर	मेष, वृष, मिथुन	ईशान	वायव्य

2.3.1 शल्यानयन प्रकार

जिस भूमि पर घर बनवाना हो उस भूमि पर अगर यदि वाल्मीक या दीमक लगें हों, वहाँ पर गृह निर्माण से गृहपति को रोग होता है ,तथा जहाँ पर उसर हो, कटी – फटी भूमि हो, वहाँ पर भी गृह निर्माण नहीं करना चाहिए। ठीक इसी प्रकार जहाँ पर शल्य हो, वह भूमि दुःखदायी होती है, इसीलिए भूमि को खोदकर शल्य विहीन किया जाना चाहिए तथा शल्य युक्त भूमि में गृह कभी नहीं बनवाना चाहिए। और विचार इस प्रकार है –

ग्राम एवं दिशा की स्वर संख्या में प्रश्न संख्या में प्रश्न कर्ता के नाम अक्षरों का योग कर के 7 से गुणा करें और 4 से भाग दें, जी शेष आवे उससे फल को समझें, 1 शेष हो तो भूमि उत्तम है, 2 शेष बचे तो भूमि सोई हुई है, 3 शेष बचे तो भूमि मृत है तथा 4 शेष बचे तो भूमि का प्रभाव शून्य है ऐसा जानना चाहिए।

नाम – ग्राम – दिशा व प्रश्न स्वर के वर्ग की स्वर संख्याओं के योग में तीन का भाग दें, 1 शेष बचे तो जीवित, 2 शेष बचे तो मृत, 3 शेष बचे तो शून्य फल जानना चहिए। अर्थात् 1 शेष होने पर ही निवास करने योग्य भूमि है ऐसा जानना चाहिए इसका आशय आप को यह समझना चाहिए कि मृत भूमि अथवा सोई हुई भूमि अथवा शून्य भूमि व शल्य युक्त भूमि में अपना निवास अथवा घर नहीं बनवाना चाहिए।

शल्य ज्ञान के लिए प्रश्न विधि – जिस भूमि पर निवास बनाना हो एवं शल्य (हड्डी) का पता लगाना हो कि यहाँ शल्य है या नहीं इसके लिए सर्व प्रथम उस भमि पर जाकर अपने इष्ट देव

का स्मरण करके गणपति आदि दिक्पालों का सम्यक पूजन करके वर्णों के अनुसार प्रश्न करने का विधान है जैसे – ब्राह्मण को फूल का नाम रखना चाहिए, क्षत्रिय को नदी का नाम, वैश्य को फल का नाम व अन्य सभी को देवता का नाम उच्चारण करना चाहिए। इस प्रकार प्रश्न के प्रथम अक्षर एवं वर्ण अक्षरों के अनुसार शल्य किस स्थान पर है इसका निर्देश इस प्रकार समझना चाहिए –

1) प्रश्न का पहला अक्षर यदि अ या आ से है तो अभीष्ट भूमि के पूर्व भाग में डेढ़ हाथ के नीचे मनुष्य की हड्डी है, इसमें निवास करने से मनुष्य की मृत्यु होती है।

2) यदि प्रथम अक्षर " क" हो तो अग्निकोण में दो हाथ नीचे शश (खरगोस) की हड्डी है ऐसा जानना चाहिए, इसमें निवास करने से राजदण्ड का भय हमेशा बना रहता है ।

3) यदि प्रश्न अक्षर " च " है तो एक कमर नीचे दक्षिण भाग में मनुष्य का शल्य समझना चाहिए, यहाँ पर घर बनवाने से गृह स्वामी की मृत्यु होती है ऐसा जानना चाहिए।

4) " ट " प्रश्न में नैऋत्य कोण में डेढ़ हाथ नीचे कुत्ते की हड्डी है ऐसा जानना चाहिए, तथा इसका फल यह होता है कि यहाँ पर बालकों की मृत्यु होती है।

5) " त " प्रश्न में पश्चिम भाग में शिशु का शल्य डेढ़ हाथ नीचे है, इसमें कर्ता का उच्चाटन होता है।

6) " प " प्रश्न में वायव्य कोण में तुष – कोयला भस्म चार हाथ नीचे है, इसमें मित्र द्रोह व दुःस्वप्न दिखाई देता है।

7) यदि प्रश्न का प्रथम अक्षर " य " हो तो भूभाग के उपर भाग में शल्य है, इसमें धन व का अभाव रहता है, इसमें निवास करनेवाला हमेशा परेशान रहता है ।

8) " श " प्रश्न में ईशान कोण में डेढ़ हाथ नीचे गाय का शल्य समझना चाहिए, इसमें पशुओं का नाश होता है, ह य प इन तीनों अक्षरों के प्रश्न में पूर्व – प्रतिपादित दिशाओ के अतिरिक्त भूमि के मध्य भाग में भी वक्षस्थल मात्र नीचे राख – भस्म – लोहा इत्यादि है, इसका फल कुल का विनाश समझना चाहिए।

भूमि में शल्य (हड्डी) है या नहीं – इस बात का पता करने के लिए भूमिस्वामी द्वारा प्रश्न कराया जाता है तथा उनके प्रश्न के अक्षर को 3 से गुणा करें तथा मात्राओं को 4 से गुणा करके उस योगफल में 9 का भाग दें, यदि विषम अंक शेष बचे तो यह समझना चाहिए कि भूमि में हड्डी है, अगर यदि सम अंक शेष बचे तो भूमि में शल्य नहीं है ऐसा कहना चाहिए।

॥ दिशाज्ञान बोधकचक्र ॥

प फ ब भ म (ईशान कोण)	अ ई उ ऋ ळ ॡ (पूर्व दिशा)	क ख ग घ ड. (आग्नेय कोण)
श ष स ह (उत्तर दिशा)	य र ल व (मध्य में)	च छ ज झ ञ (दक्षिण दिशा)
त थ द ध न (वायव्य कोण)	ए ऐ ओ औ (पश्चिम दिशा)	ट ठ ड ढ ण (नैऋत्य कोण)

इस चक्र के अनुसार आप इस प्रकार शल्य के बारे में पता लगा सकते है कि जो भी गृह स्वामी हो उससे देवता, पुष्प तथा वृक्ष का नाम लेने को कहें, उनके द्वारा कहे गये शब्दों के पहला अक्षर जिस कोष्टक में हो उस दिशा में शल्य होगा ऐसा बताना चाहिए।

उक्त बताये हुए नियमों के अनुसार अ क च ट ए त श प य वर्ग पूर्व आदि दिशा में समझें, प्रश्न का अक्षर जिस कोष्टक में हो उस दिशा में शल्य समझना चाहिए, अथवा केश – कोयला –लकड़ी –लोहा आदि होता है

इसके रहते गृह निर्माण न करें, अत: भूमि शोधन परम आवश्यक है।

शल्य आदि का फल – गाय का शल्य राज भय प्रदान करता है, घोड़े का रोग, कुत्ते का कलह तथा विनाश, गधा एवं ऊँट का हानि, मनुष्य का सन्तति नाश और बकरे का अग्निभय करता है।

2.3.2 गृह के समीप शुभाशुभ वस्तु

सर्व प्रथम हम बात करें तो वास्तुशास्त्र में वेध अर्थात् भवन वेध दरवाजे इत्यादि का वेध नहीं होना चाहिए, साथ ही मुख्य दरवाजे के सामने सीधा कोई रोड नहीं होना चाहिए, मुख्यद्वार के सामने गढ्डे अथवा कीचड़ भी नही होने चाहिए, नाला इत्यादि नहीं होना चाहिए इससे मकान के स्वामी को परेशानियों का सामना करना पड़ता है। मुख्यद्वार के सामने कुआ नहीं होना चाहिए, ठीक इसी स्थान पर स्तम्भ इत्यादि हों तो पत्नी बीमार रहेगी। अगर यदि मन्दिर के पास घर हो तथा उसकी छाया मकान पर आती हो तो भी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। मुख्यद्वार या घर के सामने सीढी नहीं बनवाना चाहिए, द्वार के उपर द्वार होना भी लाभदायक नही होता है। घर के उपर पड़ रही छाया से छाया वेध होता है, परन्तु यह देखना होता है कि घर के उपर किसकी छाया पड़ रही है और किस दिशा से, और किस प्रहर में छाया घर पर आती है, उसी से लाभ हानि का पता लगाया जा सकता है। घर के समीप काटेंदार वृक्ष और दूध वाले वृक्ष हों तो वहाँ दरिद्रता निवास करती है।

जिस घर में नीम, वट, पीपल, आम, केला, तगर, गूलर, कटहल, जटामासी, भिलावा, कदम्ब अथवा खदिर का वृक्ष हो वहाँ दरिद्रता निवास करती है।

शिविर में वन्य वृक्ष, वटवृक्ष, सेमल, इमली, खजूर और काटेंदार वृक्ष निषिद्ध है। वटवृक्ष से चोरभय और सेमल से राजाओं को दुःख होता है। इमली का वृक्ष विद्या बुद्धि का विनाश तथा हमेशा दुःख दायी होता है उससे निश्चय ही प्रजा और धन की हानि होती है खजूर और काटेंदार वृक्ष विद्या और बुद्धि को नष्ट करने वाले होते है।

मकान के पास पीपल का वृक्ष हो तो जहाँ तक उसकी छाया जाती है वहाँ तक अच्छा नहीं करता है। इस दोष की निवृत्ति के लिए वृक्ष के चारों ओर ईंट की दीवार बना देनी चाहिए और प्रतिदिन उसका पूजन करना चाहिए (जल देना और दीपक जलाना आदि) करना चाहिए।

मकान के पूर्व में पीपल ,दक्षिण में पाकड़ पश्चिम में बड़ और उत्तर में गूलर का वृक्ष नहीं लगाना चाहिए पीपल से अग्नि भय, पाकड़ से आयु हानि, बड़ से शस्त्राघात और गूलर से नेत्र रोग होता है। पीपल के देवता सूर्य, पाकड़ के देवता यम, बड़ के देवता वरुण और गूलर के देवता प्रजापति ब्रह्मा होते हैं। अनुपयुक्त स्थान पर लगे हुए वृक्षों को उखाड़ कर उपयुक्त स्थान पर लगा देना चाहिए और उन वृक्षों से सम्बन्धित देवता का पूजन करना चाहिए।

(गोभिल गृह्य सूत्र 4 ।7 ।22 । 26)

घर के विल्कुल सामने मुख्यद्वार पर कोई भी वृक्ष नहीं होना चाहिए यह सभी कार्यों में बाधा उत्पन्न करता है। कौन सा वृक्ष घर के किस दिशा में होना चाहिए इसका विचार अवश्य करना चाहिए।

ग्राह्य वृक्ष – अशोक, महुआ, साखू, असना, चन्दन, देवदारु, शीशम, श्रीपर्णी, तिन्दुकी, कटहल, खदिर, अर्जुन, शाल और शमी इन वृक्षों की लकड़ी शुभ फल देने वाली होती है।

धनदायक शीशम, श्रीपर्णी, तिन्दुकी, के काष्ट को अकेले ही लगावें, अन्य किसी काष्ट के साथ सम्मिलित करने पर ये मंगलकारी नहीं होते। इसी तरह धव ,कटहल ,चिड़, अर्जुन, पद्म वृक्ष भी अन्य काष्टों के साथ सम्मिलित होने पर गृहकार्य के लिए शुभ दायक नहीं होते हैं।

शहतीर, चौखट, दरवाजे – खिडकियां – खूँटी ,फर्नीचर आदि के निर्माण में निषिद्ध (त्याज्य) वृक्षों की लकड़ी काम में नहीं लेनी चाहिए।

शैया – पलंग के निर्माण में श्रीपर्णी धनदायक, आशन रोगनाशक शीशम वृद्धिकारक , सागवान कल्याणकारक, पद्मक आयुप्रद, चन्दन शत्रुनाशक सुखदायक और शिरीष श्रेष्ठ है।

वास्तुशास्त्र के अनुसार भवन के पास मुख्य मार्ग नहीं होना चाहिए अथवा मुख्य मार्ग से घर की कुछ दुरी होना अच्छा माना गया है। चूँकि घर के पास सड़क का होना खुशी और गम दोनों तरह की परिस्थिति उत्पन्न करता है इस बात को वास्तुशास्त्र के अनुसार समझते है।

1) किसी व्यक्ति के घर के सिर्फ एक तरफ अर्थात् पूर्व की ओर सड़क गुजरती हो तथा पश्चिम – उत्तर और दक्षिण दिशा की ओर मार्ग विल्कुल बन्द हो तो वह घर अत्यन्त शुभ फल प्रदान करने वाला होता है ,ऐसा माना जाता है कि मकान में रहने वाला बहुत ही सुखी जीवन यापन करता है तथा उनके उपर माता लक्ष्मी की कृपा बनी रहती है।

2) वास्तु के अनुसार ऐसे जातक जिनका घर ऐसे स्थान हो, जहाँ उत्तर दिशा में सड़क हो, तथा अन्य तीन दिशा, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशा बन्द हो तो यह गृह स्वामी के लिए काफी शुभ संकेत है। वास्तु में ऐसे घर को अत्यन्त उपयोगी माना जाता है।

3) वास्तु शास्त्र के अनुसार जिसका घर ऐसे स्थान पर हो, जहाँ सामने से दक्षिण दिशा की ओर सड़क जाती हो, अर्थात् अन्य दिशा पूर्व –पश्चिम – उत्तर दिशा के ओर का मार्ग बन्द हो तो यह भी उत्तम स्थिति है वास्तुशास्त्र में इसको भी शुभ दायक माना गया है।

4) जिस व्यक्ति के मकान के सामने पश्चिम दिशा की ओर सड़क जाती हो तथा अन्य तीनों दिशाओं, पूर्व – उत्तर –और दक्षिण दिशा में मार्ग बन्द हो तो ऐसे स्थान में मकान बना हुआ घर के मालकिन एवं मालिक के लिए अत्यन्त शुभदायक होता है तथा उनके हाथों से यश होता है।

5) वास्तु के अनुसार जिनके घर के पास उत्तर –दक्षिण में सड़क होती है, पूर्व एवं पश्चिम दिशा बन्द रहता है , अथवा किसी के घर के पूर्व – पश्चिम और दक्षिण में मार्ग हो तो यह परिस्थिति भवन स्वामी के लिए दुःख -दायी होता है वास्तु के अनुसार अच्छा तो यही होगा कि ऐसे स्थान पर भवन निर्माण न करें, अथवा इसकी शान्ति करवानी चाहिए।

2.3.3 मुख्यद्वार विचार

मुख्यद्वार का आशय आप को इस प्रकार समझना चाहिए – चूंकि गृह का प्रमुख प्रवेशद्वार गृह का मुख होता है,

अत : इसका विशेष महत्व होता है इसकी स्थापना का सामान्य नियम यह है कि जिस दिशा में द्वार रखना हो, उस दिशा का 9 भाग करना चाहिए। भूमि अथवा गृह के अन्दर के तरफ मुख करके खड़ा होना चाहिए, दाहिनी ओर से 5 भाग एवं बायीं ओर से 3 भाग छोड़कर शेष में द्वार की स्थापना करनी चाहिए - मुख द्वार की स्थापना में कुछ विचारणीय तथ्य इस प्रकार है –

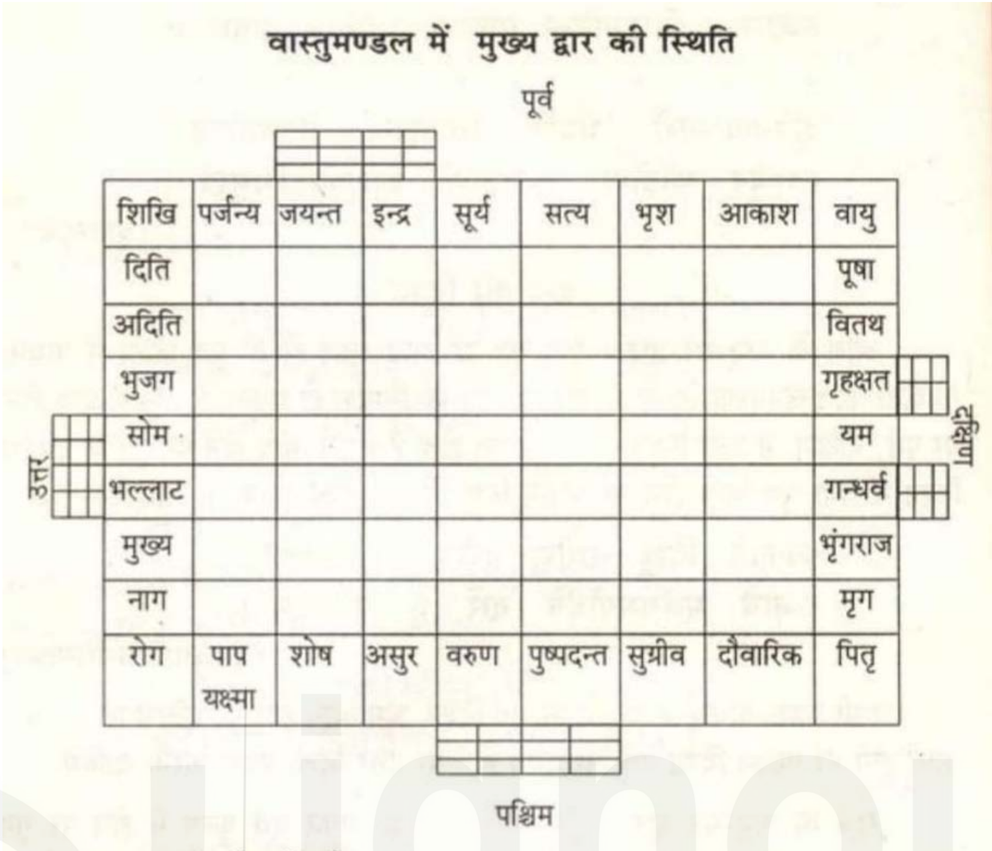
आवासीय गृह के मध्य में प्रमुख द्वार नहीं होना चाहिए। प्रमुख द्वार कोणों में भी नहीं बनाना चाहिए। मुख्यद्वार स्थापित करते समय यह भी ध्यान देना चाहिए कि उससे वास्तुमण्डल की शिरायें एवं वंश (वास्तुमण्डल की रेखायें) तथा वास्तुमण्डल के मर्म स्थल विद्ध न हो, साथ द्वार इस प्रकार निर्मित हो, जिससे गृह की नाली द्वार के मध्य से प्रवाहित हो। गृह के द्वार अपने -आप खुलना और बन्द होना अशुभकर बताया गया है, इससे कुल का नाश सम्भव होता है, द्वार को नियमानुसार ही बनाना चाहिए अधिक बड़ा द्वार राजकुल से भय एवं छोटा द्वार चोरों से भय प्रदान करता है। द्वार की आकृति प्रशस्त होनी चाहिए, मृदंग की आकृति वाला, बीच में बहुत चौड़ा, कुबड़ा द्वार, द्वार पर चौखट का बहुत बोझ होना, भीतर की ओर झुका होना, बाहर की ओर निकला होना, सही दिशा का न होना आदि निर्माण गत दोष है। जिस प्रकार प्रमुख द्वार की सज्जा हो, उस प्रकार अन्य द्वारों की सज्जा नहीं होनी चाहिए। गृह के मुख्यद्वार की सजावट, कलश, श्रीफल, पत्र, सुन्दर स्त्री, तथा अन्य सुन्दर आकृतियों से करनी चाहिए। मुख्यद्वार के सामने सम्मुख जिस देवी – देवता की पीठ, रूद्र एवं सूर्य की प्रतिमा के सम्मुख, वासुदेव का वाम भाग एवं ब्रह्मा का दाहिना भाग नहीं होना चाहिए।

द्वार दिशा – यदि गृह की आय ध्वज हो तो पूर्व दिशा में अथवा गृह करता के इच्छानुसार किसी भी दिशा में द्वार निर्माण किया जा सकता है। सिंह आय होने पर पूर्व –दक्षिण – या उत्तर दिशा में द्वार निर्माण कर सकते हैं। गज आय होने पर पूर्व या दक्षिण दिशा में, तथा वृष आय होने पर पश्चिम दिशा में द्वार स्थापित करना चाहिए।

इसी प्रकार वायस आय होने पर पूर्व दिशा, धूम आय होने पर दक्षिण दिशा, स्वान आय होने पर पश्चिम दिशा, एवं खर आय होने पर उत्तर दिशा ग्रहण करना चाहिए।

सूर्य की राशि के अनुसार द्वार – सूर्य के कर्क – सिंह – मकर एवं कुम्भ में होने पर गृह का द्वार पूर्व मुख या पश्चिम मुख होना चाहिए। मेष –वृष – तथा तुला एवं वृश्चिक के सूर्य में उत्तर एवं दक्षिण में गृह का द्वार रखना चाहिए।

तिथि के अनुसार भवन का द्वार- गृह का निर्माण पूर्णिमा से कृष्ण पक्ष की अष्टमी तक करें तो पूर्व दिशा में गृह का मुख नहीं होना चाहिए, कृष्ण पक्ष की नवमी से चतुर्दशी के मध्य गृहारम्भ होने पर उत्तर मुख गृह नहीं बनाना चाहिए, अमावश्या से शुक्ल पक्ष की अष्टमी तक गृहारम्भ करने पर पश्चिम दिशा में, एवं शुक्ल पक्ष की नवमी से चतुर्दशी पर्यन्त गृहारम्भ करने पर दक्षिण दिशा में गृह का मुख नहीं रखना चाहिए।



1- बायीं ओर से चौथा पद।

2– पूर्व में तीसरा, दक्षिण में छठां, पश्चिम में पाचवां एवं उत्तर में पाचवां पद भी मतान्तर से द्वार के लिए उपयुक्त है।

चन्द्रमा तथा नक्षत्र के अनुसार द्वार निर्णय – कृतिका आदि सात - सात नक्षत्रों को क्रमशः पूर्व आदि दिशाओं में स्थापित करना चाहिए । गृह का नक्षत्र एवं चन्द्रमा द्वार के पास में रहें, इस प्रकार द्वार स्थापना करना चाहिए, गृह एवं चन्द्रमा का नक्षत्र गृह के अग्र एवं पृष्ठ भाग में हो तो गृह एवं गृह स्वामी दोनों नष्ट हो जाते हैं।

वर्ण के अनुसार गृह द्वार - ब्राह्मण राशि (कर्क, मीन, वृश्चिक,) राशि वालों का गृह मुख पूर्व दिशा में, क्षत्रिय राशि (सिंह – मेष – धनु) राशि वालों का गृह का द्वार उत्तर दिशा में होना चाहिए, वैश्य राशि (कन्या –मकर – वृष) राशि वालों का गृह द्वार दक्षिण दिशा में होना चाहिए, एवं शुद्र राशि (मिथुन – कुम्भ – तुला) राशिवालों के भवन का मुख्यद्वार का मुख पश्चिम दिशा में होना चाहिए। मत्स्यपुराण के अनुसार ब्राह्मण राशि वालों का गृह का द्वार उत्तर मुख एवं क्षत्रिय राशि वालों का गृह पूर्वमुख होना चाहिए, एक अन्य मत के अनुसार ब्राह्मण राशि के गृह कर्ता के लिए सभी दिशाओं में अपना गृह मुख रख सकते हैं।

वास्तुपद के अनुसार द्वारफल – वास्तुमण्डल के चारों दिशाओं में कहीं भी गृहकर्ता भवन के मुख्यद्वार का निर्माण करा सकता है, किन्तु वास्तु पदों में स्थित देवों के अनुसार उन द्वारों के परिणाम अलग – अलग कहे गये हैं। गृह स्वामी को वास्तुपद के अनुसार द्वारफल का विचार करने के पश्चात ही मुख्यद्वार स्थापित करना चाहिए। दिशा एवं वास्तुपद के अनुसार द्वारफल इस प्रकार है –

पूर्व द्वार –		वास्तुपद	द्वारफल
वास्तुपद	द्वारफल	सूर्य	क्रोध
शिखी	अग्निभय	सत्य	नृपत्व की प्राप्ति
पर्जन्य	कन्याओं का जन्म	भृश	क्रूरता
जयन्त	अत्यधिक धन	आकाश	चोरी
इन्द्र	राजा के समान		

दक्षिण द्वार		पश्चिम द्वार	
वास्तुपद	द्वारफल	वास्तु पद	द्वारफल
वायु	कम पुत्र	पितृ	पुत्र कष्ट
पूषा	दासता दौवारिक	शत्रु वृद्धि	
वितथ	निम्नता सुग्रीव	धन एवं पुत्र की अप्राप्ति	
गृहछत	भोजन, पान एवं पुत्र वृद्धि	पुष्पदन्त	पुत्र एवं धन की प्राप्ति
यम	भयानकता, अशुभता	वरुण	धन सम्पत्ति
गन्धर्व	कृतघ्नता	असुर	राज भय
भृंगराज	धनहीनता	शोष	धन नाश
मृग	पुत्र एवं धन का नाश	पापयक्ष्मा	रोगभय

॥ उत्तर द्वारफल विचार॥

वास्तुपद	द्वारफल
रोग	वध एवं वन्धन
नाग	शत्रु वृद्धि
मुख्य	पुत्र एवं धन का लाभ
भल्लाट	सभी प्रकार के गुण सम्पत्ति
सोम	पुत्र एवं धन का लाभ
भुजंग	पुत्र से वैर
अदिति	स्त्रियों में दोष
दिति	निर्धनता

इस प्रकार बृहत्संहिता में चारों दिशाओ के द्वारफल वर्णित है। कहीं –कहीं कुछ द्वार फलों के विषय में विद्वानों में मतभेद भी प्राप्त होते है। साथ ही द्वार का प्रमाण आपको इस प्रकार जानना चाहिए। गृह के विस्तार के 11 वें भाग में 70 जोडकर जो संख्या प्राप्त हो उतनी प्रमुख द्वार की उचाई रखनी चाहिए , तथा द्वार की चौड़ाई द्वार की उचाई की आधी होनी चाहिए ।

2.3.4 द्वार-वेध विचार

प्रमुख द्वार के सम्मुख द्वार वेध नही होना चाहिए आप को द्वार वेध का कारण इस प्रकार समझना चाहिए जैसे – मुख्यद्वार के सामने राज मार्ग, कोण, वृक्ष, स्तम्भ, कूप, कीचड़ ,या गन्दी नाली, नहीं होनी चाहिए। देवता तथा ब्रह्म-वेध नहीं होना चाहिए (ब्रह्मा अथवा किसी मनुष्य की प्रतिमा) द्वार सम्मुख नहीं होना चाहिए। किन्तु उपयुक्त कारण द्वार के उचाई की द्विगुणित भूमि छोड़कर स्थित हों तो द्वारवेध का निदान भी हों जाता है अर्थात् द्वारवेध दोष नहीं

लगता है। द्वार वेध निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है –

कूपवेध- मुख्यद्वार के सामने आनेवाली भूमिगत पानी टंकी, बोर, कुआँ, शौच कूप आदि कूप वेध होते हैं और धन हानि का कारण भी बनते है।

स्तम्भवेध – मुख्यद्वार के सामने टेलीफोन, विजली का खम्भा, डीपी आदि होने से उस घर में निवास करने वालों के मध्य में परस्पर विचारों में मतभेद इत्यादि होता है। जो उनके विकास में बाधक साबित होता है।

स्वर वेध – द्वार के खुलने या बन्द होने में आने वाली आवाज स्वर वेध कहलाता है जिसके कारण आकस्मिक अप्रिय घटना का संकेत प्राप्त होता है इसको ठीक रखना चाहिए।

ब्रह्मवेध – मुख्यद्वार के सामने कोई तेलघानी, चक्की, धार तेज करनेवाली मसीन, आदि लगी हो तो ब्रह्म वेध कहलाती है, इसके कारण जीवन अस्थिर व निवासियों में मनमुटाव होता है।

कीलवेध – मुख्यद्वार के सामने गाय – भैस – कुत्ते आदि को बाँधने के लिए खूंटी को कील वेध समझना चाहिए, यह भी निवासियों के विकास में बाधक होता है।

वास्तु वेध – द्वार के सामने बना गोदाम ,स्टोर रूम, गैराज, आउट हॉउस, आदि वास्तु वेध कहलाता है, जिसके करण सम्पत्ति का नाश होता है, मुख्यद्वार के समक्ष कीचड़, पथर इत्यादि का ढेर निवासियों के विकास में वाधक होता है। मुख्यद्वार के सामने लीकेज आदि से एकत्रित पानी जमा रहने से बच्चों के लिए हानिकारक होता है, मुख्यद्वार के सामने कोई अन्य निर्माण का कोना अथवा दूसरे दरवाजे का हिस्सा नहीं होना चाहिए, मुख्यद्वार के ठीक सामने दूसरा उससे बड़ा मुख्यद्वार जिसमें पहला मुख्यद्वार पूरा अन्दर आ जाता हो तो छोटे मुख्यद्वार वाले के भवन में समाहित हो जाता हो तो इस स्थिति में छोटे मुख्यद्वार वाला भवन वहाँ के निवासियों के लिए अमंगलकारी रहता है।

भवनवेध - मकान से ऊँची चारदीवारी होना भवन वेध कहलाता है, जेलों के अतिरिक्त यह अक्सर नहीं होता है यह भी आर्थिक विकास में वाधक होता है। दो मकानों का संयुक्त प्रवेशद्वार नहीं होना चाहिए यह स्थिति एक मकान के लिए अमंगलकारी होता है, मुख्यद्वार के सामने कोई पुराना खण्डहर आदि उस मकान में निवास करने वालों के लिए दैनिक हानि और ब्यापार – धन्धे बन्द होने के सूचक है।

छाया वेध – किसी वृक्ष, मन्दिर, ध्वजा, पहाड़ी आदि की छाया प्रात: 10 बजे से सायं 3 बजे के मध्य मकान पर पड़ने को छाया वेध कहते हैं। यह निम्न पांच तरह की हों सकती है।

मन्दिर छाया वेध – भवन पर पड़ रही मन्दिर की छाया शान्ति की प्रतिरोधक व ब्यापार व विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है बच्चों के विवाह में देर व वंशवृद्धि पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

ध्वजछायावेध - ध्वज, स्तूप, समाधि या खम्भे की छाया के कारण निवासियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

वृक्षछाया वेध – भवन पर पड़ने वाली वृक्ष की छाया निवासियों के विकास को प्रभावित करती है।

पर्वत छाया वेध – मकान के पूर्व में पड़ने वाली पर्वत की छाया निवासियों के जीवन में प्रतिकूलता के साथ ख्याति को भी प्रभवित करता है।

भवन कूप छाया वेध – मकान के कुएं या बोरिंग पर पड़ रही भवन की छया धन – हानि की द्योतक है।

भूमि की आकृति के सदृश गृह की प्रशस्त आकृति आयताकार, चौकोर, भद्रासन अथवा वृताकार होती है। इसके अतिरिक्त शेष आकृतियाँ गृह निर्माण में वर्जित है। प्रशस्त गृह में सूर्य वेध एवं चन्द्र वेध भी विचारणीय तथ्य है। पूर्व पश्चिम दीर्घ भवन सूर्य वेधी तथा उत्तर – दक्षिण गृह चन्द्र वेधी होते है। चन्द्र वेध से युक्त गृहों को आवास की दृष्टि से उत्तम माना गया है।

जिस भवन में आगे – पीछे की दीवार में बनाये गये द्वार विद्ध (आमने –सामने) हों तो वह भिन्न वास्तु कहलाता है। वह गृह स्वामी के लिए शुभ कारक नहीं होता है, तथा उस घर में स्थापित वस्तु की वृद्धि नही होती है।

2.4 सारांश

वास्तुशास्त्र की अवधारणा मुख्य रूप से गृह निर्माण के कार्य आरम्भ करने से पूर्व यदि इसके नियमों का अच्छे तरह से पालन किया जाय तो यह गृह स्वामी के लिए हितकारक होता है एक अच्छे वास्तु का निर्माण भवन स्वामी को सुख –समाधान तथा शान्ति प्रदान करता है। उपयुक्त वास्तु का निर्माण करने से पूर्व मुख्य रूप से इन बातों का ध्यान रखना चाहिए। उपयुक्त दिशा का निर्धारण, उपयुक्त भूमि का चयन, उपयुक्त दिशाओं में रचना विन्यास का क्रम, साथ ही वास्तु का आकार एवं आयु तथा मजबूती आदि। जब गृह (अथवा मकान) का मानव जीवन से इतना महत्वपूर्ण स्थान है तो उसके स्वामी अथवा निवासी के लिए सुख समाधान दायक तो होना ही चाहिए साथ ही निर्दोष भी रहना चाहिए यदि वास्तु (गृह अथवा भवन) दोष युक्त होगी तो उससे निवासी को विपरीत फल की प्राप्ति होती है, तथा वह व्याकुल हो उठता है जीवन के हर क्षेत्र में नियम पालन की आवश्यकता होती है, जब भी नियमों की मर्यादा लांघी जाती है तो उसके दुष्परिणाम अवश्य ही देखने को मिलते है शासन के नियम भंग होने पर शासन दंडित करता है प्रकृति विरुद्ध कार्य करने पर प्रकृति दंडित किए बिना नहीं रहती, ठीक इसी भांति वास्तुशास्त्र के अवधारणा के विपरीत यदि वास्तु निर्माण किया जाता है तो उससे भी अनेकानेक विपदाओं का सामना करना पड़ता है।वर्तमान युग में मनुष्य वास्तुशास्त्र से सामान्यतया अनभिज्ञ है। शास्त्र के नियमों को ध्यान में रखे बिना जो भव्य विशाल इमारत बनाई जाती है, उनके उपयोग कर्ता अनजाने में ही कष्ट पाकर खिन्न हो जाते हैं। जिसप्रकार अच्छे भोजन को कुदृष्टि से देखने पर उसके स्वाद में परिवर्तन होकर विषाक्त हो जाने के कारण त्याज्य है उसी भांति दोषपूर्ण नियम पूर्वक निर्मित वास्तु विशाल एवं आकर्षक होने पर भी अंततः दुखदायक ही होता है अतएव यह आवश्यक है कि निर्माण की जाने वाली वास्तु, वास्तुशास्त्र के नियमों को ध्यान में रखकर बनाई जाय तो बहुत ही उत्तम होगा। यही वास्तुशास्त्र की मूल अवधारणा है मुझे आशा है की इस पाठ के अध्ययनोपरांत आप को वास्तु के नियमों के अनुसार ही भवन निर्माण करायेंगे तथा जन कल्याण करेंगे।

2.5 शब्दावली

आकर्षक = आकर्षित करने वाला,

वेध	=	वाधा, अवरोध
शल्यानयन	=	भूमि से हड्डी निकलने की विधि
प्लव	=	ढलान
राजदण्ड	=	राजा के द्वारा दण्डित होना (प्रशासनिक समस्या)
सिंहमुखी	=	एसी भूमि जो की आगे चौड़ाई में अधिक हो
गोमुखी	=	एसी भूमि जो आगे पतला पीछे चौड़ाई हो
मुरझाना	=	मलिन होना
भूपति	=	जमीन का मालिक
सर्वोन्नत	=	सबसे ऊँची भूमि
सेवक	=	दास
उच्चाटन	=	पागलपन
शल्य	=	हड्डी
रखरखाव	=	देखभाल
जन्मना	=	जन्म से
संस्कारात	=	संस्कार से
वेदपाठी	=	वेद पढने वाला
स्ववर्गं	=	अपने वर्ग को
द्विगुणी	=	दोगुना
परवर्गेण	=	दूसरे के वर्ग में
योजयेत	=	जोड़ना चाहिए
अष्टभिस्तु	=	आठ से
हरेद्भागम	=	भाग देना
योऽधिको	=	जिसकी काकिणी अधिक हो (अंक अधिक हो) वह हारता है तथा जिसकी काकिणीह का अंक कम हो वह जीतता है।

2.6 उपयोगी पुस्तकें

1. गृहवास्तुप्रदीप, डॉ. (श्रीमती) शैलजा पाण्डेय, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वृहद्वास्तुमाला, सम्पादक – डॉ.ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, डॉ. रवि शर्मा, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन
3. वस्तुसारसंग्रह, लेखक – आचर्य श्री कमलाकान्त शुक्ल, सम्पूर्णा नन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी
4. भवनभास्कर, लेखक – राजेन्द्र कुमार धवन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी संबत 2057, गीता प्रकाशन गोरखपुर

5. वास्तुचिन्तामणि, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बड़जात्या, श्री प्रज्ञाश्रमण दिगम्बर जैन संस्कृति न्यास, ज्योति निलय गरुड़ खाम्ब चौक इतवारी नागपुर
6. शिल्पदीपक, सम्पादक – डॉ. श्री कृष्ण जुगनु, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी

2.7 बोध प्रश्न

1. वास्तु की अवधारणा पर अपना मत प्रदर्शित कीजिए ?
2. वास्तुशास्त्र के धार्मिक महत्व पर प्रकाश डालिए ?
3. ग्रामवास विचार कीजिए ?
4. वर्णो के अनुसार भूमि लक्षण बताइये ?
5. शल्यानयन विचार लिखिए ?
6. भवन में मुख्यद्वार विचार कीजिए ?

इकाई 3 वास्तु के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप:

- वास्तु के प्रकार तथा बरामदे की स्थिति के अनुसार ध्रुवादि 16 वास्तु भेद के बारे में बतायेंगे ।
- शांतन आदि 64 गृह भेदों को पूर्णतया बतायेंगे।
- सूर्यादि 8 गृह भेदों को भी जानेंगे।
- एकशाल – द्विशाल –त्रिशाल एवं चतुरशाल गृहों (घरों) के बारे में बतायेंगे।
- एकशाल आदि वास्तु योग से निर्मित गृहों के शुभाशुभ फल की विस्तृत विवेचना करेंगे।
- वास्तु निर्माण की आयोजना बनाने में स्वयं तथा दूसरों की मदद करेंगे।
- भूखण्डों का वर्गीकरण करते हुए इनके शुभाशुभ फल का निर्देश करेंगे।
- आधुनिक वास्तुशास्त्र के अनुसार दिशाओं तथा भूखण्डों का अवलोकन करके लोगों को अवगत करायेंगे।

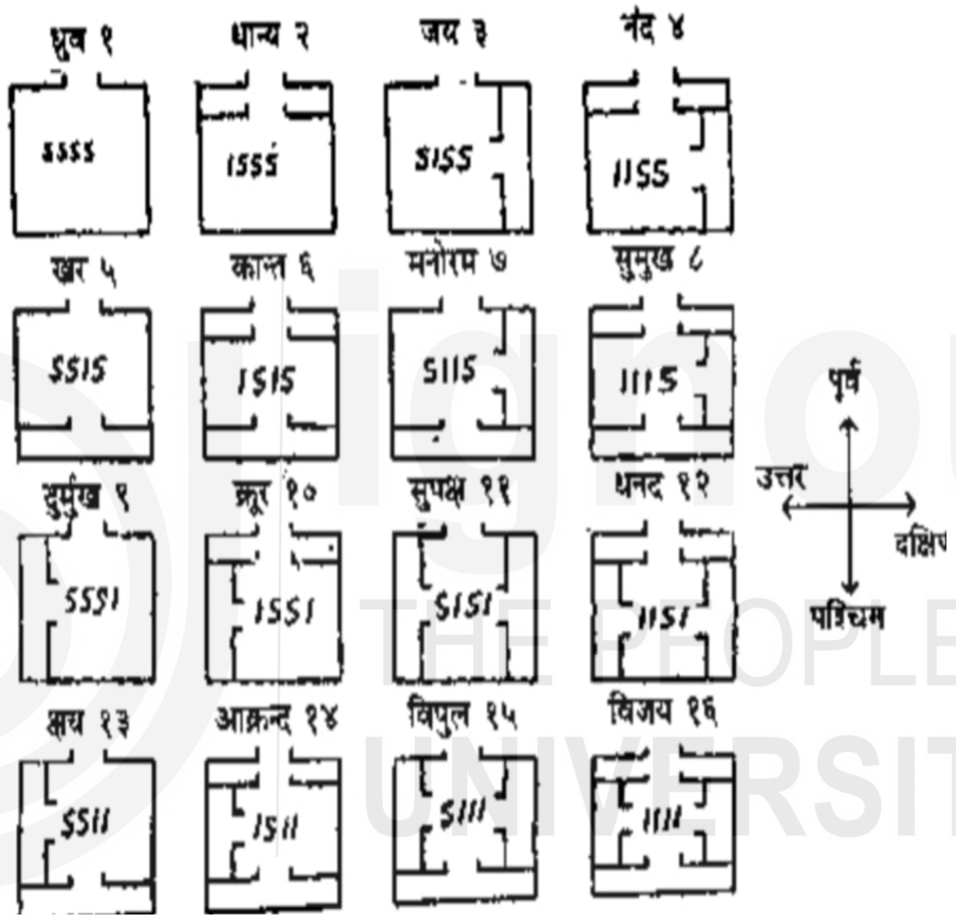
3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई संस्कृत विभाग, मानविकी विद्यापीठ, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में संचालित वास्तुशास्त्र में स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के अन्तर्गत, वास्तुशास्त्र के स्वरूप एवं इतिहास नामक पाठ्यक्रम की खण्ड 1 "वास्तुशास्त्र का स्वरूप" नामक उपशीर्षक के अन्तर्गत यह तीसरी इकाई है। इस इकाई का नाम है "वास्तु के प्रकार" इस विषय के अन्तर्गत पञ्च महाभूत का जहाँ – जहाँ सम्बन्ध है उन सभी वस्तुओं से मनुष्य जुड़ा हुआ है तथा मनुष्य जहाँ – जहाँ निवास करता है उसे वास्तु ही कहते हैं, इसके भेद अलग – अलग हैं – जैसे – भूमि, देवालय, यान, शयन, इन सभी में मुख्य वास्तु भूमि ही है क्योंकि भवन एवं इसके निर्माण की सभी वस्तु भूमि से ही उत्पन्न होते हैं एवं भूमि पर ही निर्माण कार्य सम्पन्न होता है इसलिए विज्ञजन इसे वास्तु की संज्ञा से अनुगृहीत किया है। इसलिए मूलवास्तु पर विचार किया जाय तो गृह – भवन – महल के लिए भूमि परिक्षण अनिवार्य होता है जिसके अन्तर्गत (भूमि का वर्ण, गन्ध, रस, एवं स्पर्श) इत्यादि का विचार करके दिशा इत्यादि का निर्णय करके, भूमि के आकृति (बनावट) इत्यादि शब्द का विचार करके जैसे कभी – कभी आप मन्दिर में बैठते है तो मन कितना आनन्दित हो जाता है, तथा वायु के स्पर्श मात्र से भी सुखानुभूति प्रतीत होती है इन सभी विषयों का विचार करके भवन निर्माण करना चाहिए। चूँकि वास्तु विवेचन का शास्त्र है। "वास्तु" शब्द संस्कृत का शब्द है इसका उल्लेख संस्कृत के हिन्दी कोष (रचयिता – वामन शिवराम आप्टे) में इस प्रकार किया है, पुलिंग – नपुंसक लिंग के वस् धातु में तुण प्रत्यय लगाकर वास्तु शब्द का निर्माण हुआ है। इसका अर्थ है – घर बनाने की जगह, भवन –भूखण्ड –जगह घर – आवास, निवास भूमि। वास्तु शब्द का अर्थ जैन ज्ञानकोष (मराठी) में इस प्रकार किया गया है – वास्तु का अर्थ घर से भी है, तथा ग्राम या नगर से भी है। यहां पर घर को तीन भागों में विभाजित किया गया है, 1 – खान (इसका आशय आप को भूमि के निचे बनाया गया तलघर समझना चाहिए), 2 – उत्छित (भूमि के उपर बनाया हुआ घर), 3 – खातोच्छित (तलघर सहित दुमंजिला घर) अतएव यह स्पष्ट है कि वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित विषयों में गृह निर्माण एवं उसकी भूमि तथा आवास गृहों से सम्बन्धित उक्त शीर्षक "वास्तु के प्रकार को समझना चाहिए। चूँकि भूमि चयन तथा भूमि परीक्षण के बारे में पूर्व के पाठ में बताया जा चुका है इसलिए इस पाठ में आप को वास्तु प्रकार का आशय स्तम्भ – कक्ष – द्वार –आदि में विविधता करके 16384 प्रकार के भवन बनाए जा सकते हैं, इस प्रकार के घर यद्यपि वर्तमान युग में बनाना कम सम्भव है फिर भी आपलोगों के विशेष जानकारी के लिए ध्रुवादि 16 तथा शांतवन आदि 64 गृह भेदों के नाम एवं इन भवनों के बारे में तथा सूर्यादि 8 गृहों के बारे में उल्लिखित किया गया है साथ ही गृह आयोजना, आकार तथा दिशाओं के अनुसार भवन निर्माण के बारे में आपलोग जानकर समाज को अवगत कराते हुए वास्तु के महत्व को बतायेंगे इसी आशय के साथ यह पाठ प्रस्तुत है।

3.2 वास्तु के प्रकार

वास्तुशास्त्र के अनुसार शाला ,अलिन्द, गुंजारी, दीवार, पट्टे, स्तम्भ, झरोखा, एवं मण्डप आदि के भेद से 16384 प्रकार के घर बनते हैं। परन्तु इन सबके नाम वर्तमान में नहीं मिलते हैं, किन्तु ध्रुवादि एवं शांतनादि गृहों के नाम शास्त्रों में उपलब्ध है।

ध्रुवादि सोलह भेदों का वर्णन इस प्रकार है, जिस प्रकार चार गुरु अक्षर वाले छन्द के सोलह भेद होते है उसी प्रकार घर के प्रदक्षिणा क्रम से लघुरूप शाला द्वारा ध्रुव –धान्यादि सोलह घर बनते हैं। (I) के स्थान पर शाला तथा गुरु (S) के स्थान पर दीवार समझना चाहिए। जैसे – प्रथम चारों ही अक्षर गुरु है तो घर के चारों ही दिशा में दीवार है अर्थात् किसी भी दिशा में कोई शाला नहीं है। प्रस्तार के दूसरे भेद में प्रथम लघु है। यहाँ दूसरा धान्य नाम के घर की पूर्व दिशा में शाला समझनी चाहिए। तीसरे भेद में दूसरा लघु है यहां तीसरे जय नाम के घर के दक्षिण में शाला है। चौथे भेद में पूर्व और दक्षिण में एक –एक शाला है। उदाहरण के लिए 16 घरों के नाम सहित चित्र प्रस्तुत है –



आप के समक्ष 16 गृहों को सचित्र दिशा ज्ञान सहित स्थापित किया गया है, अब इसके फलों के बारे में जानना आवश्यक है। तथा इन गृहों में कमरा किस दिशा में होता है एवं दीवार किस तरफ होगा तथा इन घरों में निवास का फल क्या होगा इन सभी बातों को आप अधोलिखि चक्र के माध्यम से आसानी से जानकारी प्राप्त करेंगे -

क्रम संख्या	नाम	स्थिति	फल
1	ध्रुव	चारों ओर दीवार कमरा नहीं	जय कारक
2	धान्य	तीनों ओर दीवार पूर्व में कमरा	धान्य वृद्धि कारक
3	जय	तीनों ओर दीवार दक्षिण में कमरा	शत्रु जय कारक
4	नन्द	दो ओर दीवार पूर्व और दक्षिण में कमरा	सर्व समवृद्धिकारक
5	खर	तीनों ओर दीवार, पश्चिम में कमरा	क्लेश दायक

6	कान्त	दो ओर दीवार, पूर्व एवं पश्चिम में कमरा	अति लाभदायक, धन ,आयु ,आरोग्य, ऐश्वर्य की वृद्धि
7	मनोरम	दो ओर दीवार, दक्षिण व पश्चिम में कमरा	मन में संतोष, आनन्द
8	सुमुख	एक ओर दीवार पूर्व, पश्चिम ,दक्षिण में कमरा	राजसम्मान की प्राप्ति
9	दुर्मुख	तीन ओर दीवार उत्तर की ओर कमरा	सदा दुखदायक, क्लेश
10	क्रूर	दो ओर दीवार पूर्व व उत्तर की ओर कमरा	भय, व्याधि
11	सुपक्ष	दो ओर दीवार उत्तर व दक्षिण की ओर कमरा	परिवार बृद्धि
12	धनद	एक ओर दीवार पूर्व ,उत्तर, दक्षिण की ओर कमरा	सोना, चांदी, रत्न,वाहन आदि की वृद्धि
13	क्षय	दो ओर दीवार उत्तर, पश्चिम की ओर कमरा	धन, धान्य, सुख की हानि
14	आक्रन्द	एक ओर दीवार, पूर्व ,उत्तर ,पश्चिम की ओर कमरा	परिवार जनों की मृत्यु
15	विपुल	एक ओर दीवार ,उत्तर पश्चिम, दक्षिण की ओर कमरा	आरोग्य कीर्तिदायक
16	विजय	उत्तर, दक्षिण ,पूर्व, पश्चिम, चारों ओर कमरे	सुख सम्पत्ति दायक

चूँकि ध्रुव आदि 16 गृहों के बारे में पूर्णतया आप सब समझ गये अब आइए शांतवन आदि 64 गृहों के नाम को जानते हैं –

1 – शांतवन	17 – बन्दुध	33 – श्रीधर	49 – विलाश
2 – शान्तिद	18 – पुत्रद	34 – सर्वकामद	50 – बहुनिवास
3 – वर्धमान	19 – सर्वांग	35 - पुष्टिद	51 – पुष्टिद
4 – कुक्कुट	20 – कालचक्र	36 – किर्तिनाशक	52 – क्रोधसन्निभ
5 – स्वस्तिक	21 – त्रिपुर	37 – श्रृंगार	53 – महन्त
6 – हंश	22 – सुन्दर	38 – श्रीवाश	54 – महित
7 – वर्धन	23 – नील	39 – श्रीशोभ	55 – दुःख
8 – कर्बुर	24 – कुटिल	40 – कीर्तिशोभन	56- कुलच्छेद
9 – शान्त	25 – शाश्वत	41 – युग्मशिखर	57- प्रताप वर्धन
10 – हर्षन	26 – शास्त्रद	42 – बहुलाभ	58 –दिब्य
11 – विपुल	27 – शील	43 – लक्ष्मी निवास	59 – बहुदुख
12 – कराल	28 – कोटर	44 – कुपित	60 – कन्ठ च्छेदन
13 – वित्त	29 – सौम्य	45 – उद्योत	61 –जंगम
14 – चित्र	30 – सुभद्र	46 – बहुतेज	62 –सिंघनाद
15 – धन	31 – भद्रमान	47 – सुतेज	63 – हस्तिज
16 – कालदण्ड	32 – क्रूर	48 – कलहावह	64 – कण्ठक

द्विशाल घर के लक्षण – द्विशाल घर की भूमि की लम्बाई व चौड़ाई के तीन भाग करने से नौ भाग हो जाते है। इनमें से मध्यभाग को छोड़कर शेष आठ भागों में से दो भागों में शाला बनाना चाहिए। शेष भाग की भूमि खाली रखनी चाहिए इसी प्रकार चार दिशाओं में चार प्रकार की शाला होती है। इस प्रकार अनेक तरह के घर बनते हैं जिसका विशेष उल्लेख समरांगण एवं राजबल्लभ आदि ग्रन्थों में मिलता है। एवं शांतवन आदि गृहों के बारे में यहाँ पर केवल नाम मात्र का ही उल्लेख किया चूँकि विस्तार भय के कारण इनके फल तथा लक्षणों के बारे में बताना सम्भव नहीं है फिर कुछ मुख्य गृहों का फल आप को इस प्रकार समझना चाहिए ,शाश्वत घर सभी मनुष्यों के लिए शान्ति दायक होता है। युग्मश्रीधर घर बहुत मंगलदायक धन से परिपूर्ण करता है ,इसी प्रकार महान्त घर में निवास करने वाला भी धनवान होता है, जंगम घर भी अच्छा यश फैलाने वाला होता है, बहुलाभ घर भी विपुल सम्पदा को देने वाला होता है, लक्ष्मीनिवास घर में निरन्तर लक्ष्मी बनी रहती है, कुपित घर में कलह ,अनबन वाद – विवाद बना रहता है। बहुतेज घर में भवन स्वामी की उन्नति होती है, सुतेज घर दक्षिणाभिमुख होने के वावजूद भी सामान्य अच्छा फल ही देता है, कलाहावह घर में निरन्तर कलह बनी रहती है । गृहस्थों को गोल घर नहीं बनाना चाहिए किन्तु राजा लोग गोल मकान बना सकते हैं। सामान्य लोगों के लिए गोल या वर्तुलाकार मकान निर्माण से अस्थिरता एवं अर्थसंकट से त्रस्त रहते हैं इस लिए ऐसा गृह नहीं बनवाना चाहिए। और भी अधोलित चक्र से आप फल को समझ सकते हैं -

दो दिशाओं में शाला	शाला मुख विचार	नाम
दक्षिण व आग्नेय	उत्तर	करिणी (हस्तिनी) शाला
नैऋत्य व पश्चिम	पूर्व	महिषी शाला
वायब्य व उत्तर	दक्षिण	गावीशाला
पूर्व व ईशान	पश्चिम	छागी शाला
घर का नाम	**शालाओं के नाम**	**फल**
सिद्धार्थ	कारिणी व महिषी	शुभ
यम सूर्य	गावी व महिषी	मृत्यु
दण्ड	छागी व गावी	धन हानि
काच	छागी व हस्तिनी	हानिकारक
चुल्हि	गावी व हस्तिनी	अशुभ

घरों के अन्य प्रकार के बारे में इस प्रकार समझना चाहिए कि उक्त 64 प्रकार के गृहों के अतिरिक्त सूर्यादि आठ प्रकार के घर भी होते हैं जो निम्नलिखित हैं, सूर्य – वासव – वीर्य – काल – सुब्रत – बुद्धि –प्रासाद – द्विवेध है।

1– सूर्य – द्विशाल घर के आगे तीन अलिन्द हों तथा बायीं ओर एक-एक शाला स्तम्भ सहित हो, यह मकान स्वामी को सूर्य के समान बृद्धि कारक बनाता है।

2– वासव – द्विशाल घर के आगे चार अलिन्द हो। बायीं तथा दाहिनी तरफ एक – एक शाला हो। यह मकान परिवार को युग –युगों तक स्थाई बनाता ।

3– वीर्य – जिस द्विशाल घर के आगे तीन अलिन्द हों एवं पीछे की तरफ दो अलिन्द हों वायीं तथा दायीं तरफ एक – एक अलिन्द हो तो इस प्रकार का घर सभी वर्णो के लिए हितकारी होता है।

4– काल – द्विशाल घर के आगे – पीछे दो –दो अलिन्द हों तथा दायीं ओर एक अलिन्द हो तो इस प्रकार का घर परिवार के लिए अकाल मृत्यु तथा दुर्भिक्ष का कारण बनता है इस लिए अशुभ समझना चाहिए।

5– सुब्रत – द्विशाल घर के चारों तरफ दो –दो अलिन्द हों तो इस प्रकार का घर सभी प्रकार के सिद्धि को प्रदान करने वाला होता है।

6– बुद्धि – द्विशाल घर के आगे तीन अलिन्द हों, बायीं और दाहिनी तरफ दो अलिन्द हों, पीछे की तरफ एक अलिन्द हों तो इस प्रकार का घर परिवार के लिए बुद्धि वर्धक होता है।

7– प्रासाद - द्विशाल घर के आगे तीन अलिन्द तथा तीनों दिशाओं में दो –दो अलिन्द हों तो परिवार के लिए शुभ फल दायक होता है।

8– द्विवेध – घर के आगे तीन अलिन्द हों तथा पीछे की तरफ तीन अलिन्द हों तो ऐसा घर सामान्यतया अशुभ ही समझना चाहिए। चूँकि वास्तुशास्त्र के अनुसार यह उल्लेख मिलता है कि त्रैलोक्य सुन्दर आदि चौसठ घर राजाओं के लिए श्रेष्ठ एवं उपयुक्त होते है। अब यहां पर एकशाल आदि गृहों को समझना आवश्यक है इसलिए इसको समझते हैं–

एकशाल गृह का कमरा दक्षिण भाग में बनता है और उसका द्वार उत्तर की ओर होता है, यदि एकशाल गृह की चारों दिशाओं में द्वार हो तो उस घर को" विश्वतो मुख" कहते हैं, ऐसा घर सभी मनोरथों को सिद्धि करने वाला होता है।

यदि पश्चिम में कोई द्वार न हो (अन्य तीन दिशाओं में द्वार हों) तो उस घर को" विजय" कहते हैं ऐसा घर सर्वदा धन –सम्पत्ति तथा पुत्र – पौत्र की वृद्धि करने वाला होता है। यदि उत्तर में कोई द्वार न हों उस घर को "सुकर" कहते हैं। ऐसे घर में सूकरों से अथवा राजा से भय होता है। यदि पूर्व में तो उस घर को "व्याघ्रपद" कहते हैं ऐसे घर में पशु तथा चोर से भय होता है। यदि दक्षिण में कोई द्वार न हो तो उस घर को शेखर कहते हैं, ऐसा घर सब वस्तुओं तथा रत्नों को देने वाला होता है।

द्विशाल गृह – यदि पश्चिम या दक्षिण दिशाओं में दो कमरे हों तो उस घर को "सिद्धार्थ "कहते हैं। ऐसा घर धन-धान्य देने वाला, क्षेम की वृद्धि करने वाला तथा पुत्र प्रद होता है। यदि पश्चिम और उत्तर दिशाओं में दो कमरे हों तो उस घर को "यमसूर्य "कहते हैं, ऐसा घर गृह स्वामी के लिए मृत्युदायक, राजा, शत्रु , चोर और अग्नि से भय होता है।यदि उत्तर और पूर्व दिशा में दो कमरे हों उस घर को दण्ड कहते हैं, ऐसा घर अकाल मृत्यु तथा शत्रुओं से भय प्रदान करने वाला होता है। यदि पूर्व और दक्षिण दिशा में दो कमरे हो तो उस घर को "वात "कहते हैं, ऐसा घर सदा कलह करने वाला, सर्प ,चोर तथा शस्त्र से भय देने वाला, एवं पराजय की स्थिति उत्पन्न करने वाला होता है। यदि पूर्व व पश्चिम दिशाओं में दो कमरे हों तो उस घर को "चुल्ली" कहते हैं, एसा घर धन का नाश करने वाला, मृत्यु देने वाला, स्त्रियों को विधवा करने वाला तथा अनेक भय देने वाला होता है। यदि दक्षिण और उत्तर दिशाओं में दो कमरे हों तो उस घर को "काच" कहते हैं, ऐसा घर बन्धुओं से विरोध करने वाला तथा भयदायक होता है।

त्रिशाल गृह – यदि मकान के भीतर उत्तर दिशा में कोई कमरा न हो (शेष तीन दिशाओं में तीन कमरे हों) तो उस घर को "हिरण्य" या "धान्यक" कहते हैं, ऐसा घर क्षेमकारक, वृद्धिकारक

तथा अनेक पुत्र देने वाला होता है। यदि पूर्व दिशा में कोई कमरा न हो तो उस घर को "सुक्षेत्र" कहते हैं, ऐसा घर धन, पुत्र, यश और आयु को देने वाला तथा शोक मोह को नाश करने वाला होता है। यदि दक्षिण दिशा में कोई कमरा न हो तो उस घर को विशाल कहते हैं। ऐसा घर धन नाश एवं रोगप्रद होता है। यदि पश्चिम दिशा में कोई कमरा न हो तो उस घर को "पक्षघ्न" कहते हैं, यह भी अशुभ ही होता है। हैं। ऐसा घर राजा और देवता (मन्दिर) के लिए शुभ होता है अन्य के लिए नहीं। यदि पश्चिम दिशा में द्वार न हो (शेष तीन दिशाओं में द्वार न हों) तो उस घर को "नन्द्यावर्त "कहते हैं। यदि दक्षिण दिशा में द्वार न हों तो उस घर को "वर्धमान" कहते हैं। यदि पूर्व दिशा में द्वार न हों उस घर को "स्वस्तिक" कहते हैं। यदि उत्तर दिशा में द्वार न हों तो उस घर को "रुचक" कहते हैं।

नन्द्यावर्त तथा वर्धमान घर सबके लिए शुभ है। स्वस्तिक तथा रुचक मध्यम फल देने वाला होता है।

इसके अतिरिक्त मन्दिर के भवन 20 प्रकार के होते है जिनका नाम इस प्रकार जानना चाहिए – 1 . मेरु 2 . मंदर 3 . कैलाश 4. विमनाच्छद 5 . नन्दन 6 . समुद्र 7. पद्म 8 . गरुड़ 9 . नन्दिवर्धन 10 . कुन्जर 11. गुहराज 12. वृष 13. हंश 14. सर्वतोभद्र 15. घट 16. सिंह 17. वृत्त 18. चतुष्कोण 19. षोडशाश्री 20. अष्टाश्री ये 20 प्रकार के देवालय होते है।इन मन्दिर गृहों के निर्माण सम्बन्धित अधिक जाकारी के लिए वृहद्वास्तुमाला के पृष्ठ संख्या 185 पर देख सकते हैं।

3.2.1 वास्तु निर्माण की आयोजना

इसमें मुख्य बात पर विचार यह है कि घर के किसी भी अंश को आगे नहीं बढ़ाना चाहिए। यदि बढ़ाना हो तो सभी दिशाओं में समान रूप से बढ़ाना चाहिए। क्योंकि कहा भी गया है कि घर को पूर्व दिशा में बढ़ाने पर मित्रों से वैर होता है, दक्षिण दिशा में बढ़ाने पर मृत्यु का तथा शत्रु का भय, पश्चिम दिशा में बढ़ाने पर धन का नाश होता है, उत्तर दिशा में बढ़ाने पर मानसिक संताप की वृद्धि होती है, आग्नेय दिशा में बढ़ाने पर अग्नि से भय होता है, नैऋत्य दिशा में बढ़ाने पर अग्नि से भय होता है, नैऋत्य दिशा में बढ़ाने पर शिशुओं का नाश होता है, वायव्य दिशा में बढ़ाने पर

वात – व्याधि उत्पन्न होती है, ईशान दिशा में बढ़ाने पर अन्न की हानि होती है।

यदि घर के किसी अंश को आगे बढ़ाना बहुत आवश्यक हो तो पूर्व या उत्तर की तरफ बढ़ा सकते हैं, क्योंकि इस दिशा में थोड़ा कम दोष है। वास्तु का निर्माण निश्चित करने के उपरान्त यह विचार करना आवश्यक है कि कहां – कहां पर क्या निर्माण करना आवश्यक है किस दिशा में कौन सा कमरा होना चाहिए इस बात को अधोलिखित चक्र से समझना चाहिए –

प्रथम आयोजना -

	वायव्य	उत्तर	ईशान	
	धन अन्न संग्रह	जल स्थान	देव स्थान	
पश्चिम	भोजनालय		श्री गृह	पूर्व
	शस्त्र गृह प्रसूति गृह	शयन कक्ष	रसोई	
नैऋत्य		पश्चिम		आग्नेय

अन्य मतों के अनुसार इन सभी घरों के मूल द्वार की अपेक्षा से पूर्व आदि दिशा का विभाग करना चाहिए अर्थात् जिस दिशा में घर का मुख्यद्वार हो उसे पूर्व मानकर गृह निर्माण करना चाहिए – द्वितीय आयोजना वस्तुसार संग्रह के अनुसार –

वायव्य		उत्तर		ईशान
	आयुधकक्ष	धनसंग्रह	धर्मस्थान	
पश्चिम	भोजनगृह		सिंह द्वार	पूर्व
	नीहारगृह (शौचालय)	शायनकक्ष	रसोई	
नैऋत्य		दक्षिण		आग्नेय

यहां पर इस बात को ध्यान देना चाहिए कि मध्य में स्थान में कोई वजनी वस्तु अथवा उच्छिष्ट वस्तु रखने से गृह स्वामी को क्लेश होता है। तथा ब्रह्म स्थान एवं मर्म स्थान में कोई निर्माण नहीं करना चाहिए – तृतीय आयोजना विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार –

वायव्य			उत्तर			ईशान
	अन्नगृह	रतिगृह	धन धान्य संग्रह	औषधगृह	देवगृह	
	शोकगृह				सर्वधाम	
पश्चिम	भोजन शाला				स्नानागार	पूर्व
	विद्याभ्यास गृह				बधि मथन स्थान	
	शस्त्रागार	शौचालय	शयनगृह दक्षिण	घी तेल संग्रह चक्की स्थान	रसोई	
नैऋत्य			दक्षिण			आग्नेय

चतुर्थ आयोजना –

वायव्य		उत्तरी वायव्य	उत्तर	उत्तरी ईशान		ईशान
	पशुशाला	रतिगृह	धन धान्य संग्रह	वैद्यगृह	देवगृह	
पश्चिम वायव्य	शोकगृह				प्रसूतिगृह	पूर्वी ईशान
पश्चिम	भोजन शाला				स्नानागार	पूर्व
पश्चिम नैऋत्य	विद्याभ्यास कक्ष				वधिमथन गृह	पूर्वी आग्नेय
	सामानगृह	शौचालय	शयनकक्ष	आज्य तेल गृह	रसोई	
नैऋत्य		दक्षिणी नैऋत्य	दक्षिण	दक्षिणी आग्नेय		आग्नेय

पंचम आयोजना - नारद संहिता के अनुसार

वायव्य		उत्तर		ईशान
	श्रृंगारगृह	श्रीगृह	आज्य तेल गृह	
पश्चिम	भोजनगृह		स्नानगृह	पूर्व
	शस्त्र, धान्य, रति, धनगृह	शयनगृह	रसोई शौचालय	
नैऋत्य		दक्षिण		आग्नेय

षष्ठ आयोजना वृहत्संहिता के अनुसार –

वायव्य		उत्तर		ईशान
	धन धान्य गृह		देव स्थान	
पश्चिम				पूर्व
	सामान गृह	शयनगृह	रसोई	
नैऋत्य		दक्षिण		आग्नेय

सातवीं आयोजना किरन तन्त्र के अनुसार

वायव्य		उत्तर		ईशान
	धान्य गृह पशु गृह	धन संग्रह कक्ष	देव स्थान	
पश्चिम	भोजन गृह		स्नानागार	पूर्व
	सामान गृह	शयनगृह	रसोई	
नैऋत्य		दक्षिण		आग्नेय

आठवीं आयोजना वास्तु चिन्तामणि के अनुसार

वायव्य		उत्तर		ईशान
	धान्य गृह पशु गृह	धन संग्रह कक्ष	देव स्थान	
पश्चिम	भोजन गृह		स्नानागार	पूर्व
	सामान गृह	शयनगृह	रसोई	
नैऋत्य		दक्षिण		आग्नेय

टिप्पणी -1 - इस प्रकार आप वास्तु की आयोजना बनाकर भूखण्ड पर गृह निर्माण कर सकते हैं, चूँकि वास्तुशास्त्र के अनुसार चौकोर ,आयताकार, भद्रासन, और वृताकार – इन चार घरों को श्रेष्ठ बताया गया है । यद्यपि चौकोर घर को सभी ग्रन्थों में उत्तम बताया गया है परन्तु ब्रह्मवैवर्तपुराण में भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा विश्वकर्मा जी के प्रति इस प्रकार का वचन प्राप्त होता है – चौकोर घर गृहस्थों के लिए धन सम्पत्ति का ह्रास करने वाला होता है, इसलिए घर की लम्बाई –चौड़ाई में अलग – अलग दो का भाग दें, यदि शुन्य शेष आये तो वह घर मनुष्य के लिएशुन्य प्रद होता है, यदि शेष शुन्य नहीं आवे तो वह घर लाभदायक होता है । आयताकार गृह में चौड़ाई के दोगुनी से अधिक लम्बाई नहीं होनी चाहिए यह अशुभकर है, चक्र के समान घर में दरिद्रता आती है, विषमवाहु घर में शोक होता है, शकट के समान घर में सुख और धन की हानि होती है, दण्ड के समान घर में पशुओं की हानि तथा वंश का नाश होता है,

टिप्पणी 2 - मृदंग के समान घर में स्त्री की मृत्यु, वंश की हानि तथा बन्धुनाश होता है, पंक्षी के समान घर होने से धन का नाश होता है, कछुए के समान घर होने से बन्धन और पीड़ा होती है, धनुष के समान घर में चोर आदि का भय होता, ऐसे घर में मुर्ख एवं पापी पुत्र पैदा होता है, कुम्भ के समान घर में कुष्ट रोग होता है, मुद्गर के समान घर में पुरुषार्थ की हानि होती है । कुल्हाड़ी के समान घर में मुर्ख एवं पापी पुत्र उत्पन्न होता, तीन कोने वाले घर में राजभय –पुत्र की हानि, दुःख, वैधब्य एवं मृत्यु होती है । पांच कोने वाले घर में सन्तान को कष्ट होता है यह घर विनाशकारक होता है, छः कोने वाला घर मृत्यु एवं क्लेश कारक होता है, सात कोने वाला घर अशुभकर होता है, आठ कोने वाले घर में रोग तथा शोक होता है, छागज के समान घर में धन धन एवं गायों का नाश होता है, चौड़े मुख वाले घर में वन्धुओं का नाश होता है।

विशेष – गृह के आय जानने की विधि – घर की चौड़ाई को लम्बाई से गुणा करने पर जो गुणनफल प्राप्त हो उसे

“पद” कहते है। उस पद को (छ: जगह अलग – अलग रखकर) क्रमशः 8, 3, 9, 8, 9, 6 से गुना करें, और गुणनफल में क्रमशः 12, 8, 8, 27, 7, 9 से भाग दें। फिर जो शेष बचे, वह क्रमशः धन, ऋण, आय ,नक्षत्र ,वार तथा अंश आता है। इनके बारे में आप को इस प्रकार समझना चाहिए –

1. धन - यदि ऋण की अपेक्षा धन अधिक हो तो वह घर शुभ होता है।

2. ऋण - यदि धन की अपेक्षा ऋण अधिक हो तो वह घर अशुभ होता है

3. आय – यह आठ प्रकार की होती है, 1 . ध्वज 2 . धूम्र 3 . सिंह 4 . स्वान 5 . वृष 6 . खर 7 . गज 8 . उष्ट्र अथवा काक। यदि आय विषम (1, 3, 5, 7) हो तो शुभ है और सम (2, 4, 6, 8) हो तो अशुभ है।

4. नक्षत्र – घर का जो नक्षत्र हो, वहां से अपने नाम के नक्षत्र तक गिनकर जो संख्या हो, उसमें 9 का भाग दें यदि शेष 3 बचे तो धन का नाश, 5 बचे तो यश की हानि और 7 बचे तो गृह कर्ता की मृत्यु होती है। घर की राशि और अपनी राशि गिनने पर परस्पर 2 या 12 हो तो धन की हानि, 9 या 5 हो तो पुत्र की हानि और 6 या 8 हो तो अनिष्ट होता है, अन्य संख्या हो तो शुभ समझना चाहिए।

5. वार तथा अंश – सूर्य का (1) और मंगल (3)के वार तथा अंश हो तो उस घर में अग्निभय होता है। अन्य वार एवं अंश होने से सम्पूर्ण अभीष्ट की सिद्धि होती है।

3.2.2 वास्तु निर्माण का आकार

भूमि के आकार की तरह वास्तु या घर के आकार का महत्व है, वास्तु आकार यथा सम्भव चतुष्कोण अर्थात् वर्गाकार या आयताकार ही रहना चाहिए। यह निवासियों के लिए सुख शान्ति देता है। यदि वास्तु या मकान का कोई भी कोना बड़ा या कटा हुआ होगा तो उसका प्रभाव वास्तु पर पड़े बिना नहीं रहता। इसका विवेचन इस प्रकार है –

1. ईशान दिशा के कोने का कटा रहना (या अभाव होना) या अन्दर धसा रहना सुख – समृद्धि एवं वंशनाश का हेतु बनता है।
2. पूर्व दिशा का कोना नहीं रहने से परिवार में शान्ति का अभाव होकर प्रति दिन कलह प्रदान करता है।
3. आग्नेय दिशा में कोना न होने या धसा हुआ होना कुछ शुभ प्रद बताया गया है।
4. वायव्य दिशा में कोना न रहने या धसा हुआ होने पर आर्थिक संकट आते हैं।
5. नैऋत्य दिशा में कोना न होने से या धसा हुआ होने से हानि नहीं होती है ब्यापार ठीक रहता है तथा शुभ फल मिलता है।
6. वास्तु की कोई भी दिशा या विदिशा का अन्दर की ओर धसा रहना अनेकों लाभ से कोसो दूर कर देता है।
7. यदि जमीन और परकोटा समानान्तर है किन्तु मुख्य वास्तु दिशाओं के समानान्तर नहीं होगी या वास्तु के कोने विदिशाओं की ओर मुख करके बने हों तो वह वास्तु अयोग्य है तथा उसमें निवास करने पर निरन्तर उपद्रव होते रहते हैं।
8. जमीन और परकोटा समानान्तर न रहने पर यदि मात्र वास्तु समानान्तर हों तो उसे भी अयोग्य समझा जाता है। एसी वास्तु निर्माण करने वालों को स्थिरता नहीं प्रदान करती है।
9. जमीन की पूर्व दिशा की भूमि या वास्तु कटी होने पर गृह स्वामी की शक्ति क्षीण होती है तथा अपमान होता है।
10. दक्षिण दिशा की जमीन कम होने पर भी शुभ होता है।
11. पश्चिम दिशा की जमीन या वास्तु कम होने पर भी मध्यम फल मिलता है।
12. उत्तर दिशा की जमीन या वास्तु कम होने पर धन नाश होता है।
13. सामान्य रूप से भूमि और वास्तु का चौकोर (आयताकार या वर्गाकार) होना अत्यन्त शुभ है।
14. पूर्व दिशा की ओर जमीन का या वास्तु निर्माण का भाग अधिक हो तो स्वामी को कृति, प्रतिष्ठा मिलती है किन्तु वंश वृद्धि की दृष्टि से हानिकारक होता है।
15. दक्षिण दिशा की ओर जमीन का या वास्तु निर्माण का भाग अधिक हों तो दरिद्रता का सामना करना पड़ता है।

16. उत्तर दिशा की ओर जमीन का या वास्तु निर्माण का भाग अधिक हो या बाहर निकला हो तो धन-धान्य की वृद्धि होती है साथ ही वंश वृद्धि भी होती है।
17. पश्चिम दिशा की ओर जमीन का या वास्तु का निर्माण अधिक होने पर एश्वर्य का नाश होता है।

देवालय, प्रसाद अथवा आश्रम, मठ आदि वास्तु कर हीन अर्थात् दायें – बायें और छोटे – बड़े होना अशुभ है। ऐसा होने से स्त्री नाश, शोक, संताप एवं गृह स्वामी का धन नाश होता है।

इसी तरह यह भी कहा गया है कि यदि घर बायीं ओर बड़ा तथा दाहिनी ओर छोटा हो तो ऐसा घर अन्तक गृह कहलाता है तथा कुल एवं सम्पत्ति का नाश करने के कारण अशुभ प्रतीत होता है।

घर के दोनों भाग सम्पार्श्व होना चाहिए । यदि दाहिनी ओर बड़ा हो तथा उसमें बड़ा भाई या ज्येष्ठ भ्राता निवास करें तो दोष नही होता है इन सभी बातों का विचार करके आप को वास्तु निर्माण करवाना चाहिए।

3.2.3 भूखण्डो का वर्गीकरण

आधुनिक परिवेश में निर्मित भवनों के लिए वास्तु सिद्धान्त समान रूप से कार्यकारी है, बालकनी, चबूतरा, गोल सीढ़िया, लिफ्ट, सैप्टिक टैंक, शौचालय इत्यादि बातों का विचार करना आवश्यक है। जहाँ तक बात करें तो भूखण्डों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया जा सकता है। 1 . ऊतम श्रेणी के भूखण्ड 2 . मध्यम श्रेणी के भूखण्ड 3. अधम श्रेणी के भूखण्ड 4. अति जघन्य श्रेणी के भूखण्ड।

उत्तम श्रेणी के भूखण्ड – जिस भूखण्ड के चारों ओर सड़क हो एवं पूर्व –उत्तर की सड़के, दक्षिण एवं पश्चिम की सडकों से नीची हों एवं ईशान कोण विस्तृत हो। अथवा पूर्व पश्चिम उत्तर में सड़क हो ,एवं पश्चिम की सड़क पूर्व एवं उत्तर की सड़क से अधिक ऊँची हो एवं पश्चिम में बहुमंजिली इमारत हो, अथवा पश्चिम एवं उत्तर में सड़क हो एवं पश्चिम वायव्य में मार्गारम्भ हो। इसके अतिरिक्त पूर्व एवं उत्तर में सड़क हो एवं ईशान दिशा में मार्ग हो एवं पूर्व व उत्तर की सडकें भूखण्ड से ऊँची न हो। इन भूखण्डों पर वास्तु निर्माण प्रारम्भ करने से पूर्व ध्यान रखें की यदि भूखण्ड सतह से पूर्वी सड़क ऊँची हो तथा उत्तरी सड़क नीची हो तो प्रवेश उत्तर से रखें। इसी प्रकार उत्तरी सड़क ऊँची हो तथा पूर्वी सड़क नीची हो तो प्रवेश पूर्व से रखें। यदि किसी कारण यह सम्भव न हो तथा ऊँची सड़क के तरफ ही प्रवेश द्वार रखना हो तो पुरे भूखण्ड का तल भरकर ऊँचा करना चाहिए।

मध्यम श्रेणी के भूखण्ड – पश्चिम तथा पूर्व में सड़क हो पूर्व का सड़क, पश्चिम के सड़क से नीची हो ,अथवा उत्तर तथा दक्षिण में सड़क हो तथा उत्तर की सड़क दक्षिण के सड़क से नीची हो, अथवा पूर्व में सड़क हो जो भूखण्ड से नीची हो तथा पश्चिम और दक्षिण में बहुमंजिली इमारत हो, अथवा उत्तर दक्षिण पूर्व में सड़क हो तथा पूर्व या उत्तरी सड़क भूखण्ड से ऊँची हो , अथवा उत्तर दक्षिण पूर्व पश्चिम में सड़क हो तथा पश्चिमी सड़क, उत्तरी एवं पूर्वी सड़क से ऊँची हो, अथवा तीन तरफ सड़क हो तथा पूर्व और उत्तर की सड़क भूखण्ड से ऊँची हो, अथवा उत्तर ,पूर्व ,पश्चिम में सड़क हो तथा पश्चिमी सड़क भूखण्ड से नीची हो, अथवा उत्तर, पूर्व ,दक्षिण में सड़क हो तथा दक्षिणी सड़क भूखण्ड से नीची हो तो ऐसे भूखण्ड को मध्यम श्रेणी का भूखण्ड समझना चाहिए।

अधम श्रेणी के भूखण्ड – पूर्व में नीची सड़क हो तथा पश्चिम ,दक्षिण ,उत्तर में बहुमंजिली इमारत या पहाड़ियाँ हों, अथवा पूर्व एवं दक्षिण में सड़क हो तथा पूर्व एवं दक्षिण की सड़कें जुड़ी हों एवं पूर्व की सड़क नीची हो ,अथवा पश्चिम या दक्षिण में भूखण्ड से नीची सड़क हो तथा पूर्वी या उत्तरी दिशा में पहाड़ियाँ या ऊँची इमारतें हो तथा तीन तरफ सड़क हो, अथवा उत्तर एवं दक्षिण में सड़क हों दक्षिण सड़क उत्तरी सड़क से नीची हो, पूर्व में ऊँची इमारत या पहाड़ियाँ हों तथा पश्चिम में खाली भूमि हो तो ऐसे भूखण्डों को अधम श्रेणी का भूखण्ड समझना चाहिए।

अति जघन्य श्रेणी के भूखण्ड - पूर्व एवं दक्षिण की ओर सड़क हो, तथा पूर्व एवं उत्तर के तरफ ऊँची इमारत या पहाड़ियाँ हो, अथवा पूर्व एवं दक्षिण में भूखण्ड से नीची सड़क हो तथा पूर्व एवं दक्षिण में ऊँची इमारत या पहाड़ियाँ हों, अथवा सिर्फ दक्षिण में भूखण्ड से नीची सड़क हो तथा पूर्व या उत्तर में कोई खाली स्थान न हो तो इस प्रकार के भूखण्ड अतिजघन्य (अत्यन्त अधम कोटि)के भूखण्ड के अन्तर्गत आते हैं परन्तु उक्त प्रकार के भूखण्ड पर धरातल के उतराव- चढ़ाव इत्यादि का पूरा ध्यान रखते हुए यदि वास्तु निर्माण कार्य किया जायेगा तो निश्चय ही निम्नकोटि का भूखण्ड भी अपने पुरुषार्थ एवं वास्तु संरचना के अनुकूल अधिकाधिक फल प्रदाता होगा।

परन्तु वर्तमान समय में भवन निर्माण सामान्य कालोनियों में अथवा उपनगरों में किए जाते हैं। इन भवनों की स्थिति उनके धरातल से ढलान, चढ़ाव आस – पास के वृक्ष आदि के अतिरिक्त उनसे लगने वाली सड़को से भी प्रभावित होती है। प्राचीन ग्रन्थों में यथा सम्भव पूर्व या उत्तर में ही सिंह द्वार अथवा कुबेर द्वार निर्माण करने का उल्लेख किया गया है। वर्तमान काल में जनसंख्या वृद्धि तथा शहरीकरण की बृद्धि के कारण भूमि एवं भवनों का मूल्य तो बढ़ा ही है साथ ही सुलभता भी समाप्त हो गयी है। इसी परिस्थिति में उपलब्ध भूखण्ड पर यथा सम्भव प्रयास किया जाना चाहिए कि वास्तु नियमों के अनुकूल हो। साधारण भूखण्डो के पास में एक अथवा दो सड़क होती है किन्हीं भूखण्डों में तीन पार्श्व में सड़क होती है चारों तरफ सड़क वाले भूखण्ड नगण्य अथवा कम ही है। सड़को के पार्श्व के अनुरूप भूखण्डों का वर्गीकरण किया जा सकता है। जिन भूखण्डों में दो पार्श्व में सड़क है उनके नाम उन पार्श्वों के मध्य की विदिशा के नाम पर कहे जाते हैं इनको इस प्रकार समझना चाहिए।

क्रम संख्या	भूखण्ड का नाम	लक्षण
1 .	पूर्वी	जिनके मात्र पूर्व के तरफ सड़क हो।
2 .	उत्तरी	जिनके मात्र उत्तर की ओर सड़क हो।
3 .	पश्चिमी	जिनके मात्र पश्चिम की ओर सड़क हो
4 .	दक्षिणी	जिनके मात्र दक्षिण के तरफ सड़क हो
5 .	ईशान	जिनके मात्र पूर्व –उत्तर की ओर सड़क हो
6 .	आग्नेय	जिनके मात्र पूर्व व दक्षिण की ओर सड़क हो
7 .	नैऋत्य	जिनके मात्र पश्चिम व दक्षिण की ओर सड़क हो
8 .	वायव्य	जिनके मात्र पश्चिम एवं उत्तर की ओर सड़क हो

इन भूखण्डों को वास्तु के अनुरूप तथा उसके नियमों को ध्यान में रख कर ही वास्तु निर्माण करना चाहिए प्रस्तुत भूखण्ड के आधुनिक सन्दर्भ में भूतल की अपेक्षा, निर्माण कार्य की अपेक्षा उपयुक्त सिद्धांतों का पुरुषार्थ करके एसी वास्तु की संरचना अपेक्षित और उचित है जो नियमानुसार हो, कुछ स्थलों पर बाधायें भी आती है जिसके कारण भूस्वामी विवश हो जाते हैं, परन्तु इसका मूल सिद्धान्त भूखण्ड क्रय करते समय इन सभी बातों का ध्यान रखा जाय तो सब कुछ अनुकूल साबित होगा – जैसे – पूर्व एवं उत्तरी दिशा में तल नीचा हो तथा निर्माण कार्य की उचाई इन दिशाओं में नीची हो तो इन दिशाओं में कम निर्माण करना चाहिए तथा अधिक खाली स्थान छोड़कर निर्माण कार्य आरम्भ करना चाहिए, सडकों की अपेक्षा से विभक्त इन भूखण्डो में इसी मूल भावना को ध्यान में रखकर आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समझना चाहिए इतना ध्यान देना चाहिए कि पुराने भवनों को सुधार करते समय कम से कम तोड़ – फोड़ करना पड़े। यथा सम्भव वर्तमान परिस्थिति में दिशाओं के संतुलन के अनुरूप वाह्य एवं आन्तरिक साज –सज्जा एवं सामान की स्थिति में परिवर्तन करके अपनी वास्तु को नियमानुकूल बनाने का प्रयास करना चाहिए।

3.3 आधुनिक वास्तुशास्त्र

आधुनिक वास्तु या प्रचीन वास्तु का सीधा आशय यह है कि यह एक स्थापत्य है, अर्थात् भवन, देवालय, प्रसाद आदि संरचनाओं का निर्माण, इस प्रकार के निर्माण की कला एवं विज्ञान, आधुनिक वास्तुशास्त्र में समाहित होते हैं। कला पक्ष में आकर्षण सूक्ष्म एवं स्थूल शिल्प कला का समावेश होता है जब कि आधुनिक पक्ष में धरातल, वायुमण्डल, दिशाओं , सूर्य की गति एवं ऊष्मा आदि का तथा आस –पास के परिकर का विचार करके, वास्तु के अनुकूल एवं प्रतिकूल (शुभाशुभ) फलों को ध्यान में रखते हुए संरचना का निर्माण किया जाता है दिशाओं की स्थिति समझकर उसके अनुरूप निर्मित संरचनाओं का सुपरिणाम निश्चित ही देखने को मिलते हैं। धरातल का ऊँचा – नीचा, ढलान ,चढ़ाव आस-पास वृक्ष, कुआं ,पहाड़ी, ऊँची ईमारत आदि का प्रभाव भी इस विषय में सम्मिलित है।

वर्तमान युग को वैज्ञानिक युग कहा जाता है, विज्ञान पर विश्वास करने वाला समुदाय प्राचीन मान्यताओं को तर्क एवं प्रमाण की कसौटी पर परखते हैं। यदि कोई भी मान्यता ब्यवहारिक प्रयोग में तथ्यपरक परिणाम प्रकट नहीं करती है तो विज्ञान उसे कल्पना मानता है वास्तु विज्ञान में उल्लिखित सैद्धान्तिक मान्यताओं को प्रमाण एवं तर्क की कसौटी पर रखने से उनमें यथार्थता परिलक्षित होती है, दिशाओं का ज्ञान, धरातल का ज्ञान, सूर्य का प्रकाश एवं चुम्बकत्वधारा का ज्ञान आदि सभी विज्ञान सम्मत है निश्चय ही इनका प्रभाव प्राणी मात्र के जीवन पर पड़ता है। चूँकि वास्तु नियम यह प्रतिपादित करता है कि दक्षिण –पश्चिम भाग हमेशा ऊँचा होना चाहिए एवं दीवारे मोटी बनानी चाहिए साथ ही इस दिशा में सीढी इत्यादि का भार देना चाहिए, इसका उद्देश्य है कि पृथ्वी जब सूर्य की परिक्रमा दक्षिण दिशा में करती है तो सूर्य एक विशेष कोणीय स्थिति में होता है, अत: इस क्षेत्र में अधिक भार से संतुलन बना रहता है तथा ऊँची तथा मोटी दीवार अधिक ऊष्मा से रक्षा करती है, जिससे भवन में गर्मी के मौसम में भी शीतलता एवं सर्दियों में गर्मी का अनुभव प्राप्त होता है। इसी प्रकार वास्तु नियम में दक्षिण –पूर्व (आग्नेय) कोण में भोजन बनाने का निर्धारण किया गया है क्योंकि इस क्षेत्र में पूर्व से प्रात : कालीन ताजगी से भरी हवा एवं सूर्य रश्मियों का प्रवेश होता है जिससे कि भोजनालय में रखे समान अधिक समय तक स्वच्छ(ताजा) बने रहते हैं।

चूँकि वास्तु प्राचीन काल से अस्तित्व में है लेकिन आधुनिकी करन के साथ वास्तु के परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन आया है, उदाहरण के लिए वैदिक आर्किटेक्चर द्वारा स्ट्रा के रूप में पहचाने जाने वाले सरल लेकिन महत्वपूर्ण संरचनात्मक सदस्य को जो आज हाई टेक इंजीनियरिंग द्वारा केबल के रूप में पहचाना जाता है स्ट्रा तनाव से खिचाव का प्रतीक है। केबल तनाव से खिचाव का भी प्रतीक है। वास्तुशास्त्र में कहा गया है कि हर सिविल और कस्ट्रक्शन इंजीनियर को पता होना चाहिए छत से ईट के दीवार पर लोड ट्रांस्फर मुख्य रूप से कम्प्रेशन के जरिए होता है, इसके अलावा प्राचीन वास्तुकार न केवल संरचनात्मक इंजीनियरिंग से बल्कि निर्माण सामग्री से सम्बन्धित निर्माण तकनीक से भी परिचित थे इस तरह की खोज किसी को भी यह विश्वास दिलाती है कि आधुनिक वास्तुशास्त्र वैदिक कल में मौजूद पहिया को कुछ हद तक फिर से स्थापित कर रहे हैं।

3.3.1 ईशान एवं पूर्व का भू खण्ड विचार

जिन भूखण्डों में उत्तर एवं पूर्व की तरफ सड़क हो वे भूखण्ड ईशान भूखण्ड कहलाते हैं ऐसे भूखण्डो के विषय में निम्नलिखित निर्देशों का अनुपालन भूखण्ड स्वामी के लिए हितकारी होगा

1. मुख्य प्रवेश उत्तर या पूर्व में ही रखना चाहिए, यह ध्यान रखें कि उत्तरी प्रवेश की अपेक्षा दक्षिणी प्रवेश नीचा न हो। इसी प्रकार पूर्वी प्रवेश की अपेक्षा पश्चिमी प्रवेश भी ऊँचा न हो। कम्पाउंड वाला गेट भी फर्स से ऊँचा न हो। यदि भूखण्ड 10 अंश से अधिक पूर्वी आग्नेय की ओर झुका हो तो मकान का मुख उत्तर में तथा मुख्यद्वार पूर्वी ईशान में रखने के अतिरिक्त पूर्व में एक द्वार भी रखें।

2. मुख्यद्वार पूर्वी या उत्तरी ईशान में सर्वोपयोगी है। ईशान कोण से सीमा दीवार का काम प्रारम्भ करने पर विपरीत प्रभाव होता है। ईशान्य कोण में चढ़ाव होना अशुभ ,धनहानि , वंश हानि पारिवारिक संकट का कारण बनता है। ईशान कोण में यदि पूर्व या उत्तर की सडकों से विस्तार हुआ हो तो ऐसे भूखण्ड में निवास करने वाला अत्यन्त बुद्धिमान, सन्तति वाला, भौतिक एवं त्यागमय जीवन यापन करने वाला होता है।

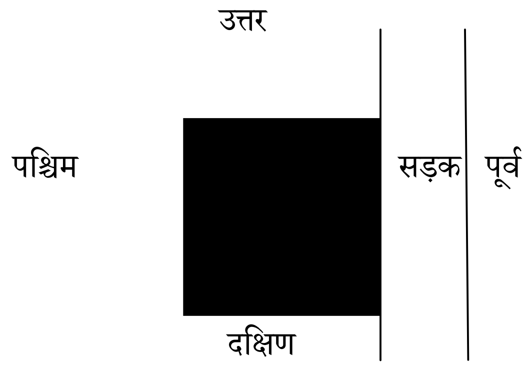
3. ईशान कोण का विस्तार पूर्व की ओर हो तो निवासी धनी ,प्रसिद्ध तथा न्यायप्रिय होता है। ईशान कोण का विस्तार उत्तर की ओर हो तो धनागम होने के बावजूद उस भवन स्वामी को मार्ग दुर्घटना का भय बना रहता है,

4. यदि पूर्वी ईशान कोण से मार्ग आरम्भ होता है तो निवासी की ख्याति बढती है ।यदि उत्तरी ईशान से मार्ग आरम्भ होता है तो सन्ततियों को समृद्धि की प्राप्ति होती है।

5. यदि ईशान कोण कटा हुआ हो तो सन्तान हीनता की स्थिति बनती है, ईशान कोण में पूर्वी या उत्तरी दीवार से लगाकर छोटा कमरा या शैल्टर बनाने पर भी वंश की हानि होती है, ईशान कोण में कमरा हो तो उसमेंपूर्व या उत्तर ईशान में द्वार बनावें, यदि पूर्व में चबूतरा मकान के पर्श से ऊँचा होगा तो पुरुष सदस्य तथा उत्तर का चबूतरा मकान से ऊँचा होने पर स्त्री सदस्यों को पीड़ादायक होता है। इत्यादि बातों का ध्यान देना चाहिए।

पूर्व का भूखण्ड - ऐसे भूखण्ड जिसमें सिर्फ पूर्व दिशा में सड़क हो, वे पूर्व के भूखण्ड कहे जाते है। इसका विशेष प्रभाव पुरुष वंशावली पर होता है तथा निवासी स्वास्थ्य एवं धन दोनों का

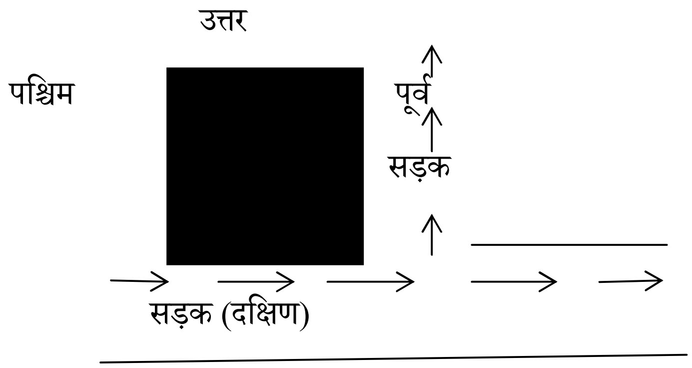
का सुख प्राप्त करते हैं ऐसे भूखण्डों में मुख्य कुछ ध्यान देने वाली बातें निम्नलिखित है।



इस भूखण्ड में पूर्व की ओर अधिक रिक्त स्थान है रखा जाय तो निवासियों के लिए बैभव तथा सुयोग्य वंशावली का सुख प्राप्त होता है। यदि उत्तर में रिक्त स्थान न हो किन्तु वास्तु नियमों के अनुकूल निर्माण कार्य किया गया हों तो भी लाभकारक होता है, पूर्व रिक्त भाग में विस्तार स्वास्थ्य एवं दीर्घायु का कारण बनता है। पश्चिमी एवं दक्षिणी भाग की अपेक्षा पूर्व का भाग नीचा रहने पर निवासियों को धन, वैभव, सुस्वास्थ की प्राप्ति होती है सभी कमरों में एवं बालकनी में भी इसी बात का ध्यान रखा जायतो और भी बेहतर होगा। फर्स से पूर्व का चबूतरा कम ऊँचा होने पर शान्ति ,बैभव, सुख समाधान की प्राप्ति होती है, पूर्व भाग अन्य भागों से ऊँचा होने पर परिवार को दरिद्रता का संकट, पुत्रादि को दीर्घ रोग, मानसिक समस्या का सामना करना पड़ता है। चूँकि पूर्वाभिमुख प्रवेश शुभदायी होता है, ईशान कोण से प्रवेश होने पर वंश की प्राप्ति, शान्ति ,साधन, सुख, वैभव, प्रगति एवं सर्वोपरी सुदृढ़ आर्थिक स्थिति मिलेगी। यदि पूर्वी सीमा से निर्माण कार्य प्रारम्भ कर पश्चिम में रिक्त स्थान रखेंगे तो हानि तथा पुत्रों का अभाव हो सकता है दुर्घटना भय भी रहेगा, यदि पूर्व के पड़ोसी के कम्पौंड वाल से लगकर मकान बनाते हों तो इनमें 3 इंच छोड़कर 4 फुट ऊँची कम्पौंड वाल बनावें। पूर्वी सीमा से निर्माण कार्य आरम्भ करें तथा पश्चिम में झुका हुआ विस्तार (छतरीनुमा) हो तो निवासी को नेत्र रोग इत्यादि की सम्भावना होती है। यदि पूर्व में झुकाकर विस्तार (छपरीनुमा)बनी हो तो परिवार के पुरुष सदस्यों के लिए लाभप्रद होता है तथा स्लैब वाले मकान में उत्तर एवं पूर्व में दो – दो फुट की बालकनी निकालें, दक्षिण एवं पश्चिम में बालकनी न निकालें, यदि पूर्व कम्पौंड वाल पश्चिम कम्पौंड वाल से नीची रहेगी तो अच्छे पुत्र की प्राप्ति होती है। परन्तु पश्चिम कम्पौंड वाल, पूर्वी कम्पौंड वाल से अगर नीची रहेगी तो सन्तति नाश का भय होगा। यदि मकान का निर्माण इस प्रकार किया गया हो कि उसका कुछ भाग किराये से देना हो तो स्वम् पूर्व अथवा उत्तरी भाग में रहना चाहिए तथा किरायेदार को दक्षिण या पश्चिम भाग में रखना चाहिए मकान जब खाली हो तब दक्षिण या पश्चिम भाग में आ जाए ताकि पूर्व व उत्तर दिशाओं पर ध्यान न रहे ऐसा न करने से वास्तु के मुलभुत सिद्धांतो के विपरीत होने के कारण समस्या आ सकती है।

3.3.2 आग्नेय एवं दक्षिण के भूखण्ड

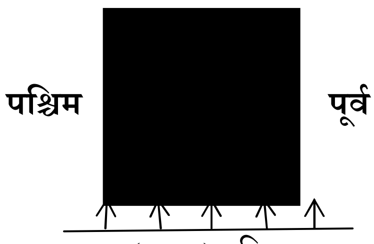
ऐसे भूखण्ड जिनके पूर्वी एवं दक्षिण पार्श्व में सड़क हो उसे आग्नेय भूखण्ड कहते हैं। ऐसे भूखण्डों में परिवार की महिला सदस्यों तथा द्वितीय सन्तान पर विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है। ऐसे भूखण्डों पर वास्तु का निर्माण पूर्ण सावधानी के साथ करना चाहिए



ऐसे भूखण्डों के विषय में निम्लिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए यदि दक्षिण का मार्ग नीचा हो तो प्रमुख प्रवेश पूर्व से रखें। यदि भूखण्ड का झुकाव आग्नेय की ओर 10 अंश से ज्यादा हो तो कम्पौन्ड वाल का प्रमुख द्वार पूर्व ईशान में तथा मकान का प्रवेश उत्तर में रखना चाहिए, पूर्व में भी एक दरवाजा रखें। पूर्वी आग्नेय में प्रमुख प्रवेश होने पर भी अशुभ फल ही समझना चाहिए। दक्षिण में प्रवेश हो, पूर्वी तथा पश्चिमी भाग खुले हों, एवं सामने आंगन में आच्छादित चबूतरा हो, चबूतरे के किसी भी तरफ तीन फुट ऊँची दीवाल हों तो आवागमन पूर्ववर्ती अथवा दक्षिणावर्ती रखना चाहिए तथा आग्नेय व पश्चिम में आवागमन अवरोध करें।

यदि दक्षिण भाग में चबूतरा पूर्व ग्रिल से जुड़ा हुआ हो तथा ग्रिल की निचे की दीवार की दीवार घर की अन्य दीवारों से पतली हो तो शुभ है अन्यथा पूर्वी आग्नेय की ओर विस्तार का परिणाम विपरीत मिलेगा। यदि यही ग्रिल पश्चिम में जुड़ी हो तो ठीक है अन्यता इससे पश्चिम नैऋत्य के असर दिखेगा। शौचालय आदि आग्नेय में बनाना अपरिहार्य हो तो भी स्नानागार पूर्व में ही रखें। नारियल आदि के बड़े बृक्ष दक्षिण आग्नेय एवं दक्षिण नैऋत्य के मध्य में लगावें। यदि उद्योग हो तो बायलर, ट्रान्सफार्मर पूर्व कम्पौंड वाल से 3 फिट दूर रखें। यदि उद्योग में आग्नेय कोण में शौचालय बनाना अपरिहार्य हो तो पूर्व कम्पाउंड वाल से 3 फिट दूर बनावें, शौचालय कम्पाउंड वाल से स्पर्श करके न बनावें। यदि भूखण्ड में निर्मित मकान में पूर्व या मध्य आग्नेय बढ़ा हुआ हो तथा कुआं ,गड्ढे आग्नेय में हो एवं उत्तर में रिक्त स्थान नहीं है अथवा दक्षिण में उत्तर की अपेक्षा ज्यादा रिक्त स्थान हो, अथवा नैऋत्य या पूर्व आग्नेय में कम्पाउंड वाल में गेट हो तो इसी स्थिति में भयानक फल प्राप्त होता है, निवासी को मुकदमेवाजी, अग्निभय, चोरी, अनैतिक चरित्र एवं कर्ज का सामना करना पड़ता है। बर्बादी में मकान बिकने की नौबत आ सकती है। तथा पुरुष सन्तति का अभाव होने से सम्पति लावारिश हो जाती है। अगर यदि आग्नेय भूखण्ड में मार्ग का आरम्भ पूर्व या ईशान से हो तो शुभ है, दक्षिण आग्नेय में हो तो भी शुभ होता है

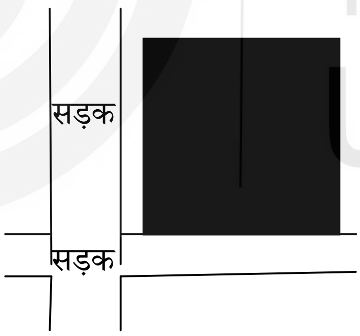
दक्षिण के भूखण्ड – ऐसे भूखण्ड जिनके केवल दक्षिणी पार्श्व में सड़क हो तो उसको दक्षिण भूखण्ड कहते है ऐसे भूखण्ड के दक्षिणाभिमुख होने पर विशेष प्रभाव घर की महिला सदस्यों पर होता है। दक्षिण दिशा को सामान्यत: भारी एवं अशुभ माना जाता है। किन्तु सर्वथा ऐसा नहीं है। यदि वास्तु नियमों का समुचित ध्यान रखा जाय तो शुभ परिणामों की निश्चित प्राप्ति होती है।



यदि इस भूखण्ड में दक्षिण में उचापन हो तो निवासी को आरोग्य एवं धन की प्राप्ति होती है। भूखण्ड में दक्षिणी भाग में भारी सामान एवं अस्त्रागार रखना अत्यन्त शुभ फलदायक होता है। यदि दक्षिण कमरों को उत्तरी कमरों से ऊँचा रखा जाय तो वैभव प्रदाता होता है दक्षिण फर्श तल उत्तरी फर्श तल से नीचा होने पर स्त्री रोग, धनहानि, अकाल मृत्यु की आशंका होती है। दक्षिण में चबूतरा उत्तर के चबूतरे से नीचा होने पर धनहानि, रोग का भय होता है। फर्श तल से दक्षिण पार्श्व का चबूतरा ऊँचा होने पर उत्तम स्वास्थ्य तथा सुदृढ़ अर्थ सम्पदा की प्राप्ति होती है।

3.3.3 नैऋत्य एवं पश्चिम के भूखण्ड

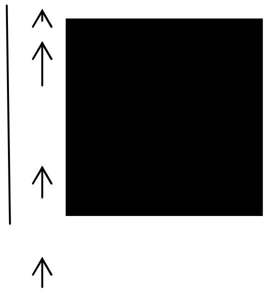
ऐसे भूखण्ड जिनके दक्षिण पार्श्व में सड़क हो वे नैऋत्य भूखण्ड कहलाते हैं। चूँकि नैऋत्य दिशा का महत्व वास्तुशास्त्र में ईशान के समकक्ष है ऐसे भूखण्डों पर वास्तु निर्माण का कार्य सावधानी पूर्वक करना चाहिए ऐसे भूखण्डों का प्रभाव परिवार प्रमुख, सहधर्मिणी तथा ज्येष्ठ पुत्र पर विशेष होता है ऐसे भूखण्डों पर नियमानुसार विशिष्ट सावधानियां रखना भूस्वामी को सफल बनाता है अन्यथा आपदाओं का सामना करना पड़ता है।



इस दिशा के भूखण्ड को बनाने में निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए, यदि उत्तर एवं पूर्व से निर्माण कार्य आरम्भ किया जायेगा तथा दक्षिण एवं पश्चिम में उत्तर एवं पूर्व की अपेक्षा अधिक खाली जगह छोड़ने से बहुत सारी समस्या आती है इसलिए इसका ध्यान रखना चाहिए।ऐसे भूखण्ड में नैऋत्य दिशा का निर्माण कार्य तीव्रगति से करवाएं अन्यथा अचानक घटना घटती रहती है। नैऋत्य का कमरा टुटा –फुटा हो तो पहले पूरी सामग्री एकत्र करने के पश्चात ही कार्य आरम्भ करें तथा प्राथमिकता से इसे पूरा करवाएं इसकाल में यात्रा कम करनी चाहिए। निर्माण कार्य दक्षिण या पश्चिम सिरे से प्रारम्भ करना उपयुक्त होगा। दक्षिण एवं पश्चिम में पक्का स्लैब (आर . सी . सी .) बनाना चाहिए ,भले ही उत्तर एवं पूर्व में झुकावदार छपरी बनाया जा सकता है। दक्षिण में उत्तर की अपेक्षा अधिक जगह छोड़कर निर्माण करने पर महिलाओं के लिए अशुभ होता है। पूरी वास्तु के साथ ही प्रत्येक कमरे में भी नैऋत्य कोण समकोण रहना अत्यन्त आवश्यक है। यदि नैऋत्य कोण को कुछ ऊँचा करा दिया जाय तथा नैऋत्य कोण थोड़ा कता भी हो तो ईशान में बढ़ाव का असर मिलने से शुभ फलदायी होगा। नैऋत्य का चबूतरा घर के तल से ऊँचा होने पर घर की

महिलाओं को आर्थिक सुदृढ़ता की प्राप्ति होती है। नैऋत्य में बाहरी कमरा या सेवक गृह बनाना शुभ है। नैऋत्य मेंऊँचे बृक्ष काटना अत्यन्त अशुभ है पत्थरों का ढेर एवं ऊँचे बृक्ष नैऋत्य में रहना शुभ है।

पश्चिम के भूखण्ड – ऐसे भूखण्ड जिनके सिर्फ पश्चिमी पार्श्व में सड़क हो वे भूखण्ड पश्चिम भूखण्ड कहलाते हैं। ऐसे भूखण्डों का विशिष्ट प्रभाव सन्तति अर्थात् पुत्रों पर देखा जाता है ऐसे भूखण्ड के स्वामी को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।



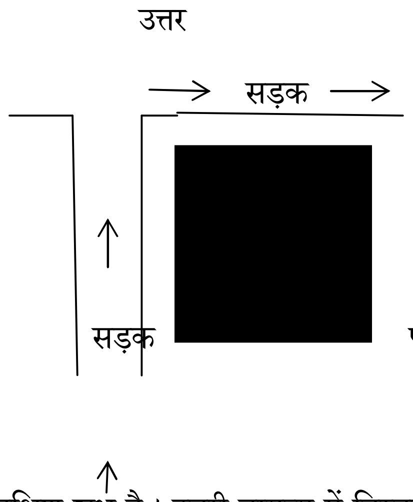
पश्चिम में पूर्व की अपेक्षा अधिक खुला जगह नहीं होना चाहिए।

सड़क पश्चिमी खाली भाग पूर्व की अपेक्षा नीचा नहीं होना चाहिए।

पश्चिम चबूतरा खुला हो तो एक मीटर ऊँची दीवार घर की अन्य दिवारों जितनी ऊँची अवश्य ही बनावें ,ताकि निवासियों का आना- जाना पूर्व एवं पश्चिम की ओर हो, नैऋत्य एवं वायव्य की ओर न हो। पश्चिम का चबूतरा फर्श से ऊँचा होने पर ,यश एवं कृति बढती है। पश्चिम भाग में चबूतरा पूर्व भाग से नीचा होने पर अशुभ है।पश्चिम में घने ऊँचे बृक्ष शुभफल प्रदान करते हैं। बाहरी कमरा या सेवक आवास गृह मुख्य मकान से नीचा होने पर अपयश तथा आर्थिक क्षति होती है। पश्चिमी वायव्य में मार्ग आरम्भ होने पर उत्तर का भूखण्ड कभी न खरीदें। पूर्व का भूखण्ड खरीदना हो तो बीच की दीवार गिरा दें अथवा पूर्वी ईशान में गेट निकालें। यदि पश्चिम में प्रमुख द्वार हो तथा उत्तर में रिक्त भूखण्ड हो तो उत्तरी ईशान में पृथक् गेट लगवाना चाहिए। यदि मध्य की अन्तराल दीवार तोडना हो तो पश्चिम वायव्य में पश्चिम मुखी अलग गेट लगवाए। कम्पाउंड वाल मुख्य प्रवेश से ऊँची या नीची इच्छानुसार रख सकतें हैं। निर्माण कार्य पश्चिम की ओर से आरम्भ करें यह शुभ फलदायी है। एकदम पश्चिम में मुख्यद्वार या दरवाजा शुभ परिणाम देता है। पश्चिम की कम्पाउंड वाल पूर्व की अपेक्षा ऊँची रखना शुभ है।पश्चिम का दरवाजा वायव्य की ओर होने पर अशुभ होता है। पश्चिम के दरवाजे का मुख नैऋत्य में होने पर भी अशुभ कारक ही होता है।

3.3.4 वायव्य एवं उत्तर का भूखण्ड

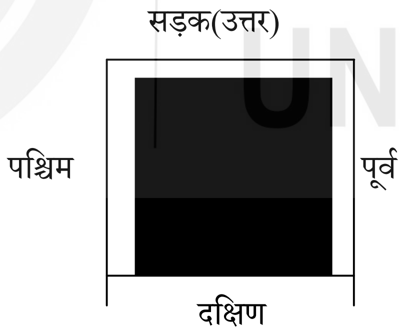
जिस भूखण्ड में पश्चिम एवं उत्तरी पार्श्व में सड़क होती है उन्हें वायव्य भूखण्ड की संज्ञा दी जाती है। इनका विशेष प्रभाव परिवार की महिला सदस्यों तथा तीसरी सन्तान पर पड़ता है। धनागम का विशेष प्रभाव इस प्रभाग की विशेषता है। इस भूखण्ड में सही वास्तु का निर्माण स्वामी को धनपति बनाता है, गलत निर्माण धनहीन बनाता है ऐसे भूखण्ड का विशेष प्रभाव मित्रता – शत्रुता –सफलता – असफलता मुकदमें की हार – जीत पर पड़ता है इस गृह का निवासी गृह त्यागी, साधु, सन्यासी, दार्शनिक, तपस्वी, तक बन जाता है। ऐसे भूखण्ड वास्तु महत्व की श्रेणी में तीसरा स्थान रखते हैं। ऐसे प्रभाग में वास्तु निर्माण में निम्नलिखित संकेतों को ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है, ताकि अशुभ प्रभावों से बचत भी हो सके।



वायव्य में किंचित् विस्तार अच्छा है यदि उसका आधार वर्गाकार या आयताकार हो, नैऋत्य से वायव्य की ओर कोणात्मक विस्तार न हो।

प्राकृतिक रूप से वायव्य कोण कुछ कटा हो तो भी दक्षिण शुभ है। उत्तरी वायव्य में विस्तार होने से अशुभ फल मिलता है।यदि उत्तरी वायव्य में विस्तार हो अथवा वायव्य में कुवां या गड्ढा हो या वायव्य में चढ़ाव हो या बन्द कर दिया गया हो तो तो भी अशुभ फल ही समझना चाहिए। वायव्य में विस्तार या वायव्य में बन्द करने के साथ उत्तरी पार्श्व के सड़क के वायव्य से ईशान की ओर जाने से उत्तरी ईशान में कटाव होगा। इसके प्रभाव से धनागम तो होगा किन्तु स्त्री प्रमुख्यता एवं मानसिक चिन्ता तथा असंतुलन बना रहेगा। इसमें नैऋत्य से वायव्य भाग नीचा रखें, अग्नेय से ईशान भाग नीचा रखें, कम्पाउंड वाल का वायव्य कोना गोल या कोनाकर बना सकते हैं। वायव्य भाग ईशान से ऊँचा किन्तु आग्नेय से नीचा हो तो शुभ है।

उत्तरी भूखण्ड – ऐसे भूखण्ड जिसमें मात्र उत्तर दिशा में ही सड़क होती है उसे उत्तरी भूखण्ड कहते हैं, ऐसे भूखण्डों के विषय में निम्नलिखित विशिष्ट स्मरणीय निर्देशों का अनुपालन स्वामी के लिए हितकारक होगा वास्तुशास्त्र में ऐसे भूखण्ड उत्तम माने जाते हैं। तथा इसका प्रमुख प्रभाव नारी सदस्यों एवं अर्थ व्यवस्था पर प्रत्यक्ष पड़ता है।



उत्तरी भाग की कम्पाउंड वाल का निर्माण सबसे बाद में करें। उत्तर एवं पूर्व में दो –दो फुट की बालकनी रखें। दक्षिण एवं पश्चिम में खाली जगह न रखें। उत्तर में झुकावदार छपरी रखने से महिलाओं को सुख होता है। यदि निर्माण कार्य उत्तर से प्रारम्भ किया जाए तथा दक्षिण में अधिक रिक्त स्थान हो तो यह अशुभकर होता है तथा मकान छोड़ने की स्थिति आ जाती है।यदि भूखण्ड के पूर्व में रिक्त स्थान के साथ ही अन्य निर्माण वास्तु नियमानुकूल हो तो शुभदायी होता है। उत्तर में दक्षिण के अपेक्षा रिक्त स्थान होने पर सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं। यदि उत्तर में खाली भूमि खरीदने से मिलता हो तो अवश्य खरीदकर ले लेना इससे लाभ होता है। उत्तर के तरफ अधिक खाली भूमि सभी प्रकार के विकाश में सहयोगी होता है तथा कई पीड़ी तक सम्पदा बनी रहती है। उत्तर से प्रवेश प्रमुख द्वार कम्पाउंड वाल से ऊँचा हो तो भी शुभप्रद है। उत्तर में दरवाजा शुभदायी होता है। ईशान में दरवाजा भुद्धिमता, बुद्धिमान

सन्तति तथा प्रगति को देने वाला होता है। वायव्य में दरवाजे होने से चोरभय एवं अग्निभय की सम्भावना रहती है । उत्तर के कमरे का तल, विस्तार के अपेक्षाकृत कम ऊँचा रखना लाभदायक होता है। यदि भूतल एवं चबूतरा, मकान के फर्श तल से निचे हो तो धनागम तथा स्त्री सुख होता है। यदि उत्तरभाग का चबूतरा फर्श तल से ऊँचा हो तो अधिक खर्च, मानसिक कमजोरी एवं कर्जदार भवन स्वामी को बनाता है।

3.4 सारांश

यहां पर बहुत सभी वास्तु के प्रकार का नामोल्लेख किया गया है जिससे की आप विभिन्न वास्तु के प्रकारों से परिचित होकर उसके निर्माण में क्या – क्या सावधानी बरतनी चाहिए इन सभी बातों को समझ सकें। ऐसे भूखण्ड के लिए जिसमें एक या दो ओर सड़क हो, अथवा पूर्व –पश्चिम – उत्तर –दक्षिण में सड़क वाले भूखण्ड को दिशाओं के नाम से उल्लिखित किया गया है। इसमें आधुनिक गृहों के निर्माण के लिए सुझाव भी दिए गये हैं, प्रवेश की अपेक्षा तथा निर्माण कार्य की अपेक्षा क्या सावधानियां रखनी चाहिए, इसका भी सामान्य संकेत करने का प्रयास किया गया है। चूँकि मूल धारणा यह है कि पूर्व पार्श्व की अपेक्षा पश्चिमी पार्श्व अधिक भारी होना चाहिए, भारी का आशय अधिक निर्माण से है। ईशान दिशा में कम से कम निर्माण हो जब कि नैऋत्य दिशा में अधिक निर्माण कर सकते हैं। ईशान का तल नीचा हो जब कि नैऋत्य का ऊँचा, इसी तरह आग्नेय एवं वायव्य का भी तल ईशान से ऊँचा हो, कभी भी ईशान कोण काटा न जाय, इसी तरह प्रत्येक प्रकार के भूखण्ड एवं प्रवेश निर्माण कार्य, सीढी, चबूतरा, कम्पाउंड वाल, खाली भूमि, मार्ग का आरम्भ, दरवाजे, फर्श तल, वाटिका, वृक्ष कूप आदि की अपेक्षा से महत्वपूर्ण संकेत दिए गये हैं। तथा इनके शुभाशुभ परिणाम भी दर्शाया गया है। सामान्यतया दक्षिण एवं नैऋत्य दिशा यम एवं दैत्य से सम्बन्धित समझी जाती है तथा लोग इन्हें सर्वथा अशुभ मानते हैं, किन्तु परिस्थिति वश ऐसा भूखण्ड मकान या दुकान मिल जाता है जिनको त्यागना असम्भव होता है उसके लिए इन संकेतों को ध्यान में रखा जाय तो काफी हद तक दोष निवारण हो जाता है। सही दिशाओं के संतुलित अनुपात में यदि निर्माण किया जाय तो निश्चय ही ये भूखण्ड जिसमें दक्षिण पश्चिम या दोनों ओर सड़क हो, तो ए भी बहुत ही फायदेमंद सावित होगा। मुझे आशा है कि यह पाठ आप लोगों को अच्छे वास्तु के अनुसार गृह निर्माण तथा उसके भेद को जानने में सहयोगी होगा।

3.5 शब्दावली

शाला = ओरडे या कमरे को शाला कहते हैं,

घर = जिसमें एक या दो कमरे हों उसे घर कहते हैं ,

अलिन्द = घर की आगे की दालान को अलिन्द कहते हैं, एवं इसे गड़ भी कहते हैं,

पटशाला = जिसमें एक या दो या तीन दालान हो तो पटशाला कहते हैं ,

झरोखा = खिड़की,

गुंजारी = पटशाला के द्वार के दोनों तरफ खिड़की (झरोखा)युक्त दीवार और मण्डप होता है।इसी में पिछली भाग में तथा दाहिनी और बायीं ओर

जो अलिन्द हो उसे गुंजारी कहते हैं।

मुषा या जालिय	=	छोटा दरवाजा ,
षडदारू	=	खम्भे का अन्य नाम ,
भारवट	=	स्तम्भ के उपर जो तिरछा मोटा काष्ट रहता है उसे भारवट कहते हैं,
पीठ	=	कड़ी –धरण ये तीनों एकार्थवाची है,
मुख्य घर	=	कमरे से पटशाला तक मुख्य घर होता है, घर में जो रसोई घर आदि भाग हैं वे सब मुख्य घर के आभूषण हैं।

टिप्पणी – जिस घर में एक दिशा में एक ही शाला अर्थात् कमरा हो और अन्य दिशाओं में कोई कमरा न होकर बरामदा मात्र हो, उस घर को एकशाल कहते हैं। जिस घर में दो दिशाओं में दो कमरे हों उस घर को द्विशाल कहते हैं। जिस घर में तीन दिशाओं में तीन कमरे हों, उस घर को त्रिशाल कहते हैं।जिस घर की चारों दिशाओं में चार कमरे हों, उस घर को "चतु:शाल "कहते हैं। इस प्रकार वास्तुशास्त्र में गृह के विविध भेद कहे गये हैं।

3.6 उपयोगी पुस्तकें

1. गृहवास्तुप्रदीप, डॉ. (श्री मती) शैलजा पांडेय, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वृहद्वास्तुमाला, सम्पादक – डॉ.ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, डॉ. रवि शर्मा, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन
3. वस्तुसारसंग्रह, लेखक – आचर्य श्री कमलाकान्त शुक्ल, सम्पूर्णा नन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी
4. भवनभास्कर, लेखक – राजेन्द्र कुमार धवन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी संबत 2057, गीता प्रकाशन गोरखपुर
5. वास्तुचिन्तामणि, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बड़जात्या, श्री प्रज्ञाश्रमण दिगम्बर जैन संस्कृति न्यास, ज्योति निलय गरुड़ खाम्ब चौक इतवारी नागपुर
6. शिल्पदीपक, सम्पादक – डॉ. श्री कृष्ण जुगनु, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी

3.7 बोध प्रश्न

1. वास्तु प्रकार के प्रकार को लिखिए ?
2. एकशाल, द्विशाल आदि गृहों के बारे में लिखिए ?
3. गृह निर्माण आयोजना को बताइये ?
4. पूर्वी भूखण्ड के बारे में लिखिए ?
5. दिशाओं के अनुसार भूखण्डों के नाम लिखिए ?

इकाई 4 वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त (भाग 1)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप:

- वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त के बारे में बतायेंगे।
- वास्तु स्वरूप विभाग तथा उसके विविध आयामों को बतायेंगे।
- भूमि प्रकार को बतायेंगे।
- वास्तु की स्थापना नियमानुसार करेंगे।
- दिशा साधन एवं दिशाओं का आनयन पूर्णतया करेंगे।
- वेध के प्रकार एवं इसके स्थितियों को बतायेंगे।
- द्वार विचार करते हुए वास्तु में रंग योजना को भी बतायेंगे।
- रसोई कक्ष वास्तु के अनुसार किधर होना चाहिए इसको भी बतायेंगे।
- द्वार की उंचाई तथा उससे सम्बन्धित बातों को भी बतायेंगे।
- मार्ग एवं प्रवेश द्वार का भी विचार करेंगे।

4.1 प्रस्तावना

मित्रों आप सब भली – भांति जानते है कि हर एक विषय के पीछे उसका कोई न कोई सिद्धान्त अवश्य होता है जिसके अनुसार वह शास्त्र या विषय चलायमान रहता है ठीक इसी प्रकार वास्तु के भी कुछ सिद्धान्त हैं जो बिल्कुल अपने स्थान पर अडिग है मूलरूप से वास्तु शब्द वसु या धरती से उत्पन्न है इसलिए पृथ्वी को मुख्य रूप से वास्तु माना जाता है तथा वह सभी रचनाएं (निर्माण) इत्यादि इस भूभाग पर ही स्थित है इन सभी को वास्तु ही कहते हैं ।अन्य मतानुसार मुख्य रूप से 4 प्रकार के वास्तु माने गये हैं, पहला पृथ्वी, दूसरा मन्दिर, तीसरा वाहन –यान, चौथा आसन है इनमें भी प्रमुख वास्तु पृथ्वी को ही माना गया है। मूलरूप से वह जगह जहां लोग रहते हैं अर्थात वे सभी स्थान जहां मानव निवासादि कार्य करता है, अन्य अर्थों में वस्तुओं के अध्ययन का कार्य भी वास्तु ही कहलाता है अब इन सभी बातों से आप को लगता होगा कि वास्तु का क्षेत्र जब इतना विस्तृत है तो इसका सिद्धान्त भी अत्यन्त सारगर्भित होगा विल्कुल सही बात यही है। परन्तु कुछ मुलभूत सिद्धान्त आपको इस प्रकार समझना चाहिए कि सबसे बड़ी प्रधानता स्थान की है दूसरी प्रधानता कालचक्र अर्थात समय का है जिसमें की आप वास्तु निर्माण कार्य कराने जा रहे है जिसका आशय शुभ मुहूर्त से है, तथा तीसरी प्रधानता सदपात्र व्यक्ति विशेष से है ।क्योंकि व्यक्ति शास्त्र के मर्म को जानेगा तभी तो वह वास्तु के अनुरूप घर का निर्माण कराएगा अत: व्यक्ति को निष्ठावान होना भी आवश्यक है । और भी महत्वपूर्ण बात यह है कि सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि हमारे परिसरीय वातावरण कैसा है क्योंकि समीपस्थ वातावरण में निहित उर्जा का भी हमारे उपर प्रभाव पड़ता है। इसलिए यह प्रयास करना चाहिए की अच्छे स्थान पर गृह निर्माण करें ताकि हमेशा सकारात्मक उर्जा की प्राप्ति हो, तथा वास्तु का मुख्य सिद्धान्त यही है कि गृह या किसी अन्य प्रकार के निर्माण करते समय इन्हीं विषयों का सामंजस्यता स्थापित किया जाता है जिस पर वास्तु शास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त आधारित हैं इससे स्पष्ट होता है कि पृथ्वी से उर्जा का प्रवाह ,भूखण्ड के आकार से उर्जा की प्राप्ति एवं गृह में अच्छे उर्जा की प्राप्ति हो इन सभी तथ्यों के अनुसार ही गृह निर्माण करना चाहिए एवं इसी को वास्तु का आधारभूत सिद्धान्त भी समझना चाहिए ।इस पाठ के अध्ययन के बाद आप वास्तु के विभिन्न नियमों को जानकर सबको बतायेंगे तथा यह पाठ आप को पसन्द आएगा इसी आशय के साथ आप के समक्ष प्रस्तुत है।

4.2 वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त

वास्तु शास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त की बात करें तो यह मुख्य रूप से पञ्च महाभूतों पर आधारित है, क्योंकि गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि कर्म ही प्रधान होता वास्तु शास्त्र भी कर्म पर ही आधारित है तथा कर्म से भाग्य का निर्माण होता है अत: इन पांच आधारभूत सिद्धान्त पृथ्वी (भूमि)-जल –अग्नि –वायु एवं आकाश यह प्रकृति प्रदत्त पांच पदार्थ ही पञ्च महाभूत की कोटि में आते हैं तथा मुख्य रूप से भवन निर्माण इन्हीं के आधारों पर होता है ।चूँकि वास्तु वह विद्या है जिसके अनुसार भवन निर्माण करने से सुख –शान्ति और एश्वर्य की प्राप्ति होती है ।और भी विशेष बात यह है कि जहां तक वास्तु सिद्धांतो की बात करें तो वास्तुशास्त्र का धर्म से भी गहरा है, वास्तु के लक्षणों और स्वरूप को भी जानना आवश्यक है, भूमि परीक्षा और खात परीक्षा का भी विचार करना चाहिए, वास्तु के मुहूर्त भी विना देखे गृह निर्माण नहीं करना चाहिए, द्वार वेध, एवं मार्ग का विचार व्यापारिक प्रतिष्ठान, भवन दोष, शयन

कैसे करें इत्यादि वास्तु शास्त्र के अनुरूप नियमों के अनुसार भवन निर्माण ही वास्तु शास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त समझना चाहिए। कुछ वास्तु सिद्धान्तों को आप को इस प्रकार समझना चाहिए –जैसे मुख्यद्वार सम्बन्धित सिद्धान्त ,पूजा घर सम्बन्धित वास्तु का सिद्धान्त, अन्न आदि भण्डार से सम्बन्धित वास्तु के सिद्धान्त, शयनागार सम्बन्धित वास्तु का सिद्धान्त, चूँकि साधारण नियम यह है कि दरवाजे की चौड़ाई से दो गुनी ऊंचाई होनी चहिए वास्तव में यह बहुत ही उत्तम माप का विधान है, परन्तु यहाँ पर यह सावधानी होनी चाहिए कि चौड़ाई चार फिट या कम से कम साढ़े तीन फुट से कम न हो, इससे स्पष्ट होता है कि द्वार का विस्तार घर के अनुसार ही कल्पित है। समरांगण के अनुसार द्वार की ऊंचाई, चौड़ाई के दोगुने से अधिक होना चाहिए। तथा दरवाजों पर किसी न किसी का चित्र के द्वारा उसकी सजावट का भी विधान है, प्राय:प्राचीन भवनों में, विशेष मन्दिरों में यह परम्परा सर्वत्र विद्यमान है।सादा दरवाजा वर्जित है। परन्तु यह भी ध्यान देना चाहिए कि जो भी आकृति अथवा चित्र का निर्माण आप कर रहे है वह एक हाथ से अधिक का नहीं होना चाहिए तथा कुलदेवता, दो प्रतीहारी अर्थात द्वारपाल, शंख तथा पदनिधि, अष्टमंगला, लक्ष्मी ,सवत्सा गौ आदि का चित्र लगाना द्वार पर उत्तम माना गया है।

गृह के आन्तरिक निर्माण का सिद्धान्त – गृह के भीतर किस दिशा में कौन सा कमरा होना चाहिए इस सिद्धान्त को विभिन्न ग्रन्थों में इस प्रकार बताया गया है। पूर्व में स्नान गृह, आग्नेय कोण में भोजनालय। दक्षिण में शयन कक्ष, मिक्सर इत्यादि रखने का स्थान। नैऋत्य में शस्त्रागार, सूतिका घर, वस्त्र रखने का स्थान, गृह सामग्री, शौचालय, बड़े भाई अथवा पिता का कमरा। पश्चिम में भोजन करने का स्थान। वायव्य में रासन स्टोर रूम, वाहन इत्यादि रखने का स्थान, शौचालय आदि। उत्तर में देवगृह, स्टोर, जल रखने वाला स्थान, धन संग्रह का स्थान। ईशान में देव गृह (पूजा गृह), जल रखने का स्थान। पूर्व आग्नेय में मंथन कार्य करने का स्थान। आग्नेय दक्षिण में घृत रखने का स्थान। दक्षिण – नैऋत्य में शौचालय।नैऋत्य –पश्चिम में अध्ययन कक्ष। पश्चिम- वायव्य में रोदन कक्ष।वायव्य –उत्तर में रति गृह। उत्तर –ईशान में औषधि (दवाई) रखने तथा चिकित्सा कक्ष।ईशान –पूर्व में सभी वस्तुओं के संग्रह कक्ष बनाना चाहिए।

तहखाना पूर्व- उत्तर अथवा ईशान कोण की ओर बनाना चाहिए। भारी सामान नैऋत्य दिशा में रखनी चाहिए। पूर्व – उत्तर अथवा ईशान में भारी समान यथा सम्भव नहीं रखना चाहिए। जिस कार्य में अग्नि की आवश्यकता होती है वह कार्य आग्नेय दिशा में करना चाहिए।

दीपक का मुख यदि पूर्व की ओर करके रखा जाय तो आयु की वृद्धि होती है, उत्तर की ओर करके रखा जाय तो धन की प्राप्ति होती है, पश्चिम की ओर करके रखा जाय तो दुःख प्राप्त होता है, और दक्षिण की ओर करके रखा जय तो हानि होती है। वर्तमान समय में दीपक की जगह बल्ब –ट्यूबलाईट आदि समझना चाहिए।

बीच में नीचा तथा चरों ओर ऊँचा आंगन होने से पुत्र का नाश होता है। यदि घर के पश्चिम भाग में दो दरवाजे या दो कमरे हो तो उस घर में रहने से दुःख मिलता है। दुकान -आफिस -फैक्ट्री में मुखिया को पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुख करके बैठना चाहिए।दुकान की वायव्य दिशा में रखा गया मॉल (वस्तु)शीघ्र बिकता है।फैक्ट्री में तैयार माल वायव्य दिशा में रखना चाहिए। भारी मशीन आदि पश्चिम दिशा में रखना चाहिए।दुकान का मुख वायव्य दिशा में रखने से विक्री अच्छी होती है ,ईशान दिशा में पति –पत्नी को शयन नहीं करना चाहिए

अन्यथा किसी लम्बी बीमारी में फस सकते हैं । पूजा-पाठ- ध्यान , विद्याध्ययन आदि सभी शुभ कार्य पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुख करके ही करना चाहिए ।नृत्यशाला पूर्व –पश्चिम – वायव्य और आग्नेय दिशा में बनानी चाहिए।

घर के नैऋत्य भाग में किरायेदार या अतिथि को नहीं ठहराना चाहिए, अन्यथा वह स्थाई हो सकता है। उन्हें वायव्य में ठहराना ही उचित है। पशुशाला – गौशाला के लिए "वृष "आय शुभ होता है, घुड़साल के लिए ध्वज-वृष-खर आय शुभ होता है। हाथी के निवास में गज और ध्वज आय श्रेष्ठ है, ऊँट के निवास में गज और वृष आय श्रेष्ठ है ।आय निकालने की विधि 6 इकाई में दिया गया है।

भैस –बकरे और भेड़ के रहने का स्थान दक्षिण और आग्नेय के बीच में बनाना शुभप्रद है, गधे और ऊँट स्थान ईशान और पूर्व के बीच में बनाना शुभ है। पूर्व अथवा पश्चिम मुख घोड़ो को बांधने से गृह स्वामी का तेज नष्ट होता है। उत्तर अथवा दक्षिण मुख बांधने से कीर्ति, यश, धन , धान्य की वृद्धि होती है।

वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त पर आधारित गृह निर्माण चक्र

सर्वोच्च गृह शिखर छत पिरामिड आकार का श्रेष्ठ होता है

	वायव्य	उत्तर	ईशान	
	आयुध स्थान पानी टैंक, भण्डार, शौचालय, हरियाली पार्किंग आदि	स्वागत कक्ष बैठक कक्ष ड्राइंग रूम स्टोर रूम आदि	धर्म स्थान ,पूजा गृह जल कुम्भ , भूमिगत स्थान वेसमेंट आदि	
पश्चिम	भोजनस्थान बाल ,अध्ययन सीढि, छत वाटर टैंक	(ब्रह्म स्थान) आकाश खुला खाली स्थान (यहां पर स्तम्भ नहीं होना चाहिए)	स्नान गृह अतिथि गृह अलिन्द (बरामदा)	पूर्व
	शयन कक्ष (वरिष्ठ जनों का) भण्डार, गोडाउन, स्टोर रूम छत पर वाटर टैंक	शयन कक्ष (वेड रूम) लाकर	रसोई घर (किचन) प्रकाश गृह (लाईट रूम)	
	नैऋत्य	दक्षिण	अग्नि	

यह दक्षिण भाग कुछ ऊँचा होना चाहिए

4.2.1 वास्तु स्वरुप एवं विभाग

मनुष्य के निवास योग्य भूमि एवं भवन को वास्तु कहते हैं ,और जिस शास्त्र में भूमि एवं भवन में निवास करने वाले लोगों को अत्यधिक सुविधा – सुरक्षा- आचरण- व्यवहार आदि नियमों एवं सिद्धान्तों के बारे में समुचित रूप से बताया गया है वह शास्त्र वास्तु शास्त्र ही है। आवास प्राणी मात्र के लिए अत्यन्त आवश्यक है तथा इसके कुछ आधारभूत सिद्धान्त भी है, यहां पर वास्तु के तीन विभाग समझना चाहिए –

1. आवासीय
2. व्यावसायिक
3. धार्मिक

आवासीय वास्तु मुख्य रूप से पांच प्रकार के होते हैं।

1. घास – फूस से बनी झोपड़ी
2. लकड़ी से बने घर
3. मिट्टी छप्पर या खपड़ा से बने कच्चे घर
4. इट, चुना, लोहा एवं सीमेंट से बने पक्के घर
5. पत्थर से बनी हवेलियाँ –महल आदि आज के युग में पक्के मकान भी दो प्रकार के होते है एक तो मकान व दुसरा फ्लैट इस प्रकार आवासीय वास्तु के भेद इस प्रकार है। पर्णकुटी –लकड़ी के घर –कच्चे घर – ईट से बने पक्के घर –पत्थर से बने पक्के घर, ईट से बने पक्के घर के दो विभग है पहला मकान दूसरा फ्लैट, इसी प्रकार पत्थर से बने पक्के घर के भी तीन भेद है पहला मकान, दूसरा हवेली, तीसरा महल 2.व्यवसायिक वास्तु – व्यवसायिक वास्तु दो प्रकार की होती है – (1) व्यापारिक (2) औद्योगिक व्यापारिक वास्तु तीन प्रकार के होते है (1) दुकान (2)शोरुम (3)आफिस एवं (4) होटल आदि ये चारों एक मंजिल और बहुमंजिल भेद से तीन प्रकार के होते हैं ,पहला घरेलू इकाई ,दूसरा लघुउद्योग, तीसरा भारी उद्योग इस प्रकार व्यवसायिक वास्तु के दो भेदों का विचार किया जाता है जिसमें समय एवं परिस्थितियों के अनुसार बदलाव किया जस सकता है।

4. धार्मिक वास्तु – धार्मिक वास्तु के पांच भेद होते हैं –

1. मन्दिर, 2. मठ, 3. धर्मशाला, 4. जलाशय, 5. धार्मिक संस्थान

धार्मिक वास्तुओं में मन्दिर आदि से तात्पर्य मन्दिर –मस्जिद – गुरुद्वारा – चर्च आदि पूजास्थलों से है। इस विषय में मठ का अर्थ आश्रम, बौध बिहार आदि से है और जलाशय का अर्थ कुवां –बावड़ी –तालाब व धार्मिक सरोवरों से है।

चूँकि देवता और मानव जहां –जहां निवास करते हैं विद्वान लोग उसे वास्तु कहते हैं।वास्तु चार प्रकार की होती है, भूमि –देवालय-प्रसाद - (यान) –शयन इसमें प्रधान वास्तु भूमि ही है क्योंकि शेष सभी वास्तु भूमि से ही उत्पन्न होते हैं। देवालय आदि वास्तु प्रधान भूमि से उत्पन्न होने एवं उस पर आश्रित होने के कारण वास्तु ही है इसी कारण आचार्यो ने इसे भी वास्तु की संज्ञा दी है ।

4.2.2 भूमि प्रकार

भवन निर्माण के लिए प्लाट का चुनाव करते समय विभिन्न दिशाओं और कोणों के ढलान के अनुसार उस भूखण्ड में बने निवासियों का रुझान प्रभावित होता है।इस विषय में वास्तुविद्या में चारों दिशाओं तथा चारों कोणों में भूखण्ड की ऊंचाई – निचाई के अनुसार "गोविथी "आदि आठ वीथीयों की कल्पना करके उसके शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है।

जैसे – जो भूमि ईशान कोण में ऊँची और नैऋत्य में नीची हो वह भूतवीथी कहलाती है। जो भूमि अग्निकोण में ऊँची और वायव्य कोण में नीची हो तो वह नागवीथी कही जाती है। जो भूमि वायव्य में ऊँची और अग्नि कोण में नीची हो वह वैश्वानरी कहलाती है तथा जो भूमि नैऋत्य में ऊँची और ईशान कोण में नीची हो वह धनवीथी कहलाती है।इसको इस प्रकार समझना चाहिए – यहां पर वास्तु शास्त्र के अनुसार विभिन्न दिशा और कोणों में ऊँची तथा नीची (ढाल)भूमि का फल इस प्रकार समझना चाहिए – पूर्व में ऊँची भूमि सन्तान की हानि करता है ,दक्षिण में ऊँची भूमि धन दायक होता है, पश्चिम में ऊँची भूमि धन एवं यश की वृद्धि करता है, उत्तर में ऊँची भूमि दरिद्रता प्रदान करता है ,आग्नेय अगर यदि वायव्य व ईशान में ऊँची हो तो शुभ अन्यथा अशुभकर समझना चाहिए। नैऋत्य में ऊँची भूमि भी शुख –शान्ति प्रदान करने वाला होता है, वायव्य- ईशान से ऊँची हो तो शुभ अन्यथा अशुभ समझना चाहिए। ईशान में ऊँची भूमि चिन्ता और धनहानि दायक होती है, मध्यभाग में ऊँची भूमि समवृद्धि एवं एश्वर्य प्रदान करने वाली होती है। तात्पर्य यह है कि जिस भूखण्ड पर घर बनाना हो उसमें नैऋत्यकोण सबसे ऊँचा और ईशान कोण सबसे नीचा होना चाहिए। वायव्य कोण ईशान कोण से ऊँचा तथा आग्नेय कोण वायव्य से ऊँचा होना चाहिए।ऐसे भूखण्ड पर निवास करने से जीवन में प्रगति एवं समृद्धि होती है । आठ वीथीयों का ज्ञान -

क्रम संख्या	वीथीनाम	दिशा जिसमें ऊँची	दिशा जिसमें नीची	फल
1 -	गोवीथी	पश्चिम	पूर्व	शुभ
2 -	जलवीथी	पूर्व	पश्चिम	अशुभ
3 -	यमवीथी	उत्तर	दक्षिण	अशुभ
4 -	गजवीथी	दक्षिण	उत्तर	शुभ
5-	भूतवीथी	ईशानकोण	नैऋत्यकोण	अशुभ
6-	नागवीथी	अग्निकोण	वायव्यकोण	अशुभ
7-	वैश्वानरी	वायव्यकोण	अग्निकोण	शुभ
8 -	धनवीथी	नैऋत्यकोण	ईशानकोण	शुभ

निचाई (ढलान) का फल आप को इस प्रकार समझना चाहिए –

निचाई की दिशा / कोण	फल
पूर्व	सुख, समवृद्धि
दक्षिण	व्याधि, भय
उत्तर	मंगल कारक
पश्चिम	धन हानि, रोग
अग्निकोण	यदि नैऋत्य से नीची हो तो शुभ अन्यथा अशुभ समझना चाहिए।

नैऋत्य	व्यसन, व्याधि
वायव्य	यदि नैऋत्य एवं आग्नेय से नीची हो तो शुभ अन्यथा अशुभ समझना चाहिए।
ईशान	सुख, शान्ति
मध्य	अनिष्टकारी

भूखण्ड की भूमि का विभिन्न दिशाओं और कोणों में ऊंचाई के आधार पर उस भूमि को चार श्रेणियों में वर्गीकरण किया जा सकता है। 1. गजपृष्ठभूमि, 2 . कुर्मपृष्ठभूमि, 3 . दैत्यपृष्ठभूमि, 4. नागपृष्ठभूमि इनका लक्षण इस प्रकार है –

भूमि	ऊंचाई - निचाई दिशा	फल
गजपृष्ठ	दक्षिण पश्चिम ,नैऋत्य एवं वायव्य में ऊँची	धनलाभ, आयु वृद्धि
कूर्मपृष्ठ	मध्य में ऊँची और चारों ओर नीची	उत्साह धन वृद्धि
दैत्यपृष्ठ	पूर्व, ईशान एवं आग्नेय में ऊँची तथा पश्चिम में नीची	धन – पुत्र एवं पशुओं की हानि
नागपृष्ठ	पूर्व –पश्चिम की ओर लम्बी, उत्तर दक्षिण में ऊँची और मध्य में नीची	पत्नी हानि ,पुत्र हानि व शत्रु वृद्धि

इस प्रकार आप को भूमि के प्रकार को जानना चाहिए ।तथा भूमि के आकार रंग एवं शब्द आदि गुणों से युक्त भूमि का चयन करने के बाद बुद्धिमान भूस्वामी को देवपूजा करनी चाहिए जिससे कि वहां की नकारात्मक शक्तियाँ दूर होकर सकारात्मक शक्तियों का संचरण होना नियमित हो जाए।

4.2.3 देव स्थान विचार

सभी देव वास्तु के अनुसार प्रत्येक भूखण्ड में विद्यमान होते हैं, जिसके द्वारा विभिन्न देवी देवतओं की स्थिति भूखण्ड में दर्शायी गयी है जिसके द्वारा प्रत्येक स्थान के महत्व को जाना जा सके। तथा इस प्रकार के वास्तु क्रम पद को विन्यास कहते हैं, आइए अब इसको जानते हैं –

1. सकल- इसमें मात्र एक पद होता है तथा यह यतियों के लिए अनुकूल होता है ,इसमें अग्नि होता है व इसमें कुश विछाया जाता है। इस पर पितृ पूजन, देव पूजन व गुरु पूजन का कार्य सम्पन्न होता है , इसके चारों ओर खिची गयी रेखायें भानु –अर्कि –तोय एवं शशि कहलाती है।

2. पेचकम्- पेचक पद विन्यास में चार पद होते हैं, इसमें पिशाच –भूत –विष –ग्रह एवं राक्षसों की पूजा होती है। विधियों के ज्ञाता विधि पूर्वक इस प्रकार के कार्यों के लिए इस पद विन्यास को बनाते हैं, वह इसमें सभी विधियों का पालन करते हुए निर्मल व शिव को प्रतिष्ठित करते हैं।

3. पीठम् – पीठ संज्ञक पद विन्यास में नौ पद होते हैं। इसके चारों दिशाओं में चारों वेद, ईशान आदि कोणों में क्रमशः जल –अग्नि –आकाश और वायु होते हैं व मध्य में पृथ्वी होती है।

4. महापीठम्- महापीठ पद विन्यास में सोलह पद होते हैं, एवं इसमें पच्चीस देवता होते हैं। इन पदों में ईशान कोण से आरम्भ करके क्रमशः देवता इस प्रकार होते हैं, ईश – जयन्त – आदित्य –भृश – अग्नि –वितथ –यम –भृंगराज –पितृ –सुग्रीव – वरुण –शोष – मारुत – मुख्य –सोम एवं अदिति ब्रह्मा पदों के देवता कहे गये हैं। अन्तर के पदों के देवता आपत्स –आर्य –सावित्र –विवस्वान –इन्द्र –मित्र –रुद्रज – एवं भूधर हैं।केन्द्र में ब्रह्मा स्थित हैं तथा ब्रह्मा को सबका स्वामी कहा गया है।

5. उपपीठादि - उपपीठ वास्तु विन्यास में पूर्वोक्त देवता अपने पदों के अतिरिक्त अपने दोनों पार्श्वों में एक-एक पद की वृद्धि प्राप्त करते हुए स्थित होते हैं स्थापति को चाहिए कि उन देवों के दोनों पार्श्वों में एक-एक पद की वृद्धि तब तक करें जब तक इन्द्रकान्त पद न बन जाय।

जिन वास्तु नियमों में सम संख्या में पद हो, उन्हें चौसठ पद वाले वास्तु के समान एवं विषम संख्या में पद हो तो इक्यासी पद वाले वास्तु के समान देवों की स्थापना करनी चाहिए। सभी वास्तु विन्यासों में मण्डूक संज्ञक वास्तुपद –विन्यास सभी निर्माण कार्यों के लिए उपयुक्त होता है, क्योंकि यह तांत्रिक विधि पर आधारित होता है। उपर्युक्त दोनों पद विन्यासों में वास्तु पद के मध्य में ब्रह्मा आदि देवता स्थापित किए जाते हैं।चौसठ पद वाले मण्डूक पद का निर्माण आप को इस प्रकार करना चाहिए –

ग्राम वास, राज महल, और नगर में चौसठ पद का वास्तु, सर्व जाति के घरों के लिए इक्यासी पद वाला वास्तु, जीर्णोद्वार में उनचास पद का वास्तु, सर्वजाति के प्रसाद और मण्डप के लिए सौ पद का वास्तु, कुवां ,बावड़ी, तालाब और बन में एक सौ छियानबे पद का वास्तु पूजा जाना चाहिए।

चौसठ पद वाले वास्तु का स्वरूप – चौसठ पद के वास्तु में ब्रह्मा चार पद के, अर्यमा आदि चार देव चार चार पद के, मध्य कोण के आपवत्स आदि आठ देव दो दो पद के, उपर के कोण के आठ देव आधे – आधे पद के और शेष देव एक एक पद के हैं।

इक्यासी पद के वास्तु का स्वरूप – इक्यासी पद के वास्तु में नव पद के ब्रह्मा, अर्यमा आदि चारदेव छः छ; पद के मध्यवर्ती कोण के आठ देव दो दो पद के और उपर के बत्तीस देव एक एक पद के होते हैं।

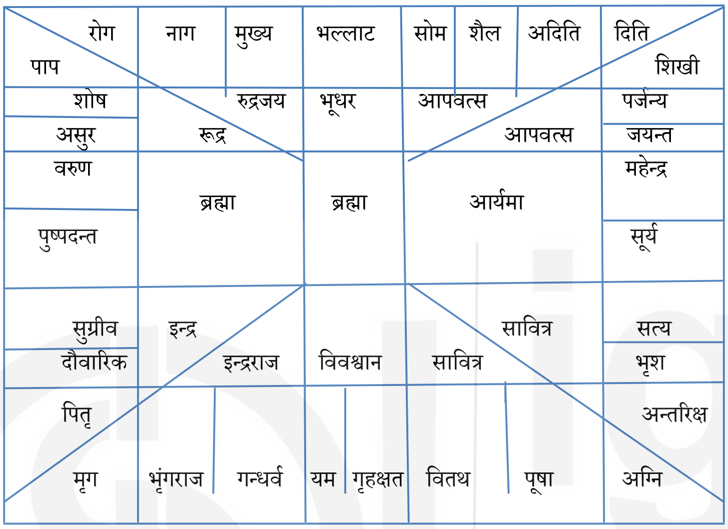
पूर्व

1 ईश	2 पर्यन्य	3 जयन्त	4 इन्द्र	5 सूर्य	6 सत्य	7 भृश	8 आकाश	9 वायु
32 दिति	33 आप	33 आप	37 मरीचि	37 मरीचि	37 मरीचि	34 सावित्र	34 सावित्री	10 पूषा
30 अदिति	43 आपयत्स	43 आपयत्स	45 मरीचि	45 मरीचि	45 मरीचि	39 सविता	39 सविता	12 वितथ
सर्प	पृथ्वीधर	पृथ्वीधर	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान	विवश्वान	बृहत्क्षत
29 उत्तर	43 सोम	43 पृथ्वीधर	45 पृथ्वीधर	45 ब्रह्मा	45 ब्रह्मा	39 ब्रह्मा	39 विवश्वान	13 विवश्वान यम

28 भल्लाट	43 पृथ्वीधर	43 पृथ्वीधर	45 ब्रह्मा	45 ब्रह्मा	45 ब्रह्मा	39 विवश्वान	39 विवश्वान	14 गन्धर्व
27 मुख्य	42 रूद्र	42 रूद्र	41 मित्र	41 मित्र	40 मित्र	40 विष्णु	40 विष्णु	15 भृंगराज
26 अठी	36 शेष	36 शेष	41 मित्र	41 मित्र	41 मित्र	35 इन्द्रजय	35 इन्द्रजय	16 मृग
25 रोग	24 पापयक्ष्मा	23 शेष	22 असुर	21 वरुण	20 पुष्पदन्त	19 सुग्रीव	18 दौवारिक	17 पितृ

पश्चिम

॥ चौसठ पद वाला वास्तु चक्र ॥



॥ इक्यासी पद वास्तुचक्र ॥



इस प्रकार चक्र बनाकर देवों की स्थापना करके पूजन इत्यादि कर के वास्तु शान्ति कर सकते हैं ,परन्तु मर्म स्थान का ध्यान रखकर निर्माण कार्य करना चाहिए – घर की एक सौ आठ भाग

करके उसमें एक मूर्ति के आकार की वास्तु पुरुष की आकृति की कल्पना करें। इस वास्तु पुरुष का मस्तक, हृदय, नाभि तथा शिखा जहां हो वहां स्तम्भ नहीं रखना चाहिए।

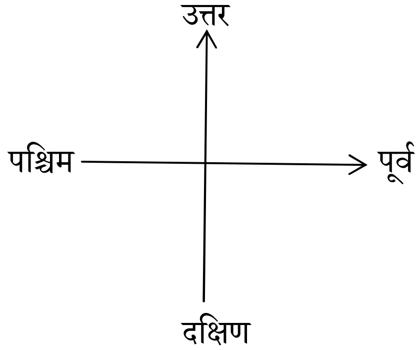
ईशान कोण में वास्तु का मस्तक होता है उसपर ईश देव की स्थापना होती है, दोनों कानों पर क्रम से पर्जन्य और दिति देव को, गले पर आप देव को, दोनों कंधों पर क्रम से जय और अदिति देवों को, दोनों स्तन पर अर्यमा, और भूधर (पृथ्वीधर)देवों की स्थापना होती है। तथा हृदय पर आपवत्स को, दाहिनी भुजा पर इन्द्रादि (इन्द्र ,सूर्य ,सत्य, भृश और आकाश) पांच देवों को स्थापित करना चाहिए। वायीं भुजा पर नाग आदि (नाग, मुख्य, भल्लाट, कुबेर और शैली) देवों की स्थापना होती है। दाहिने हाथ पर सावित्री और सविता देवों को स्थापित करना चाहिए। वाएं हाथ पर रूद्र और रुद्रदास देवों की स्थापना होती है।जन्घा पर क्रम से मृत्यु और मैत्र देवों की स्थापना होती है। नाभि के पृष्ठ भाग पर ब्रह्म देव को ,गुप्तइन्द्रिय स्थान पर इन्द्र और जय देवों की स्थापना की जाती है। दोनों घुटनों पर अग्नि और रोग देव को दाहिने पैर पर नली पर स्थापित करना चाहिए। पूषादि सात (पूषा ,वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व, भृंग और मृग) देवों को वाये पैर की नली पर स्थापित करना चाहिए। नंदी आदि (नंदी ,सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शेष और आप यक्ष्मा) इन सात देवों को वहीं स्थापित करना चाहिए तथा पैर के तलुए में पितृ देव की स्थापना करनी चाहिए। तथा भवन निर्माण वास्तु के मर्म स्थान को छोड़कर करना चाहिए।

4.2.4 दिशा साधन

दिशाओं का निर्धारण वास्तु निर्माण करने से पूर्व अवश्य करना चाहिए इसका विचार किये बिना निर्मित किये गये वास्तु निर्माण अनपेक्षित परेशानियों का जन्म देता है। मन्दिर –मकान –धर्मशाला –दुकान –कारखाना –ओषधालय –अनाथालय –छात्रावास – वाचनालय –पाठशाला –महाविद्यालय –आश्रम –कार्यालय आदि कोई भी निर्माण कार्य करने से पूर्व दिशाओं का निर्धारण कार्य अवश्य कर लेना चाहिए, तथा दिशाओं के अनुकूल –प्रतिकूल फलों का विचार करके ही निर्माण कार्य की योजना बनाना उपयुक्त होता है दिशाओं की अनुकूलता जहां स्वामी को धन-धान्य –आयु –बल –आरोग्य लाभकारक होती है। वहीं इनकी प्रतिकूलता अर्थ हानि ,पारिवारिक एवं शारीरिक विपत्तियों ,परेशानियों ,कलह, विवाद और विसंवादी भी बनाती है। प्रकृति में दश दिशायें मानी जाती है।

चार प्रमुख दिशाएं - पूर्व –पश्चिम –उत्तर –दक्षिण
चार विदिशाए – ईशान –आग्नेय – नैऋत्य –वायव्य

तथा उर्ध्व अर्थात उपर एवं अधो अर्थात निचे (पाताल की ओर) दिशा निर्धारण की वर्तमान युग में चुम्कीय सुई के द्वारा दिशा निर्धारण किया जाता है, चुम्बकीय सुई एक एसी सुई है जो चिन्हांकित वृताकार डायल पर स्वतन्त्रता पूर्वक घुमती है।यह डायल सीधे ही या पारे पर लगाया जाता है। उत्तर की ओर संकेत करने से वहां पर बने डायल में 360 डिग्री के चिन्हों द्वारा सभी दिशाओं का निर्धारण कर लिया जाता है। चुम्कीय सुई पृथ्वी के चुम्कीय धारा के अनुसार उसके समानान्तर हो जाती है, अत: सदैव वह उत्तर दिशा में ही स्थिर रहती है। दिशा निर्धारण की यह विधि सरल तथास व्यवहारिक है शास्त्रोक्त विधि थोड़ा कठिन प्रतीत होता है उसके बजाय दिशा ज्ञान इस विधि से आसानी से कर सकते हैं।



दिशाओं का निर्धारण सूर्योदय दिशा के आधार पर किया जाता है ,सूर्योदय की दिशा पूर्व कहलाती है।सूर्यास्त की दिशा पश्चिम दिशा कहलाती है इसके अतिरिक्त सूर्योदय की दिशा से बायें ओर समकोण पर उत्तर दिशा तथा दायीं ओर समकोण पर दक्षिण दिशा होती है। इसके मध्य में चार विदिशायें होती है।उत्तर एवं पूर्व के मध्य में ईशान विदिशा होती है ,पूर्व एवं दक्षिण के मध्य में आग्नेय विदिशा होती है, दक्षिण एवं पश्चिम के मध्य में नैऋत्य विदिशा होती है।पश्चिम एवं उत्तर के मध्य में वायव्य विदिशा होती है। इन आठ दिशाओं का मानव जीवन पर इस प्रकार प्रभाव पड़ता है –

1. पूर्व. यह पितृ दिशा है, मकान का पूर्वी भाग जोकि खुला होना चाहिए इस भाग को ढक देने पर भवन स्वामी रहित हो जाता है अर्थात अवसान हो जाता है इसका आशय यह है कि परिवार का पुरुष प्रधान सदस्य का अवसान हो जाता है।
2. आग्नेय. स्वास्थ्य प्रदाता है।
3. दक्षिण. समवृद्धि –सुख तथा संतोषदायक है।(इसीलिए अन्य दिशाओं की तुलना में सन्तुलन बनाने के लिए इस दिशा को भारी रखना चाहिए)
4. नैऋत्य. व्यवहार, मनोभावना तथा अकाल मृत्यु के लिए उत्तरदायी है।
5. पश्चिम. प्रगति, उत्कर्ष तथा प्रतिष्ठा प्रदाता है।
6. वायव्य. अन्य लोगों से सम्बन्धों का नियमन करता है जो हार्दिकता एवं आतिथ्य से निर्मित है।
7. उत्तर. यह दिशा माता की दिशा है यह स्थान रिक्त न रखे जाने पर मकान निर्जन हो जाता है क्योंकि परिवार की महिला सदस्यों की मृत्यु हो जाने से परिवार बिना स्त्रियों का हो जाता है
8. ईशान. पुरुष वंश की निरन्तरता को सुनिश्चित करता है। मकान में इस दिशा को काट देने से पुरुष नहीं होते हैं।

4.3 वेध विचार

सात प्रकार के वेध बताये गये हैं परन्तु सर्व प्रथम सभी प्रकार से भूमि के दोषों को शुद्ध करके घर की मुख्यशाला से कार्य आरम्भ किया जाना चाहिए। इसके बाद दुसरे स्थान का निर्माण कार्य किया जाता है किसी स्थान में वेध आदि दोष न आये इस प्रकार से कार्य करें, वेध सर्वत वर्जनीय है।

तल वेध, कोण वेध, तालू वेध, कपाल वेध, स्तम्भ वेध तुला वेध और द्वार वेध ये सात प्रकार के वेध हैं।

घर की भूमि सम –विषम, उबड़ –खाबड़ हो, द्वार के सामने कुम्भी हो, दूसरों के घर का पानी की नाली या रास्ता हो तो तल वेध समझें और घर के कोण ठीक न हों तो इसे कोण वेध समझना चाहिए।

एक ही खण्ड में घर की पट्टियाँ ऊँची – नीची हो तो यह तालू वेध होता है। द्वार के उत्तर अंग में मध्यभाग में नीची पट्टी आये तो शिरवेध समझना चाहिए।

घर के मध्य भाग में एक स्तम्भ हो अथवा अग्नि या जल का स्थान हो तो इस घर का हृदय शल्य समझें, इसे स्तम्भ वेध कहते हैं।

घर की निचे की तथा ऊपर की मंजिल न्यून तथा अधिक हो तो तुला वेध समझना चाहिए। परन्तु पत्तियों की संख्या समान हो तो दोष नहीं होता है।

घर के दरवाजे के सामने कोई वृक्ष, कुआँ, स्तम्भ, कोना या कील (खूंटी) हो तो यह द्वारवेध है। परन्तु घर की ऊंचाई से दोगुनी जमीन छोड़कर उपरोक्त कोई भी वेध हो तो यह दोष नहीं होता।

वेध का परिहार आप को इस प्रकार समझना चाहिए कि घर की उन्चैसे दोगुनी और मन्दिर की ऊंचाई से चारगुनी भूमि को छोड़कर इसके वेध आदि का आगे कोई छोड़कर हो तो इसका कोई दोष नही लगता ऐसा विश्वकर्मा का मत है।

वेध का फल आपको इस प्रकार समझना चाहिए - तलवेध से कुष्ट रोग, कोण वेद से उच्चाटन, तालू वेध से भय, स्तम्भ वेध से कुल का विनाश, कपाल वेध से और तुला वेध से धन का नाश और क्लेश होता है। इस प्रकार वेध का फल जानकर शुद्ध घर बनाना चाहिए, और भी विशेष बात यह है कि औरों के घर में जाने का रास्ता अगर आप के द्वार से होकर जाता है तो उसको मार्ग वेध कहते हैं। यह भी विनाश कारक ही होता है, वृक्ष का वेध हो तो शोक प्राप्त होता है। पानी के नाले का वेध हो तो धन का व्यय होता है, कुएं का वेध हो तो वायु रोग होता है। शिव –सूर्य आदि देवतओं का वेध हो तो स्त्री के लिए कष्टदायक होता है। ब्रह्मा के सामने द्वार हो तो कुल का नाश होता है।

एक वेध से कलह दो वेध से घर की हानि, तीन वेध से घर में बहुत का निवास, चार वेध से घर का क्षय और पांच वेध से महामारी प्लेग होता है।

4.3.1 द्वार विचार

वास्तु निर्माण करते समय सभी भागों का अपना –अपना महत्व होता है। अन्य अंगों की भांति दरवाजा या द्वार बनाते समय भी दिशाओं का विचार करना शुभ फल प्राप्ति के लिए आवश्यक है। निर्माण में दरवाजे एवं खिडकियां यदि विधि अनुसार सही दिशा में लगाई जाय तो निश्चित ही व्यक्ति लाभ का भागी बनेगा।शास्त्रों की माने तो चारों ही दिशाओं में द्वार बनाया जा सकता है किन्तु इसका स्थान निर्धारित करना आवश्यक है।

पूर्व दिशा के द्वार को विजय द्वार, दक्षिण द्वार को यम द्वार, पश्चिम द्वार को मकर द्वार तथा उत्तर द्वार को को कुवेर द्वार कहते हैं। ये सभी नामानुसार फलदायी होता है। इसलिए दक्षिण दिशा में

द्वार कभी नहीं बनाना चाहिए, यदि बनाना हो तो मध्य भाग में नहीं बनावें, पूर्व दिशा के आठ भागों में से तीसरे या चौथे भाग में तथा दक्षिण दिशा में दुसरे या छठवें भाग में द्वार बनाना शुभ प्रद होता है।

पूर्व द्वार – इसे विजय द्वार कहते हैं यह उत्तम माना गया है ,पूर्व द्वार के आठ भागों में से तीसरे एवं चौथे भाग में द्वार बनवाना चाहिए। प्रात: कालीन सूर्य के किरणों से शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शान्ति, लौकिक सुख की प्राप्ति तो होती ही है साथ ही धन –धान्य पुत्रादि की प्राप्ति होती है। एवं तृतीय भाग के द्वार से धन प्राप्ति, चतुर्थ भाग के द्वार से राज सम्मान एवं प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है।

दक्षिण द्वार – इसे यमद्वार कहते हैं, इसे अशुभ माना जाता है, अनायास ही अशुभ घटनाएं जैसे वाहन दुर्घटना, व्यसन, बीमारी, आर्थिक हानि, आदि इसके कारण बनते हैं। इसलिए दक्षिण में मुख्य द्वार नहीं बनावें। यदि द्वार बनाना आवश्यक है तो दुसरे अथवा छठवें भाग में बनाना चाहिए। एक अन्य मतानुसार चतुर्थ पंचम या षष्ठ भाग में दक्षिण द्वार बना सकते हैं। चतुर्थ भाग में पुत्र प्राप्ति ,पंचम में धन प्राप्ति तथा षष्ठ में यश प्राप्ति होती है।

पश्चिम द्वार – इसे मकर द्वार कहते हैं। यह मध्यम फल दायक है। इसके कारण शोक, दुःख स्त्रीरोग, कलुषित मनोवृत्ति होती है। अन्यथा नियमों से धनागम होने पर भी धन स्थिरता को प्राप्त नहीं होता, पश्चिम द्वार बनाना अपरिहार्य हो तो तीसरे या पांचवें भाग में द्वार बनाना उपयुक्त है।अन्यमतानुसार पश्चिम दिशा के आठ भागों में से तीसरे ,चौथे, पांचवें या छठवें भाग में घर बना सकते हैं।तीसरे भाग में दरवाजा बनाने से धनप्राप्ति चतुर्थ भाग में धनागम पंचम भाग में सौभाग्य प्राप्ति तथा छठवें भाग में धन लाभ होता है।

उत्तर द्वार – इस द्वार को कुबेर द्वार कहते हैं, इससे व्यापारी वृत्ति, सत्यभाषण, हितमित वचन, व्यवहार, प्रगति एवं धन वृद्धि होती है। इसके तीसरे या पाचवें भाग में द्वार निर्माण उपयुक्त होता है। अन्य मतानुसार चौथे ,पाचवें या छठवें भाग में द्वार निर्माण करना चाहिए। चतुर्थभाग में द्वार बनाने से सम्पत्ति वृद्धि, पाचवें भाग में द्वार होने से सुख प्राप्ति, तथा छठवें भाग में द्वार होने से राज प्रतिष्ठा, मान –सम्मान की प्राप्ति होती है।

ईशान दिशा में मुख्य प्रवेश द्वार होने से एश्वर्य लाभ, वंश वृद्धि, सुसंस्कारित सन्तान तथा शुभ फल प्राप्ति होती है। आग्नेय दिशा में मुख्य प्रवेश द्वार होने से स्त्री रोग, अग्निभय, आत्मघात, आदि होने की सम्भावना होती है। नैऋत्य दिशा में मुख्य प्रवेश द्वार होने से अकाल मृत्यु, आत्मघात, भूत –प्रेत वाधा, आदि अशुभ घटनाएं होने की सम्भावना होती है।

वायव्य दिशा में मुख्य प्रवेश द्वार होने से घर कोई और ले लेता है, तथा अधिक धन खर्च करने के उपरान्त मानसिक अशान्ति होती है।

वास्तु प्रवेश – वास्तु प्रवेश चार प्रकार के होते हैं। 1. उत्संग प्रवेश 2. हिनवाहु प्रवेश 3. पूर्ण वाहु या अपसव्य प्रवेश 4. प्रत्यक्ष या पृष्ठभंग प्रवेश

1. उत्संग प्रवेश – वास्तु द्वार अर्थात मुख्य प्रवेश द्वार तथा प्रवेश द्वार एक ही दिशा में हो तो उसे उत्संग द्वार कहते कहते हैं। ऐसा द्वार सौभाग्य कारक, सन्तान वृद्धि, धन –धान्य एवं विजय प्रदान करने वाला होता है।

2. हीनवाहु या सव्य प्रवेश –यदि मुख्य प्रवेश द्वार प्रवेश करते समय बायीं ओर हो अर्थात प्रथम प्रवेश के पश्चात वाई ओर जाकर मुख्य द्वार में प्रवेश हो तो उसे हीनवाहू प्रवेश कहते हैं। यह अशुभ माना जाता है, ऐसे घर में निवास करने वाले अल्प धन वाले, अल्प मित्र वाले, दरिद्री स्त्री के अधीन रहने वाले तथा अनेक रोगों से पीड़ित रहते हैं।

3. पूर्णवाहू या अपसव्य प्रवेश – मुख्य घर का द्वार प्रवेश करते समय दाहिने ओर हो अर्थात प्रथम प्रवेश के समय दाहिनी ओर जाकर मुख्य घर में प्रवेश हो तो उसे पूर्णवाहु प्रवेश कहते हैं। ऐसे मकान में रहने वाले पुत्र –पौत्र –धन तथा सुखों को प्राप्त करते हैं।

4. प्रत्यक्ष या पृष्ठभंग प्रवेश – यदि मुख्य घर की दिवार घूमकर घर के मुख्य द्वार में प्रवेश होता हो तो उसे प्रत्यक्ष या पृष्ठभंग प्रवेश कहते हैं। ऐसे घर के निवासी भी सन्तान सुख से वंचित, धन से हीं तथा दरिद्र होते हैं।

द्वार निर्माण करते समय यह भी ध्यान देना चाहिए कि द्वार से घर में जाने के लिए सृष्टिमार्ग अर्थात दक्षिण की ओर से प्रवेश हो, इसी ही सीढियाँ एवं दरवाजे बनाना चाहिए। मुख्य द्वार के बराबर अन्य सभी द्वार बनाना चाहिए अर्थात हर एक द्वार के उतरंग समसुत्र में रखना चाहिए। या मुख्य द्वार में आजे ऐसा सकरा दरवाजा बनाना चाहिए । यदि मुख्य द्वार के एक ओर खिड़की बनाना हो तो उसे इच्छानुसार कर लें। पश्चिम दिशा वाले मुख्य घर में दो द्वार और शाला हो तो ऐसे घर में रहने से परिवार जन को दुःख होता है। जिस घर के द्वार एक कमल वाले यानि एक ही पलड़ा हो या विल्कुल कमल हीन यानि पलड़ा रहित हो तथा द्वार निचे की अपेक्षा उपर की ओर ज्यादा चौड़ा हो तो ऐसा घर धन से हीं होता है।

4.3.2 वास्तु में रंग आयोजना

रंगों का मनुष्य के जीवन पर मानसिक एवं शारीरिक दोनों ही पक्षों पर प्रभाव पड़ता है। किसी रंग के कमरे में बैठने से मं प्रसन्नचित होता है तो किसी रंग के कमरे में अत्यन्त मलिन विचार आते हैं। शात्रों में पांच परमेष्ठी के आध्यात्मिक स्वरूप के अनुरूप रंगों का विवेचन किया गया है। जैन और पांच रंगी ध्वज में इसका विचार रखा जाता है। विभिन्न पूजा –पाठ -जाप आदि कार्य करते समय वस्त्र- माला-पुष्प आदि के रंगों का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है। अतएव वास्तु के रंग आयोजना भी एसी होनी चाहिए कि मनोहारी एवं शुभ शान्ति का प्रतीक हो।

वास्तु रंग योजना	परिणाम
आसमानी रंग	शान्ति – उत्साह का प्रतीक
लाल	मध्यम
चाकलेटी	अशुभ एवं विपरीत प्रभाव प्रदान करता है
काला	अशुभ
गुलाबी	शुभ
सफेद	शान्ति ,एवं मानसिक स्थिरता प्राप्ति होती है
नीला हरा चूने में मिलाकर	उत्तम फल दायक है।

इस प्रकार उपरोक्त चक्र के अनुसार विचार करके भवन का ऐसे रंग से कलर करना चाहिए जो शुभ हो तथा लोगों को लिए देखने में आकर्षक लगे एवं शुभ फल प्रदान करने वाला भी हो।

4.3.3 रसोई कक्ष विचार

मित्रों जैसा की आप जानते हैं कि रसोई घर में परिवार के लिए भोजन निर्माण किया जाता है, भोजन सिर्फ उदर पूर्ति हेती न होकर शुद्ध एवं सात्विक होना आवश्यक है, ऐसा भोजन तन तथा मन दोनों को पवित्र बनाता है। प्राचीन समय से लेकर आज तक प्रचलित भाषा में रसोई के घर को चौका कहा जाता है। चौका का अर्थ है चार –चार प्रकार की शुद्धि पूर्वक जो आहार बनाया जाय, वही आहार मुनि आदि संयमी अतिथिओं के लिए योग्य होता है।ऐसे चौके में बना आहार सबके लिए लाभदायक होता है। अतएव निवास में रसोई घर या चौका वास्तुशास्त्र के अनुकूल दिशाओं की अपेक्षा रखकर ही निर्माण कार्य करना चाहिए, रसोई घर का चौका ऐसा होना चाहिए कि वहां से सात्विक जनों को भी भोजन कराने में कोई समस्या न हो तथा उसके धर्म का निर्वहन हो सके।

रसोई घर के लिए सर्व श्रेष्ठ दिशा आग्नेय मानी जाती है। आग्नेय दिशा में अग्नि तत्व माना जाता है, इसलिए अशुभ घटनाओं का अग्नि तत्व निवारण करती है।अग्नि का कार्य जलाना या भस्म करना है ,नियमित रूप से अग्नि या रसोई घर को आग्नेय दिशा में रखने से घर की सभी आपत्तियां भस्म हो जाती है। पृथक रूपेण आग्नेय दिशा में ही निर्मित कक्ष में चूल्हा –सिलिंडर –भोजन के उपकरण आदि आग्नेय दिशा में रखना चाहिए।

विभिन्न दिशाओं में रसोई घर के निर्माण का निम्लिखित फल होता है –

क्रम संख्या	दिशा	फल	विशेष फल
1	ईशान	अशुभ	प्रगति अवरोध
2	आग्नेय	सर्व श्रेष्ठ	सर्व सुख, सम्पदा, समाधान
3	नैऋत्य	अशुभ	चोरी भय
4	वायव्य	अशुभ	धन नाश का भय
5	पूर्व	मध्यम	परेशानियों में वृद्धि
6	पश्चिम	अशुभ	कष्ट, शोक, अशान्ति, नीरस भोजन
7	उत्तर	कलह	कलह –वाद- विवाद अशान्ति
8	दक्षिण	अशुभ	अपयश, मृत्यु भय

रसोई घर बनाते समय स्त्रियों का मुख पूर्व की ओर होना चाहिए। यह आरोग्य वर्धक है, बाहर के द्वार से चूल्हा नहीं दिखना चाहिए ,ऐसा होने पर परिवार को पूर्ण हानि होने की सम्भावना होती है। रसोई घरमे उससे सम्बन्धित सामग्री यन्त्र तथा ग्राइन्डर, मिक्सर ये सभी चीजे वहीं रखना चाहिए, यह सुख समाधान दायक होता है।रसोई घर में निरर्थक वार्तालाप करना अनिष्ट कारक होता है। ऐसे भूखण्ड जिसमें उत्तर एवं पूर्व में सड़क है, उनमें ईशान में पाकशाला (रसोई घर) बनाने से पारिवारिक कलह तथा धनहानि का संताप भोगना पड़ता है। यदि पूर्व एवं दक्षिण में सड़क है तथा आग्नेय में रसोई घर है तो अति उत्तम होता है। यदि भूखण्ड में उत्तर में सड़क

हो तथा मकान में उत्तर में रसोई घर बनाया जाय तो यह अशुभ तथा विपरीत फल दायक है। यदि भूखण्ड के दक्षिण एवं पश्चिम में सड़क हो तथा किसी कारण आग्नेय में रसोई घर बनाना सम्भव न हो तो इसका निर्माण नैऋत्य अथवा वायव्य कमरे के आग्नेय भाग में रसोई घर बनाया जा सकता है। यदि भूखण्ड के दक्षिणी भाग में सड़क हो तो वायव्य में रसोई घर बनाएं तथा कमरे के आग्नेय भाग में रसोई का प्लेटफार्म बनावें। यदि भूखण्ड के उत्तरी एवं पश्चिमी भाग में सड़क हो तथा वायव्य भाग में रसोई घर बनाया जाय तो इसके विलक्षण परिणाम होंगे। अतिथियों की संख्या में वृद्धि होने के कारण घर में रौनक तो रहेगी परन्तु खर्च अधिक होने से गृहीणी के चेहरे पर रौनक कम हो जाता है। इस लिए विचार करके ही रसोई घर का निर्माण आप को करना चाहिए।

4.3.4 पथ एवं प्रवेश द्वार

जिन भूखण्डों के प्रवेश के समक्ष विदिशाओं में पथ हों उनमें प्रवेश द्वार बनाने के लिए विशेष सावधानी रखनी चाहिए। निम्नलिखित सारणी के अनुरूप प्रवेश रखने से विपरीत वास्तु प्रभाओं से सुरक्षा होती है। एवं उत्तम फलों की प्राप्ति होती है।

भूखण्ड से लगी सड़क एवं सड़क की दिशा	मुख्य प्रवेश द्वार	दोष निवारण के लिए अन्य दिशाओं में प्रवेश द्वार करने से दोष दूर होता है
पूर्वी ईशान	पूर्वी आग्नेय	उत्तरी ईशान
पूर्वी आग्नेय	पूर्वी ईशान	-
दक्षिणी आग्नेय	दक्षिणी आग्नेय	उत्तरी ईशान
दक्षिणी नैऋत्य	दक्षिणी आग्नेय	पूर्वी ईशान
पश्चिमी नैऋत्य	पश्चिमी वायव्य	उत्तरी ईशान
पश्चिमी वायव्य	पश्चिमी वायव्य	पूर्वी ईशान
उत्तरी वायव्य	उत्तरी ईशान	-
उत्तरी ईशान	उत्तरी ईशान	पूर्वी ईशान

4.4 सारांश

इस पाठ में वास्तु के विभिन्न आधारभूत सिद्धान्तो के बारे में बताया गया है तथा इसके अनुरूप भवन निर्माण करने से निश्चित ही शुभ फल की प्राप्ति होगी एवं मानव जीवन के लिए कल्याणकारी सिद्ध होगा चूँकि कोई भी नियम बनाने का मूल उद्देश्य भी यही होता है कि उस नियम का परिपालन करने से निश्चित ही समाज को लाभ प्राप्त हो। इसी प्रकार हर व्यवसाय का भी अपना एक आधार होता है उसके अनुसार चलने पर निश्चित ही व्यक्ति समाज में प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। जैसे – शेयर मार्केटिंग से सम्बन्धित कार्य करने वाले को अपने घर से अथवा आफिस के उत्तर दिशा को विकसित करना चाहिए, चूँकि हर व्यवसाय का अपना एक आधारभूत सिद्धान्त होता है अत: उस दिशा को विकसित करते हैं तो निश्चित ही व्यवसाय में वृद्धि होगी। शेयर मार्केट में व्यवसाय करने वालों को शेयर ट्रेंडिंग का मूल दिशा उत्तर होती है,

इसलिए इस दिशा को विकसित करने से अधिक लाभ होगा। आफिस में नैऋत्य कोण में मुख करके बैठना चाहिए, आफिस के उत्तर दिवार में एक घड़ी लगाना चाहिए एवं घड़ी का रंग हरा होना चाहिए। आफिस के उत्तर दिशा का तत्व जल तत्व होता है इसलिए इसी दिशा में दिवार पर पानी से सम्बन्धित चित्र लगा सकते हैं। साथ ही उत्तर दिशा कुवेर की दिशा भी होती है यहां से धन तथा व्यापर का विचार करना उचित है अत: यहां पर श्रीयन्त्र लगाकर समृद्धि की प्राप्ति कर सकते हैं। चूँकि सभी व्यवसाय लोकप्रियता के कारण चलता है अत: इसके लिए आफिस के दक्षिण दिवार पर लाल रंग का वाल पेपर लगाना चाहिए, ग्राहकों से सम्बन्धित कोना नैऋत्य कोण होता है इस लिए नैऋत्य कोण में लाल रंग का बल्ब जलाए रखें। इन सभी विषयों का मूल आधारभूत सिद्धान्त ही वास्तु शास्त्र के स्तम्भ हैं।अत; इस पाठ में आप को विशेष रूप से बताने को मिलेगा कि किस दिशा का आधारभूतसिद्धान्त क्या है एवं इसका प्रयोग हम कैसे करेंगे मुझे आशा है कि यह पाठ आप सभी को बहुत पसन्द आएगा तथा इसमें वर्णित आधारभूत सिद्धांतो का प्रयोग करके आप सब लोगों को बतायेंगे।

4.5 शब्दावली

तहखाना = जमीन के निचे का तलहटी कक्ष

आयाम = अधिकतम सीमा, विस्तार

विन्यास = जमाकर रखना जैसे – वास्तु विन्यास

एश्वर्य = वैभव

खात = गड्ढा

वेध = अवरोध

द्वार = दरवाजा

कल्पित = कल्पना

प्रतिहारी = द्वारपल

अष्ट मंगला = सिंह – बैल – हाथी –कलश –पंखा – वैजयन्ती – ढोल और दीपक इसको अष्ट मंगला कहते हैं।

सवत्सा गौ = बछड़े सहित गाय

औषधि = दवा, चिकित्सा कक्ष = दवा करने वाला प्रकोष्ठ, नृत्यशाला = नृत्य सीखने वाला प्रकोष्ठ,

गौशाला = गाय का निवास स्थान, घुड़साल = घोड़ा निवास स्थान, वीथी = मार्ग, वास्तु पद विन्यास = जिस वास्तु की स्थापना में सम संख्या में पद हों उसे चौसठ पद वाले वास्तु के समान एवं विषम संख्या में पद हो तो उसे 81 पद वाले वास्तु के समान समझना चाहिए।

4.6 उपयोगी पुस्तकें

1. गृहवास्तुप्रदीप, डॉ. (श्री मती) शैलजा पाण्डेय, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वृहद्वास्तुमाला, सम्पादक – डॉ.ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, डॉ. रवि शर्मा, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन
3. वस्तुसारसंग्रह, लेखक – आचर्य श्री कमलाकान्त शुक्ल, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी
4. भवनभास्कर, लेखक – राजेन्द्र कुमार धवन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी संवत 2057, गीता प्रकाशन गोरखपुर
5. वास्तुचिन्तामणि, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बड़जात्या, श्री प्रज्ञाश्रमण दिगम्बर जैन संस्कृति न्यास, ज्योति निलय गरुड़ खाम्ब चौक इतवारी नागपुर
6. शिल्पदीपक, सम्पादक – डॉ. श्री कृष्ण जुगनु, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी
7. देव शिल्प (मन्दिर वास्तु एवं स्थापत्य), रचयिता –सिद्धान्त रत्नाकर, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बडजात्या छिंदवाड़ा, वर्ष –सिद्ध क्षेत्र नैनागिरी 15 /07 / 2000
8. जैन वस्तुसार, सम्पादक – प्रो. प्रताप कुमार ज . टोलिया, प्रकाशन वर्ष – 2009, मुद्रक – सी . पी . इनवेशंन किलारी रोड बेंगलौर -53

4.7 बोध प्रश्न

1. वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त पर प्रकाश डालिए ?
2. वास्तु स्वरुप विभाग तथा उसके विविध स्वरूपों को दर्शाइए ?
3. इक्यासी पद वाले वास्तु की स्थापना क्रम लिखिए ?
4. वेध के प्रकार को बताइए ?
5. रसोई कक्ष में होने वाले बदलाव को लिखिए ?

इकाई 5 वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त (भाग 2)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप:

- वास्तुशास्त्र के मूल आधारभूत सिद्धान्तों बतायेंगे।
- अच्छे वास्तु का जीवन पर क्या प्रभाव होता है इसको बतायेंगे।
- अशुभ वास्तु के प्रभाव से भी परिचित होंगे।
- गृह के दिशा का विचार करते हुए पञ्च तत्वों पर आधारित सिद्धान्त की ब्याख्या पूर्णतया करेंगे।
- भवन निर्माण में वास्तुशास्त्रीय सिद्धान्तों को पूर्णतया बतायेंगे।
- वास्तुदोष और शयन कक्ष का विचार करके बतायेंगे।
- घर के आस –पास कौन से वृक्ष लगाने चाहिए तथा इसका फल क्या होगा इस बारे में भी आप बतायेंगे।
- दो मंजिल गृह के सामने बड़े वृक्ष हो तो क्या समाधान करना चाहिए इसके बारे में भी बतायेंगे।

- व्यापार की सफलता के लिए शहर का चुनाव भी वास्तु सिद्धान्तों के अनुसार करेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई संस्कृत विभाग, मानविकी विद्यापीठ, इन्दिरागांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में संचालित वास्तुशास्त्र में स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के अन्तर्गत, वास्तुशास्त्र के स्वरूप एवं इतिहास नामक पाठ्यक्रम की खण्ड 1 " वास्तुशास्त्र का स्वरूप " नामक उपशीर्षक के अन्तर्गत यह पाचवीं इकाई है। इस इकाई का नाम है " वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त (भाग 2)"चूँकि अधिकाधिक लोगों के मन में तमाम तरह की बातें आती रहती है कि वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त क्या है तथा इसके अनुरूप गृह निर्माण कैसे किया जाए कि लाभ मिल सके, प्रस्तुत पाठ इस बात के समाधान के लिए विल्कुल उपयुक्त होगा क्योंकि इसमें इन वास्तु सिद्धान्तों की चर्चा की गयी है जिससे ना ही तो दोषों के कारण भवन परिवर्तन करना पड़ेगा और ना ही तोड़ –फोड़ ही, ना ही मन में कोई शंका होगी। वास्तु का स्पष्ट आशय यही होता है कि चारों दिशाओं से मिलने वाली उर्जा का सन्तुलन अपने भवन में प्राप्त होना।और यह तभी प्राप्त होगा कि जब आपका भवन वास्तु के आधारबहुत सिद्धान्तों के अनुरूप हो। यह आधारभूत सिद्धान्त निम्लिखित रूप में होना चाहिए – भोजनशाला दक्षिण-पूर्व में होना चाहिए, मास्टर कमरा दक्षिण –पश्चिम में, बच्चों का कक्ष उत्तर पश्चिम में एवं शौचालय इत्यादि दक्षिण दिशा में होना चाहिए। अन्य बात, जल बहाव सम्बन्धितदिशा का ध्यान इस प्रकार रखना चाहिए कि जल का बहाव उत्तर दिशा में हो, ईशान (उत्तर –पूर्व) को खुला रखना चाहिए, दक्षिण –पश्चिम में अधिक निर्माण करवाना चाहिए या भारी समान हो, मुख्य दरवाजा घर के अन्य दरवाजों से बड़ा और वजनी होना चाहिए। खिडकियां व दरवाजे सम संख्या में हो और पूर्व या उतर में खुला होना चाहिए। तीन दरवाजे एक सिधे में नही होना चाहिए, दवाजे बन्द करते या खोलते समय आवाज नहीं आना चाहिए। पूजा के लिए ईशान कोण हो या भगवान का मुख ईशान कोण में होना चाहिए। उत्तर या पूर्व में तुलसी का पौधा लगायें, पूर्वजो के फोटो पूजा घर मे ना रखें दक्षिण के दीवार पार लगा सकते हैं। शाम को घर में दीपक लगावें एवं आरती करना चाहिए, अपने इष्ट देव का ध्यान और पूजन आवश्य करना चाहिए। भोजन के बाद जूठी थाली लेकर अधिक देर तक नहीं बैठना चाहिए। अपनी आय का एक हिस्सा इष्ट देव के नाम पर अलग रखना चाहिए इससे घर में हमेशा संवृद्धि बनी रहती है। घर का मुख्य द्वार का दिशा विचार भी अति महत्वपूर्ण चिन्तन का विषय है कुछ विद्वानों का अभिमत है कि दक्षिण द्वार शुभ प्रद नहीं होता है, तो कुछ का आशय है कि पश्चिम द्वार भी शुभ नहीं होता है परन्तु इसका निर्धारण करने के लिए जन्मकुण्डली का ज्ञान आवश्यक है, क्योंकि किंचित राशियों के लोगों के लिए ये द्वार बहुत ही शुभ बताया गया है। विशेषतया जिसकी कुण्डली में शनि – मंगल शुभ स्थिति में हों तो ये द्वार भी लाभदायक सिद्ध होगा। इस प्रकार वास्तुशास्त्र के सिद्धान्तों के बारे में इसके दोष को दूर करने के लिए अनेको प्रकार से नियमों को ध्यान में रखकर गृह बनवाने से वास्तु दोष दूर होता है तथा घर में सुख शान्ति प्राप्त होती है।प्राचीन समय से हमारे ग्रंथो के अनुसार पांच प्रकार के अलग अलग शाखाए मानी जाती है जो की निम्नलिखित है –

सर्व प्रथम हमको उन राज गृहों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है जिनका राजाओं के द्वारा निर्माण कराया गया है। दूसरा प्रकार सामान्य व्यक्तियों के रहने के लिए गृह समझना चाहिये तृतीय प्रकार देवतओं के निवास हेतु मंदिर इत्यादि को समझना चाहिए। चतुर्थ प्रकार विश्राम

स्थल, पुस्तकलय,वाचनालय, सामूहिक मनोरंजन हाल इत्यादि समझना चाहिए। पंचम प्रकार सामान्य लोगों के लिए सुविधाए जैसे तालाब, पोखरे, कुए, सामूहिक स्नान गृह इत्यादि समझना चाहिए। इन सभी विषयों का कही न कही वास्तु के आधारभूत सिद्धान्तो से सम्बन्ध है तथा इस पाठ में इन सभी विषयो का पूर्णतया विवेचन किया गया है जिससे की आप लोग इन सभी बातों को समझ कर समाज को लाभ पहुचायें तथा मुझे आशा है की यह पाठ आप सभी को पसन्द आयेगा।

5.2 वास्तु के सामान्य आधारभूत सिद्धान्त

चूँकि पूर्व के पाठ में कुछ सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है अब यहाँ पर मुख्य रूप से पांच प्रकार के सिद्धान्तों की चर्चा करने जा रहें है।

1. दिशाओं के ज्ञान के लिए शंकु आदि की स्थापना का सिद्धान्त
2. वास्तु देवता पर आधारित वास्तु पुरुष मंडल चक्र के आधारभूत सिद्धान्त।
3. माप पैमाना अंगुल आदि का प्रमाण, हस्त प्रमाण, आय विचार आदि के सिद्धान्त।
4. वैदिक वास्तु शिल्प के 6 सिद्धान्त।
5. पताका आदि भवन के परिदृश्य का सिद्धान्त।

वास्तु पूजा, बलिदान, हल चलाना, शिलान्यास इत्यादि। इन सिद्धान्तों का अन्य भेद इस प्रकार जानना चाहिए कि वास्तु पूजा अवश्य करना चाहिए दिशायें तथा उनके स्वामी देवता को ध्यान में रखकर भवन निर्माण करना चाहिए। वास्तुशास्त्र के अनुसार अलग अलग कमरों का विचार करना चाहिए। गृह में नौ ग्रहों की अवस्था के अनुसार गृह निर्माण करना चाहिए। वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्तों के अनुसार कक्ष का निर्माण करना चाहिए। जब वास्तुशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार भवन निर्माण प्रारम्भ किया जाता है तब ठीक उसी समय नौ ग्रहों की उपस्थिती उसमें समाहित रहती है इस प्रकार कुण्डली के अनुसार ये सभी ग्रह अपना प्रभाव स्थापित करते है। जैसे सूर्य ग्रह का स्थान वास्तु के अनुसार पूजन कक्ष में होता है। जैसे कि पूर्व दिशा को सूर्य ग्रह की दिशा मानी जाती है यानी सूर्य देव पूर्व दिशा के स्वामी हैं, इसके अलावा चन्द्रमा वायव्य कोण, यानि उत्तर –पश्चिम दिशा के स्वामी है। मंगल ग्रह दक्षिण दिशा के स्वामी है, बुध ग्रह उत्तर दिशा के स्वामी है। चूँकि सूर्य का प्रभाव वास्तुशास्त्र में सर्वाधिक है अत: इनके सिद्धान्तों के अनुसार चलना सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। सूर्योदय से पहले ब्रह्म मुहूर्त में सूर्य उत्तर पूर्व भाग में होते हैं, यह समय चिन्तन मनन एवं अध्ययन के लिए अति उत्तम होता है। सुबह सूर्योदय के बाद सूर्य ठीक पूर्व दिशा की ओर होते हैं अत: भवन बनाते समय इस बात का ध्यान देना चाहिए कि इसप्रकार गृह का निर्माण करें कि सूर्य का प्रकाश घर में पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो। भवन निर्माण में सर्व प्रथम इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर कार्य आरम्भ करना चाहिए – भवन वास्तु –

	गृह के मुख्य अंग	**सर्वोत्तम दिशा**	**अच्छा दिशा**	**वैकल्पिक दिशा स्थिति के अनुसार**
1.	भोजनालय	अग्निकोण	दक्षिण	पूरब
2.	शौचालय	वायव्य	पश्चिम	दक्षिण

3.	सीढ़ियाँ	नैऋत्य	दक्षिण	पश्चिम
4.	बोरिंग	ईशान	पूर्व	उत्तर
5.	बड़ी टंकी	पश्चिम	ईशान	दक्षिण
6.	मंदिर	ईशान	पूर्व	उत्तर
7.	शयन कक्ष	नैऋत्य	पश्चिम	दक्षिण
8.	बच्चों का कक्ष	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम
9.	अतिथि कक्ष	वायव्य	उत्तर	पश्चिम
10.	हाल	वायव्य	उत्तर	पश्चिम

शयन कक्ष में तिजोरी आलमारी अगर यदि रखना हो तो उसे दक्षिण की दीवार से सटाकर ही रखें, अर्थात तिजोरी आलमारी का मुख उत्तर दिशा की ओर खुलना चाहिए। भोजनालय और शौचय कभी भी एक सीधे में नहीं होना चाहिए, यदि है तो भोजनालय के दरवाजे पर एक लाल रंग का क्रिस्टल लगाना चाहिए। गृह निर्माण से पूर्व सम्बन्धित भूमि या (प्लाट) पर एक अहोरात्र अर्थात 24 घंटा गायों को ठहराना चाहिए जिससे की भूमि की शुद्धि हो जाय। ईशान दिशा में भूमि या छत सबके लिए अत्यन्त वृद्धि कारक माना गया है, जब कि नारद पुराण के अनुसार नैऋत्य दिशा की भूमि या छत ऊँची होनी चाहिए ।वास्तु शास्त्र में सर्व प्रथम दीवार बनने से ही ध्यान देना आरम्भ कर देना चाहिए, दीवारें सीधी और एक समान होना चाहिए, कहीं पर मोटी तो कहीं पर पतली नहीं होना चाहिए इसका अशुभ परिणाम हो सकता है। चूँकि घर में हमें सुख –शान्ति, मान –सम्मान और धन सहित सभी सुविधायें प्राप्त होती हैं। परन्तु इन सभी बातों के लिए अच्छे मुहूर्त में कार्य आरम्भ करना चाहिए। पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि इन पांच तत्वों से वास्तु की उत्पत्ति हुई है। हर तत्व की प्रगति को गहन चिन्तन कर के अनेकों वास्तु सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया गया है समाज में हर तरह के व्यक्ति के लिए माकन की लम्बाई –चौड़ाई – ऊंचाई नजदीकी वनस्पति, पर्यावरण, देवस्थान, मिट्टी का रंग, गन्ध विभिन्न प्रकार के विन्दुओं को ध्यान में रखते हुए अनुकरणीय सिद्धान्तों की रचना किया गया है ताकि समाज में निम्न –मध्यम और उच्च सभी समाज के लिए लाभप्रद हो सकें। कभी भी वास्तु के सभी बातों का विचार करके जैसे –शिलान्यास आदि के लिए मुहूर्त, काल, स्थिति, लग्न, कोण आदि भवन में निर्मित किए गये कमरों की माप, आंगन, रसोई घर, शयनकक्ष, कामन रूम, बालकनी आदि की स्थिति पर वास्तु के अनुरूप विचार करके ही निर्माण कार्य करना चाहिए यही वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त माने गये हैं।

शुभ लक्षण – भवन बनने वाली स्थान की ओर अगर यदि भवन स्वामी का जाना निरन्तर हो तथा उस समय सामने से गाय अथवा सुमंगली कन्याएं आती हो, तथा फल –संगीत – दही – फूल –सिंदूर आदि पूजन का थाली दिखाई दे, अथवा शीशा, दर्पण, चन्द्रमा का उगना, भोजन, दूध से भरा हुआ पात्र या वर्तन, जल या पानी, मृत व्यक्ति की शव यात्रा को देखना, कौवों को दाहिने तरफ से उड़ना, लोमड़ी का बाई तरफ से भागना, नंगा बालक, कपड़ों को धोने वाला धोवी, लाल साड़ी पहने हुए कोई स्त्री और हाथी, अगर ये सब चीजें दिखाई देती है

तो बहुत ही शुभ दायक होता है । अन्य बातों को इस प्रकार समझना चाहिए कि पूजा हमेशा पूर्व या उत्तर में मुह करके करना चाहिए । पूजा जमीन पर आशन रखकर ही करना चाहिए सुबह –शाम दीपक जलाएं । पूजा अर्चना के बाद प्रदक्षिणा लेनी चाहिए, पूजा घर में मुर्तिया 11 इंच से निचे का ही रखना चाहिए । तथा खड़े हुए गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती घर में नहीं होनी चाहिए, तथा पूजा स्थान के अलावा अगर कही चित्र लगते हों तो इसकी दृष्टि आप से बार – बार सिधी नहीं मिलना चाहिए । जब सोने को तैयार हों तो पहले दस मिनट उलटे हाथ की तरफ करवट सोयें तथा बाद में सुबह तक सीधे हाथ की करवट लेकर सोयें । पलंग रूम में कोने में नहीं लगायें तथा दीवार के तरफ भी 6 इंच कम से कम छोड़कर लगावें, शयन कक्ष की ऊपर की छत विल्कुल प्लेन होनी चाहिए, पलंग रूम में इस तरह लगायें की सिर की तरफ प्लेन दीवार हो टेढ़ा – मेढ़ा न हो । भोजन बनाते समय मुंह केवल पूर्व दिशा की तरफ होना चाहिए। शौच करते समय मुंख केवल पश्चिम या उत्तर दिशा में होना चाहिए, मुख्य तिजोरी बीच में पूर्वाभिमुख करके रखें, उसके अन्दर दो डिब्बे रखें एक अचल रकम रखकर बन्द कर देवे तथा दुसरे को खुला रखें, नियमित खर्चे के लिए रकम डालते रहें, निकालते रहें । तिजोरी दीवाल से 6 इंच छोड़कर रखें दीवार सटाकर नहीं रखें, सुबह पलंग से उठते समय सीधे घर से बाहर निकलते समय पहला पैर उल्टा ही निचे रखें । कार्यालय या घर से बाहर जाते समय या तो पूजा घर से या अपने शयन कक्ष से सीधे बाहर निकलें, निकलते समय बात नहीं करें तथा निकलते वक्त घर का कोई भी सदस्य आपको किसी भी कार्य के लिए टोके नहीं इसका भी विशेष ध्यान रखें । घर से निकलते समय कार, स्कूटर सीधा निकालें । घर से बाहर निकलते समय पचास कदम पूर्व या उत्तर की सड़क की तरफ ही जाएँ ये नियम जाने के लिए ही है आने के लिए नहीं है । घर के भीतर कांटे वाले, दूध वाले, फल वाले पेड़ –पौधे नहीं लगावें । नहाते समय या सोते समय उल्टे वस्त्र उतारकर नहीं छोड़ें । तथा नहाना एवं सोना कपड़े पहनकर ही करें । रात को सोते समय दस मिनट इष्ट देवता का ध्यान करना चाहिए तथा इसके उपरान्त ही सोयें । किसी विशेष यात्रा पर घर से निकलते समय रात्रि एवं दिन के ठीक बारह बजे का समय त्याग दें एवं समय के अनुसार शुभ मुहूर्त में घर से बाहर निकलें ।इन सभी नियमों का ध्यान रखना चहिए ताकि वास्तु का पूर्णतया आप को लाभ मिल सके ।

5.2.1 वास्तु का जीवन पर प्रभाव

कभी –कभी सभी प्रयास सही रूप से करने के वावजूद भी जीवन में बार-बार अनहोनी घटनाएं घटती रहती है । पूर्ण सजगता एवं परिश्रम से कार्य करने के वावजूद असफलता मिलती है । घर में पारिवारिक सदस्यों में आपसी ताल –मेल नहीं होना, एक ही व्यक्ति एक ही कारखाने में एक के अपेक्षा से अधिक लाभ कमाता है तथा दूसरा खाने के विना तरसता है । हजारों निर्माण कार्य निर्माण होते – होते रुक जाते हैं । घर में विकलांग सदस्यों का जन्म होना, अथवा बार –बार हाथ, पैर टूटना, अकाल मृत्यु होना, आग लगना, इन सभी बातों की जानकारी हमें वास्तु केआधारभूत सिद्धान्त से ही मिलना सम्भव होता है । मकान के स्थिति का हमारे, शारीरिक,मानसिक एवं आधात्मिक विकास से गहरा सम्बन्ध है । वास्तुशास्त्र का साधारण सा सम्बन्ध भवन निर्माण एवं आवास व्यवस्था से है, वास्तुशास्त्र शिल्प कला एवं अपने आधारभूत सिद्धान्तों पर अडिग है । मानव का आवास श्रेष्ठ, सर्वोत्तम, सुखदायी एवं निरापद होना चाहिए । वास्तुशास्त्र को पौराणिक ज्ञान –विज्ञान का एक स्तम्भ समझना चाहिए। वास्तुशास्त्र वस्तुतः हमारे महान देश भारतवर्ष का अत्यन्त प्राचीन शास्त्र है वास्तुशास्त्र का गहन अध्ययन करने से पता चलता है कि मानव के जीवन में आचार –विचार पर सम्मान व आर्थिक

स्थितियों को भी प्रभावित करता है। यहाँ तक कि वास्तुशास्त्र में विना तोड़ –फोड़ किये ही अन्य विधियों से समस्याओं निदान करने में सक्षम है जैसे – दर्पण से, रंगों द्वारा, रंगीन शीशे से आदि। विदेशों में भी वास्तुशास्त्र को लेकर सारगर्भित चिन्तन हुआ है। अमेरिका, जर्मनी आदि देशो में भवन विज्ञान का महिमा मण्डन किया गया है। और इसके ज्ञान का आंकलन किया गया है। अब विदेशों में भवन निर्माण के समय वास्तुशास्त्र के नियमो का ध्यान रखा जाता है। वास्तु शास्त्र अरब में रेत शास्त्र के नाम से, लैटिन में 'जिओलेर्शिय' के नाम से, चीन में ' फेंगशुयी ' के नाम से तिब्बत में बगुबा के नाम से जाना जाता है।

मानव वास्तु सम्बंधित त्रुटियों को सुधार कर वास्तुशास्त्र के नियमानुसार भवन निर्माण कर के सुख शान्ति और समृद्धि प्राप्त कर सकता है। यह शाश्वत सत्य है। प्रत्येक व्यक्ति का सपना होता है की वह अपनी कल्पना के अनुरूप रहने का एक सुन्दर घर बनाये। इस सपने को साकार रूप देने के लिए वह कदा परिश्रम कर धन की व्यवस्था करता है। रहने के लिए भवन के निर्माण का कार्य सोच समझकर, विचार विमर्श कर के, प्लानिंग कर आवश्यक पहलुओं का ध्यान रखकर ही भवन निर्माण का कार्य शुरू कराया जाय तो सुविधा रहती है। भवन निर्माण से पूर्व यह मानस बनाना आवश्यक है कि निर्माण कहां कराया जाय, मकान स्थाई कार्यक्षेत्र से जितना नजदीक होगा उतनी ही सुगमता से आप अपना कार्य कर सकेंगे। प्राय: जल्दीबाजी में भूमि प्राप्त करने के प्रलोभन में आकर लोग, जमीन खरीदकर करवायी कर लेते हैं। एवं मकान बनवाने के सुख की जगह खुद को विवाद के घेरे में खड़ा कर देते हैं। शहरों में प्राय: अधिकतर लोगों को अन्य स्रोतों पर ही निर्भर रहना पड़ता है, जिसमें विभिन्न हाउसिंग सोसाईटी, कम्प्लेक्स, बिल्डर्स आदि आते हैं। इन एजेंसियों में धन व्यय करने से पूर्व आप को भलीभांति इसकी विश्वसनीयता दर इत्यादि का पता कर जमीन खरीददारी का कार्य करना चाहिए।

मकान बनाने से पूर्व मकान का नक्सा, ड्राइंग रूम, इत्यादि विषयों का विचार करके करना चाहिए अक्सर ऐसा होता है कि भवन बनवाने के विविध विचारों से व्यक्ति अनभिग्य होता है। चूँकि ऐसे कार्य जिसमें आनेवाली दिक्कत का पूर्वानुमान न हो तो निश्चित रूप से महंगे पड़ते हैं। निर्माण कार्य में पानी का प्रबन्ध सुनिश्चित होना चाहिए क्योंकि मकान निर्माण में पानी का प्रवन्ध सुनिश्चित होने से एक पंचतत्व की प्राप्ति हो जाती है।तथा वह इसलिए क्योंकि मकान निर्माण में पानी का उपयोग रीढ़ की हड्डी के समान है।

घर का ले आउट इस प्रकार रखें की मौसम के अनुरूप धूप, हवा इत्यादि की सुगमता रहे, जहां सर्दियों में धुप की आवश्यकता हो वहां दक्षिण दिशा में मकान का खुला होना उत्तम होता है। खिडकियां इत्यादि उस क्षेत्र में चलनेवाली हवावों के अनुरूप ही लगानी चाहिए। नीव को बहुत गहरा ले जाना केवल लागत को बढ़ाना है। यदि तीन फिट की खुदाई के बाद आप देंखे की नीव में पत्थर नहीं आता है तो इंजीनियर से मौके स्थित का निरीक्षण कराकर मकान के भार के अनुरूप नीव की चौड़ाई बढ़ा लें। इससे मकान का भार का विवरण नीव में अधिक क्षेत्र में हो जाता है। विभिन्न तरह की नीव की मिट्टी पत्थर इत्यादि के भार सहने की क्षमता के अनुरूप नीव की चौड़ाई बढ़ाई जाती है। जहां दीमक का खतरा बना रहता है वहां नीव में दीमक को मारने वाले किट नाशक का छिड्काव नीव भरने से पहले करना चाहिए। मकान का प्लाट लेवल, आगे वाले सड़क के लेवल से कम से कम डेढ़ फिट ऊँचा होना चाहिए। प्लीथ लेवल पर डी .पी .सी (डेम्प प्रूफ कोर्स) अवश्य डलवायें। इससे जमीन का सीलन ऊपर दीवार में नहीं आता है।

गृहिणियों का अधिक समय रसोई या वेडरूम में व्यतीत होता है, अत; इसका निर्माण करते समय इनका आकार, हवा, रौशनी इत्यादि का ध्यान रखना चाहिए। मकान उतना ही बड़ा बनवाना चाहिए जितनी आप की आवश्यकता हो, वैभव दिखाने के लिए बड़े मकान अत्यधिक रख – रखाव के कारण अनावश्यक उपयोग का कारण प्रतीत होने लगता है।उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर भवन निर्माण का कार्य आरम्भ करने से लागत में वृद्धि व कई मानसिक परेशानियों से बचा जा सकता है।

5.2.2 गृह दिशा एवं पञ्चभूत का सिद्धान्त

वृहद्वास्तुमाला के अनुसार भूखण्ड के विभिन्न दिशाओं एवं उप-दिशाओं के क्षेत्रों में किस प्रकार उपयोग के लिए स्थान को उल्लिखित किया गया है। अर्थात पूर्व दिशा में लक्ष्मी का गृह, आग्नेय कोण में रसोई गृह, दक्षिण दिशा में शयन गृह, नैऋत्य कोण में शस्त्रागार, पश्चिम में पाकशाला वायव्य कोण में धनागार, उत्तर में द्रव्य स्थान, इशान कोण में देवता गृह, पूर्व और अग्निकोण के बीच में दही मथने का स्थान, दक्षिण और आग्नेय कोण में घी रखने का स्थान, दक्षिण और नैऋत्य कोण के बीच में शौचालय, नैऋत्य कोण और पश्चिम के बीच स्वाध्याय गृह, पश्चिम और वायव्य कोण के बीच में कोप भवन और औषधि गृह, ईशान और पूर्व के बीच में सर्ववस्तुसंग्रह भण्डार गृह, इसप्रकार सोलह गृहों का विधान है।

यह सत्य है कि किराये के मकान में भवन स्वामी की स्वीकृति के बिना कोई संशोधन नहीं किया जा सकता है।प्राय: देखा गया है कि वास्तु नियमों के अनुकूल बने भवन में किरायेदार भी सुखी और सम्पन्न होते हैं।भवन का उत्तर –पूर्व का भाग अधिक खाली रखें, दक्षिण – पश्चिम के भाग में अधिक सामान रखें। पानी की सप्लाई उत्तर पूर्व से करें। शयन कक्ष की सेटिंग ऐसे करें की उस पर सोने पर अपना सिर दक्षिण दिशा में हो और सोते समय पैर उत्तर दिशा में हो। भोजन दक्षिण पूर्व की ओर मुख कर के करें। पूजा स्थल उत्तर पूर्व की दिशा में रखें। पानी पिते समय मुख उत्तर पूर्व की ओर रखें।भवन तैयार करते समय इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए और भी वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त बहुत ही सारगर्भित है जिसको समझना अति आवश्यक है। भवन तैयार करते समय इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए। अगर भवन के किसी भाग को हम चाहते हुए भी उसके अनुकूल दिशा में नहीं बना पा रहे हैं तो हम उनको बाँट कर 8 दिशाओं में स्थान सुनिश्चित करें । मकान का रूप वास्तुशास्त्र के अनुसार कैसा होना चाहिए उसको यहाँ पर बताया जा रहा है।

उत्तरपूर्व	बालकनी	पूर्व,दक्षिण,पूर्व उत्तर, पश्चिम	बालकनी
उत्तर पूर्व	तलघर	उत्तर,पश्चिम	गैराज
उत्तर,उत्तर,पूर्व	दरवाजे	उत्तर–पश्चिम दक्षिण-पूर्व	ड्राइंग रूम
दक्षिण-पश्चिम,दक्षिण-पूर्व	ड्रेसिंग रूम	उत्तर-पश्चिम	मनोरंजन कक्ष
दक्षिण-पूर्व,दक्षिण-	भोजन कक्ष	उत्तर-पश्चिम	भंडार गृह

पश्चिम			
दक्षिण-पूर्व,उत्तर-पूर्व	खुला स्थान	उत्तर-पश्चिम,दक्षिण-पूर्व	अतिथि कक्ष
दक्षिण-पूर्व,पश्चिम	रसोई घर	दक्षिण –पूर्व	बिजली व्यवस्था
उत्तर-पश्चिम	परामर्श कक्ष	उत्तर-पूर्व	खुला स्थान
उत्तर-पूर्व	गैराज	दक्षिण-पूर्व,उत्तर-पश्चिम	सेवक कक्ष
दक्षिण-पश्चिम	सीढियाँ	दक्षिण-पश्चिम	भंडार गृह
उत्तर-पूर्व,उत्तर	पूर्व-पश्चिम	अध्ययन कक्ष	उत्तर तिजोरी
उत्तर-पूर्व	पूजा घर	उत्तर-पूर्व,दक्षिण तथा पश्चिम	पेड़-पौधे
दक्षिण-पूर्व,उत्तर-पश्चिम	मूत्रालय	उत्तर-पूर्व	बरामदा
उत्तर-पश्चिम	जल भंडार		

अब भू-खण्डों के मुख के अनुसार निम्नलिखित विवरण प्रस्तुत है –

1. उत्तरमुखी 2. ईशान मुखी 3. पूर्व मुखी 4. आग्नेय मुखी

5 . दक्षिण मुखी 6. नैऋत्य मुखी 7. पश्चिम मुखी 8. वायव्य मुखी

भवन का प्रारूप बनाते समय 5 मुख्य सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए। मानव शरीर पञ्चतत्व जल,अग्नि,वायु,आकाश तथा पृथ्वी से निर्मित है, और जब तक इसका संतुलन बना रहता है तब तक जीवन स्वस्थ रहता है। इसी प्रकार भवन निर्माण में भी इन्हीं तत्वों को ध्यान में रखा जाता है।

पृथ्वी – हमें सबसे पहले पृथ्वी का गुणात्मक दृष्टि से तथा आकार एवं प्रकार को ध्यान में रख कर करना आवश्यक है। पृथ्वी तत्व की शुद्धता एवं गुणवत्ता के लिए मिट्टी का रंग, उसकी गन्ध, उसकी आर्द्रता, उर्वरा शक्ति, मिट्टी की खाद के आधार पर करना चाहिए,ताकि पृथ्वी तत्व का भवन निर्माण के लिए सही चयन किया जा सके।

जल – भूमि का निर्माण करने से पूर्व जल की व्यवस्था करनी चाहिए, क्योंकी प्राणियों का आवास जल परक होंमे के कारण इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। उत्तर-पूर्व में जल का संशाधन तैयार करना चाहिए। ट्यूबवेल भूखण्ड के ईशान कोण में बनाना चाहिए। ध्यान रखे की भवन के ईशान कोण और भुखण्ड के ईशान कोण को मिलाने वाली रेखा पर ट्यूबवेल ना खोदा जाए।

अग्नि- अग्नि मानव जीवन का मुख्य आधार है। वैदिक काल में अग्नि को देव रूप मानकर यज्ञों द्वारा पूजन और वरुण,इन्द्र,अग्नि, मरुत,विष्णु, रुद्र,पूषा आदि विभिन वैदिक कालीन

देवताओं की आराधना की जाती है। पूर्व दक्षिण दिशा तेज के लिए भवन निर्माण के समय अग्नि स्थान का निर्धारण के समय दक्षिण पूर्व दिशा के मध्य अग्नि कोण में निर्धारित करना चाहिए। अग्नि का स्थान रसोई घर के रूप पर निर्धारित किया जा सकता है।

वायु- स्वच्छ वायु का सेवन स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण होता है। निर्माण के समय वायु संचरण के लिए स्थान निर्धारित करना चाहिए। स्वस्थ्य की दृष्टि से निर्माण के अवसर पर वायु और प्रकाश का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। पश्चिम उत्तर दिशा के बीच का स्थान वायव्य कोण के नाम से जाना जाता है, वायु के लिए विशेष रूप से यह जानना आवश्यक हैं की भवन के पश्चिम और उत्तर दिशाओं में वायु सेवन का स्थान रखना चाहिए। वायु तत्व की प्राप्ति इस दिशा की ओर से प्राप्त करना स्वस्थ्य के लिए उत्तम होता है।

आकाश- आकाश शब्द से भवन निर्माण के लिए खुलापन रखना चाहिए। भवन में कक्षों की ऊंचाई कक्ष के अनुपात से निर्धारित करनी चाहिए। अधिक एवं न्यून ऊंचाई के कारण आकाश तत्त्व प्रभावित होता है। वास्तुशास्त्र में विभिन्न कक्षों का दिए हुए निर्देशों का अवश्य पालन करना चाहिए। वास्तु में चारों दिशाओं तथा उनके चारों सहायक कोणों का विशेष महत्व है। अतः भवन निर्माण के समय इसका ध्यान रखना चाहिए।

5.2.3 वास्तु और भवन निर्माण का सिद्धान्त

भवन बनाते समय वास्तुशास्त्र निर्दिष्ट सूत्र और सिद्धान्तों के आधार पर ही बनना चाहिए ।वास्तुशास्त्र के विधियों का उल्लेख आचार्यो ने किया है जो की यह प्रतिपादित किया जा रहा है गृहारम्भ में सर्व प्रथम शिलान्यास करना चाहिए, जिसका मुहूर्त किसी ज्योतिषी से परामर्श करके निर्धारित किया जाता है ।शिलान्याश पांच शिलाओं का स्थापना किया जाता है, जिस दिशा में शिलान्यास किया जाता है, उसका निर्णय सूर्य की राशि के अनुसार दो दिशाओं के मध्य में किया जाता है। गृहारम्भ कार्य के लिए विशेष निर्णय इसप्रकार समझना चाहिए। सिंह, कन्या, तुला राशि के सूर्य में, पूर्व दक्षिण भाग में अग्निकोण में ।वृष, मिथुन, कर्क राशि के सूर्य में दक्षिण भाग में नैऋत्य कोण में, कुम्भ, मीन, मेष राशि के सूर्य में वायव्य कोण में। वृश्चिक, धनु, मकर राशि के सूर्य में उत्तर पूर्व अर्थात ईशान कोण में शिलाओं को स्नान इत्यादि कराकर निर्धारित मुहूर्त में स्थापना कर के भवन निर्माण किया जाता है। भवन निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि भवन में निर्मित किये जाने वाले कक्षों की माप और दिशा आदि का विवरण तथा निर्माण के पूर्व तैयारी करना आवश्यक होता है और उसको ही आधार मानकर भवन निर्माण करना चाहिए। भवन में सबसे पहले दीवारों का ध्यान रखना चाहिए। उत्तर एवं पूर्व की दीवारों की अपेक्षा दक्षिण –पश्चिम के दीवारों की ऊंचाई एवं मोटाई अधिक रखना चाहिए। प्राचीन काल में भवन निर्माण के लिए भूभाग को कक्षों में विभाजित किया जाता था। यद्यपि वास्तुशास्त्र के अनुसार 16 खण्डों में कक्षों आदि का विभाजन कर प्रत्येक कार्य के लिए अलग –अलग दिशाओं का उल्लेख किया गया है, इसलिए इस बात का ध्यान देना चाहिए कि कमरों का निर्माण इस प्रकार करना चाहिए कि वह वास्तु के अनुरूप हो जैसे – अग्नि का अग्निकोण में, पूजा का कक्ष ईशान कोण इत्यादि इन सभी विषयों की चर्चा पूर्व के पाठ में किया जा चुका है, परन्तु यहां पर हम सभी को वास्तु के सिद्धान्तों को समझने के लिए 16 गृहों के बारे में जानना आवश्यक है इसमें प्रमुख है, रसोईघर –स्वागत कक्ष –(ड्राइंग रूम)-भण्डार गृह – अध्ययन कक्ष –भोजनालय – देवस्थान –स्नानघर –शयन कक्ष – छत पर पी की टंकी – शौचालय – सीढियाँ – पुस्तकें कहां रखें – धन या तिजोरी कहां रखें – घर में कौन सी तस्वीर

रखें – विद्युत एवं प्रकाश – दो मंजिल – तहखाना भवन की ऊंचाई –शयन कक्ष का रंग कैसा हो ? शयन कैसे करें ? वास्तुदोष और आपका शयन कक्ष –घर में लगाये गये उचित वृक्ष – इत्यादि इन सभी बातों को वास्तु के आधारभूत सिद्धान्त ही समझना चाहिए इसके अनुरूप भवन निर्माण करने से सुख और शान्ति मिलती है।

5.3 वास्तुदोष और शयन कक्ष

वास्तुशास्त्र के अनुसार बने हुए घर में वास्तु कला के अनुसार शयन कक्ष बहुत ही लाभदायक होता है।जिस प्रकार एक स्वस्थ शरीर में ही आत्मा निवास करती है, ठीक इसी प्रकार वास्तु कला के अनुरूप बनें आदर्श शयन कक्ष में ही अच्छी तरह नींद आती है। रात्रि में आराम से आने वाली निद्रा प्रात: तरोताजा बना देती है। क्या आप जानते है कि आज कल अधिकांश लोग अनिद्रा के कारण रोगी बनते चले जा रहे हैं। वास्तुशास्त्र के अनुसार ऐसे तो रसोई घर, ड्राइंग रूम – भंडार गृह – आदि सभी महत्वपूर्ण है, लेकिन शयन कक्ष सबसे अधिक मत्वपूर्ण है क्यों कि गहरी निद्रा के बाद ही हम शेष सभी घरों का आनन्द लिया जा सकता है। प्राय: यह कहा जाता है कि जागृत अवस्था में किया गया कार्य उस व्यक्ति के व्यक्तित्व से पहचाना जा सकता है। उसकी आदतों को भी रेखांकित किया जा सकता है। परन्तु बहुत सी बातें आपकी शयन मुद्राएँ यानि आप के सोने का तरीका भी बताता है। मनोवैज्ञानिक लोग भी अपने मत को इसप्रकार बताते हैं कि व्यक्ति का शयन कक्ष और उसकी शयन मुद्राओं को देखकर उसके बारे में सहजता से अनुमान लगाया जा सकता है, तथा शयन कक्ष में अगर कोई हाथ, पैर सिकोड़ कर, पैरों को पेट में लगाकर सोते हैं वह भीरु होते हैं। वास्तु के अनुसार यह भी एक दोष है, जिसका परिणाम ऐसे व्यक्ति के जीवन में संघर्ष हमेशा बना रहता है। तथा अकेले में रहने से इनको भय लगता है, यह अकेले यात्रा भी नहीं कर सकते। और ना ही अँधेरे नमे इनको नींद ही आती है, ऐसे लोगों में अविश्वास की भवन पाई जाती है। ऐसे व्यक्ति शारीरिक रूप से भी अस्वस्थ एवं निर्बल पाए जाते हैं। स्वभाव से भी किसी निर्णय पर न पहुचने वाले और हीनभाव से ग्रसित पाए जाते हैं, शयन कक्ष में पैर पेट से मिलाकर सोनेवाली महिलाएं प्राय: भयानक स्वप्न देखती हैं। और कई बार चीखकर जग जाती हैं, दोषपूर्ण शयन कक्ष में ऐसा होने के बाद काफी समय तक वे सामान्य स्थिति में नहीं आ पाती। शयन कक्ष का निर्माण बदल के कर देने पर पुनः सभी स्थितियाँ ठीक हो जाती है। पीठ के बल सीधे सोने वाले पुरुष वहिर्मुखी प्रवृत्ति के, संकोच से से दूर, स्वार्थी तथा अपनी बातों को स्पष्ट कहने वाले होते हैं। ऐसे व्यक्ति प्राय: लापरवाह होते हैं एवं पत्नी के प्रति प्रेम का अभव पाया जाता है, शारीरिक दृष्टि से सुदृढ़ एवं स्वास्थ्य भी सामान्य होता है परन्तु इनमें संवेदना प्रचुर मात्रा में व्याप्त होता है। पीठ के बल सोनेवाली महिलाएं प्राय: स्वार्थी प्रवृति की होती हैं। जो महिलाएं दायीं करवट सोती है, वे स्वभाव से कर्कशा और इस प्रकार का आचरण करने वाली होती हैं जिससे जीवन साथी को कष्ट होता है, साथ ही इस तरह के स्त्रियों में पुरुषो जैसे गुण भी पाए जाते हैं ।

कुछ मुहँ खुला रख कर आधी आँखें खोल कर सोते- सोते बड़बड़ाते या पैर के निचे तकिया लगाकर या फिर तीन- चार तकिया लगा कर सोते हैं। इन प्रत्येक मुद्राओं का अर्थ जैसे – मुहँ खुला रख कर सोने वाले ढीले – ढाले परन्तु अधिक परिश्रमी होते हैं, कभी – कभी ऐसे लोग मानसिक तनाव के शिकार होते हैं। अधिक तकिया का प्रयोग करने वाले व्यक्ति स्वभाव से दिखावा करने वाले या अधिक बनावटी होते हैं। सोते समय कुछ की आँखे आधी खुली रहती है, एसी आँखों वाले स्वभाव से सहयोगी होते है, परन्तु कुछ लोग ऐसे भी पाए जाते हैं जिनमें

लालच की भावना कूट- कूट कर भरी होती है। नींद में बड़बड़ाने वाले लोग, मानसिक दबाव से पीड़ित होते हैं । ऐसे लोग बड़बड़ाते हुए अपनी परेशानी को भी बड़बड़ाया करते हैं और उससे मुक्ति पाने के अप्रत्याशित उपायों को सरलता पूर्वक सुना जा सकता है। ऐसे व्यक्ति पेट में कीड़े के भी रोगी होते हैं, पाँव के नीचे तकिया लगाकर सोने वाले को अगर कल्पना लोक का वासी कहा जाए तो गलत नहीं होगा। इस शयन मुद्रा वाले लोग यथार्थवादी नहीं होते, कुछ लोग सोते समय हाथ पैर इधर- उधर फेकते रहते हैं, ऐसे लोगों के बारे में वास्तुविज्ञों का कथन है कि ये लोग असूरक्षा की भावना से घिरे रहते है। हाथ पैर फेक कर वह सुरखित माध्यम की खोज को दर्शाते हैं ।

यह सब दोष प्रायः वास्तु शास्त्र के अनुरूप नहीं बने हुए शयनकक्ष अथवा किसी रोग की ओर इशारा करता है, जहा तक शयन कक्ष की बात है,वह तो वास्तुशास्त्री से सलाह लेने पर ठीक हो जाएगा, तथा रोगों के लिए डॉक्टर से सलाह लेना चाहिए। शयन कक्ष से सम्बन्धित समस्या से छुटकारा पाने के लिए अथवा बिना तोड़ -फोड़ के ठीक करने के लिए आप शनिवार के दिन (केवल शुक्ल पक्ष) में अभिमंत्रित रुद्राक्ष या स्फटिक की माला से निम्नलिखित मन्त्र का पांच माला जप आने वाले शनिवार तक करे, जाप के समय केवल गुलाब की अगरबत्ती अपने सामने जलावे तथा इस मन्त्र का जाप करे – मन्त्र

ॐ नमः स्वप्न चक्रेश्वरी स्वप्ने अवतर अवतर गतं।

वर्तमान दोषानि कथय कथय स्वाहा ॥(वास्तुदोषकारण निवारण पृष्ठ 86)

घर में अगर गलत दिशा में सोफे फर्निचर रखा होता है वह भी कष्टकारक होता है। अतः सोफे या फर्नीचर उत्तर या पूर्व की दीवार के पास ना रखें। सोफे फर्नीचर दक्षिण या पश्चिम दीवार के सहारे रखें । यदि आपके पास जगह की कमी हो तो जिसके कारण सोफे या फर्नीचर पश्चिम या दक्षिण की ओर नहीं रख सकते हैं तो 9 इंच की दुरी पर उत्तर या पूर्व की दिशा में रख सकते है। इससे वास्तु दोष का प्रभाव प्रायः न के बराबर होता

है। प्रायः उत्तर और पूर्व की दिशा खाली रखनी चाहिए, इससे लक्ष्मी का आगमन होता है। स्वास्थ्य भी ठीक रहता है। ये सभी नियम सभी जगह लागू करें तो अवश्य ही शुभ फल मिलेगा।

5.3.1 घर के सामने लगाये जानेवाले उचित वृक्ष

हालां कि वास्तुशास्त्र वह विद्या है जो कि मानव जीवन के लिए ही नहीं अपितु समस्त प्राणियों के लिए वरदान है एवं वास्तुशास्त्र का वास्तविक आधारभूत सिद्धान्त सम्पूर्ण वैज्ञानिक विन्दुओं पर आधारित है। जैसे यह सभी जानते हैं कि संसार की गुरुत्वाकर्षण चुम्बकीय शक्ति उत्तर दिशा में है तथा शक्तिपुंज पूर्व दिशा में होता है।अतः वह भवन एवं व्यापारिक प्रतिष्ठान, कल कारखाने विशेष लाभप्रद होते हैं जिनका अधिकांशतः भाग उत्तर और पूर्व में खाली होता है। तथा यह स्वयं का अनुभव है वास्तु निरिक्षण के अन्तर्गत उत्तर दिशा व पूर्व दिशा का आधिक भाग खाली होना सर्वथा श्रेष्ठ व प्रगति सूचक होता है। जिन आवासीय भवनों व व्यापारिक प्रतिष्ठानों में दक्षिण पश्चिम के तरफ खुलापन पाया गया है वह आवासीय भवन, प्रतिष्ठान आदि में अनेको समस्याएं पाई जाती है ऐसे अनेको तथ्य जो देखने के लिए बहुत छोटे है परन्तु उसका सही उपयोग किया जाए तो अधिक लाभ प्राप्त होगा। जी हां आपलोगों का इशारा घर में

लगाये जाने वाले वृक्षों को बताया जा रहा है। तरह- तरह के कंटीले वृक्षों को लगाने का आज लोगों में विशेष शौक है, जो की सर्वथा अशुभ होते है। परम्परा के अनुसार सर्वश्रेष्ठ वृक्ष तुलसी का है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने घर में तुलसी का वृक्ष जरुर ही लगाना चाहिए। वृक्ष सम्पदा मानव के लिए प्राण देने वाली शक्ति है किन्तु जो वृक्ष अशुभ फलो को प्रदान करता है उसको घर में कभी भी नही लगाना चाहिए। हालाँकि अशुभ वृक्षों का भी वास्तुशास्त्र के नियमानुसार विशेष प्रभाव होता है। घर के पास अशुभ वृक्ष होते हैं, तो वह मनुष्य को अनेकों प्रकार की व्याधि, काष्ट, रोग अशान्ति उत्पन्न करते रहते हैं। वहीं पर शुभ वृक्षलगाने का फल धन वृद्धि, संतान वृद्धि,आयु वृद्धि और स्वस्थ्य जीवन में लाभप्रद होता है। यद्यपि मत्स्य पुराण में शुभ-अशुभ वृक्षों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है तथापि यहाँ कुछ वृक्षों के बारे जानना आवश्यक है, जिसमें अशुभ वृक्षों की बात करें तो वह वृक्ष सर्वथा अशुभ है जिसमें अच्छे एवं खुशबूदार फूल ना आते हो जैसे – कैक्टस, सेमल आदि अशुभ होते हैं। जबकि पुन्नाग, नीम, अशोक,आम, नारियल और अनार श्रेष्ठ होते हैं। पीपल,गुलर, बरगद अशुभ होते हैं। अंगूर की बेल, चन्दन का वृक्ष भवन के प्रत्येक क्षेत्र में श्रेष्ट होते हैं। बेर, बबूल,निम्बू, करूज़ा, माल्टा यह वृक्षा सर्वदा अशुभ होते है। ग्वारपाठा का वृक्ष अशुभ होते हैं। रायबेल, मोगरा,चमेली सर्वथा श्रेष्ट होता हैं। मोलश्री, हरसृंगार, खुशबुयुक्त गुलाब श्रेष्ट होता हैं। कैथ, कजोड़, करील अशुभ होता हैं। बहुत से मुख्य द्वार पर कटीली बंगन बेलियाँ की बेल चढ़ी होती है जो की सर्वथा अशुभ फल देने वाली होती हैं।

प्रायः यह देखा गया है कि जिसके जन्म कुण्डली में बृहस्पति अशुभ होता है तो संतान उतपन्न होने में बाधाएं आती हैं। इसके लिए यह समझना चाहिए कि इस जन्म में या पूर्व जन्म में यह व्यक्ति फलदार वृक्षों को कटवाया हैं। अगर शुक्र बाधक है तो यह जानना चाहिए कि यह जातक पुष्प धारी वृक्षों को कटवाया है। अगर शनि बाधक है तो समझे की पीपल वृक्ष को काटने का फल है। अब आइये जानते हैं वृक्षों को लगाने से मिलने वाले पुण्य फल जैसे – एक पीपल के वृक्ष,एक नीम का वृक्ष एक बरगद का वृक्ष, 10 इमली का वृक्ष, कैथ का वृक्ष, बिल्व का वृक्ष आवलें के 3, पांच वृक्ष आम के लगाने वाला व्यक्ति पुण्यात्मा होता है और उसे कभी नरक का दर्शन नहीं होता है। जो व्यक्ति हवन नहीं करता, जो पुत्रहीन है अगर वह आम का बागीचा लगाता है तो ठीक उसी प्रकार स्वर्ग प्राप्ति का अधिकारी बनता है जैसे पुत्र द्वारा किये गए श्राद्ध कर्मो से। जो मनुष्य सड़क के किनारे सुन्दर और उपयोगी वृक्षों को लगता है वह चारों युगों तक सर्व सुख संपन्न होता हैं। वृक्षा रोपण से अधिक पुण्य लता रोपण से मिलता है, संभवतः किसी निराश्रित व्यक्ति को आश्रय प्रदान करने के जैसे होता है क्योंकि बेल सदैव सहारे के अधीन होता है। चन्द्रमा जब हस्त, पुष्य, अश्विनी, तीनों उत्तरा, रोहिणी, विशाखा, मृगशिरा, मूल, शतभिषा,नक्षत्रों में संचार करें तो वृक्ष लगाना शुभप्रद होता है। बृहस्पति के केन्द्र में स्थित हो ऐसा लग्न हो, शुक्र उत्तम स्थान में स्थित हो,चन्द्रमा की राशि कर्क, वृश्चिक या मीन हो, क्योंकि ये तीनों जल राशियां हैं तथा जल के बिना वनस्पतियों का पोषण संभव नहीं है, चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रहों का योग हो, चतुथ स्थान भूमि या पताल का स्थान हैं अतः शुभवार शुभ लग्न में वृक्षा रोपण करना चाहिए। विशेष योग सोमवार के दिन मूल नक्षत्र हो, धनु लग्न हो वृहस्पतिवार का दिन हो, रेवती नक्षत्र हो तथा वृहस्पति लग्न में स्थित हो तो वृक्ष रोपना चाहिए। ऐसे वृक्ष जिनके अंगो से दूध निकलता हो, घर के निकट शुभ नहीं होता है इससे धन नस्ट होता हैं। दूध वाले वृक्ष अगर आग्नेय कोण में लगाये गए हों तो ये मृत्यु कारक माने जाते है। कांटेदार वृक्ष भय पैदा करता है, कोर्ट –कचहरी,मुकदमेबाजी, पुलिस केस

इत्यादि का भय हो सकता है। कांटेदार वृक्ष संतति को भी कष्ट पहुंचाता है । पीले रंग के पुष्प वाले वृक्ष भी घर के समीप शुभ नहीं माना गया है । बिल्व पत्र शमीं या अशोक, मोलश्री, पुन्नाग, चम्पक के वृक्ष, अंगूर की बेल, चन्दन का वृक्ष, अनार का वृक्ष, पिप्पली का बेल घर के निकट शुभ फलदायक है । पुन्नाग, अशोक, नीम, मौसमी, कटहल, काल के वृक्ष हो तो वृहत्संहिता के अनुसार काटेदार वृक्षों का अवगुण मिटाने वाले होते हैं ।ऊँचे व घने वृक्ष दक्षिण, पश्चिम भाग में लगाने चाहिए । पेड़ भवन में इस प्रकार लगाएं और उनमें दूरी इतनी रखें कि प्रात: से तीसरे प्रहर भवन पर उसकी छाया न पड़े । पीपल का वृक्ष पश्चिम, बरगद का पूर्व, गुलर का दक्षिण और कैथ का वृक्ष उत्तर में लगाना चाहिए, अन्य वृक्ष किसी व दिशा में लाभदायक होता है । इस प्रकार आपको गृह के पास वृक्ष लगाने का सिद्धान्त समझना चाहिए ।

5.3.2 वृक्षों के सामने दो मंजिल गृह विचार

वास्तु के अनुसार भवन के दक्षिण या पश्चिम दिशा के भाग को ऊँचा रखा जाता है । अत: दो मंजिल गृह का निर्माण केवल दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा में ही करना चाहिए । चूँकि पृथ्वी के दोनों ध्रुवो के बीच चुम्कीय बल रेंखायें हैं जो मानव शारीर पर स्पस्ट प्रभाव डालती है तथा धरती के विभिन्न स्थल है जो मन पर अपना सूक्ष्म प्रभाव डालते हैं । इन्हीं सब प्रभावों को पहचान कर उचित अनुसन्धान कर के बनाये हुए भवन को वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त समझना चाहिए । भवन के और उसके बाहर के सभी भौतिक, पराभौतिक और अध्यात्मिक प्रभावों के लाभों को उपलब्ध करने की कला ही वास्तुशास्त्र है इसीलिए, वस्तुसौख्यम में कहा गया है ‘ वस्तुशास्त्रं प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया ’ वास्तुशास्त्र वैज्ञानिक एवं तकनीकी सिद्धान्त केवल आवासीय सीमा तक ही प्रभावशाली नहीं है अपितु इसका प्रयोग औद्योगिक विकास व नगर तथा ग्राम परियोजना के रूप में भी समस्त मानव जाति के भौतिक व अध्यात्मिक कल्याण के लिए है । भारतीय जिवन पद्धति में धर्म, संस्कृति, विज्ञान एवं जिवन इन चारों क्षेत्रो का विस्तार समान रूप से है और उसका दृष्टिकोण समन्वय स्थापना के लिए किया गया है । सृष्टि के साथ अविरोध भाव प्राप्त करने की पद्धति ही समन्वय है । जिसका परिणाम है सद्भावना, सद्व्यवहार और सद्प्रेम । जिसका प्रभाव मानव जीवन पर ही नहीं अपितु प्रकृति एवं तत्वों पर भी पड़ता है, क्योंकि ये तत्व भी उतने ही सवेदनशील है, चेतन और जागरूक है जितने की हम जीवधारी मनुष्य । मानव जीवनशैली व तत्वों के साथ सामंजस्य व समन्वय ही वैदिक वास्तु का आधार है। जो आवश्यक शिवत्व का सूत्रधार भी है वास्तु अनुरूप आन्तरिक गृह- सज्जा भी मानव मस्तिस्क पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालता है । चित्र चरित्र का निर्माण करते हैं, अतः सौम्य सुखद संवेदनाओं के साथ घर का वातावरण अनुकूल व सुख – समृद्धिमय, मंगल भवन, बनाने के लिए वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्तों का पालन ही हितकर होगा तथा यहीं से शिवत्व का प्रस्फुटन होगा ।

आज वास्तुविद वास्तु आंकलन में सौन्दर्य का तो ध्यान रखते है पर वास्तु के नियमों को न ध्यान देने के कारण वह कल्याणकारी नहीं होता है जबकि वास्तु के सिद्धान्त सरल व सहज रूप में अपनाये जाने वाले है । संतुलित अनुपात का ध्यान रखें क्योंकि जो भवन वास्तुशास्त्र के अनुकूल नहीं बनाया जाता है तथा अवास्तु की रचना की जाती है वह मनुष्य के मन और आत्मा को प्रसन्न रखने में असमर्थ होती है । जीवन में संयम और संतुलन नहीं रहता है जिसके अभाव में जीवन सुनियोजित नहीं बन पाता इस तरह सुख-शान्ति व सुरक्षा के साथ मानवीय सम्वेदनाओ के आँचल में पल्लवित व विकसित हो रही सात्विक समाज व रचना में

वास्तुशास्त्र की भूमिका अत्यन्त सारगर्भित है वास्तु निर्माण कार्य में वर्तमान समय में अत्यन्त मूल्यवान हो गया है और निर्माण के पश्चात् वास्तु दोस निकले और तोड़-फोड़ करनी पड़े तो वह अत्यन्त कष्टकारी होता है, आर्थिक बोझ भी बढ़ जाती है अतः उसको ध्यान में रख कर वास्तु निर्माण से पूर्व निम्नलिखित बिन्दुओं का विचार करें तो उत्तम होगा वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत निर्माण में सुधार आवश्यक है लेकिन उसपर गहन ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि उत्तर- पूर्व भाग में सुधार पुरुष को अच्छे परिणाम देता है जबकि दक्षिण –पश्चिम भाग महिला को अधिक प्रभावित करता है इसलिए ध्यान देना आवश्यक है अतः प्रशासनिक कमरों को उत्तर या पूर्व दिशा में बनायें। कार्यालय में वरिष्ट एवं अन्य प्रबंधक कक्ष के दक्षिण- पश्चिम भाग में इस प्रकार बैठाएं जिससे उसका मुख उत्तर या पूर्व की ओर हो, उनकी कुर्सियां आगंतुक की कुर्सियों से ऊँची हो तयह आगंतुको का मुख दक्षिण या पश्चिम दिशा में हो। कभी – कभी ऐसा भी देखा गया है कि छोटे –छोटे सुधार घरो में करने से वास्तु दोष दूर हो जाता है अतः ईशान कोण में कभी झाड़ू नही रखना चाहिए क्योंकि यह पवित्र कोण माना जाता है। कूड़ा-करकट ईशान कोण में कभी इकठ्ठा ना होने दें। ज्यादा समय तक घर में कचड़ा कभी इकठ्ठा ना होने दें। मनुष्य वैसे तो भवन, फैक्ट्री, व्यावसायिक संस्थान आदि बनाये जाते है लेकिन जब पुराने भवनों में सुधार करें तो विशेष ध्यान रखें अतः भवन में नए निर्माण को दक्षिण-पश्चिम में ना बढ़ाये। यदि भूखण्ड पश्चिम मुखी हो तो भवन का कोई भी भाग नया निर्माण उत्तर-पश्चिम के उत्तर की ओर ना करें। यदि भवन पूर्व मुखी है तो, दक्षिण-पूर्व फैक्ट्री में जल के लिए कुआँ, ट्यूबेल आदि उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) में बनवाना चाहिए और ये ध्यान रहे की पानी का बहाव सदैव उत्तर –पूर्व ईशान कोण की ओर हो। सैफ्टिक टैंक तथा सीवर लाइन की स्थापना एवं प्रवाह उत्तर –पश्चिम में रखें। फैक्ट्री का ढालान इस प्रकार हो जिससे वर्षा ऋतु का पानी एवं अन्य स्वच्छ जल का प्रवाह उत्तर –पूर्व दिशा में हो। छत के ऊपर पानी की टंकी को पश्चिम अथवा उत्तर –पश्चिम की दिशा में रखें इन सभी आधारभूत सिद्धान्त को ध्यान में रख कार निर्माण कार्य करने से सदैव लक्ष्मी की प्राप्ति होती है तथा रोग-शोक इत्यादि दूर होता है।

5.3.3 सफल व्यवसाय के लिए शहर चुनाव विचार

समय व स्थान मानव जीवन पर अपने प्रभाव को दर्शाता है अपितु, सम्पूर्ण पृथ्वी पर विभिन्न समयों में उनके शुभाशुभ परिणाम भी दृष्टिगोचर होते रहे हैं। हमारे ऋषि –मुनियों ने हमें ज्योतिष विज्ञान रूपी दर्पण की अमूल्य धरोहर दी है उसके आइने में हम यह देखने में सक्षम है कि किस प्रकार की घटनाएँ कब घटित होंगी। तथा इससे भी महवपूर्ण वास्तुशास्त्र है जिससे सम्पूर्ण जीवन में होने वाले शुभ- अशुभ फलों को निवास के अनुसार मानव प्राप्त करता है। विद्वानो ने समय की महत्ता को बल देते हुए मानव के कल्याण हेतु वास्तुशास्त्र रूपी ज्ञान प्रवाहित किया। जिससे हम यह जानकारी प्राप्त कर सकते हैं कि किस स्थान पर किस प्रकार की प्रभाव उत्पन्न हो सकती है। विद्वानो ने गृह एवं बड़े-बड़े भवनों के निर्दिष्ट स्थलों पर निर्माणों से अद्भुत विभिन्न शक्ति व प्रभाव बताये हैं, जिसका समावेश उपयोगी सिद्ध हो सकता है, इस प्रकार स्थान की शक्ति पर ही अच्छे एवं बुरे प्रभावों की उत्पादकता निर्भर करती है। समय और स्थान की अपनी-अपनी शक्ति है। स्थान पूरी पृथ्वी को इंगित करता है, भूमि एक महत्वपूर्ण वास्तु है इसमें ही विभिन्न ग्रामो, शहरों, नगरो सामान्य भवनों का समावेश है। प्रतेक मनुष्य के लिए इससे उत्पन्न अच्छे व बुरे प्रभावों को प्राणी मात्र को भुगतना ही पड़ता है। गृह निर्माण प्रत्येक व्यक्ति अभिलाषा है, जो जीवन पर्यंत बनी रहती है जब तक कि यह इच्छा पूरी ना हो जाए। हर मनुष्य गृह निर्माण करके उसमे सुखी पूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहता है।

जिस ग्राम,शहर या नगर जिसमे वास करना है या व्यापार करना है उस स्थान के चुनाव से है। हमारे वास्तु ग्रंथो में ग्राम वर्ण की काकड़ी के नाम से पूर्व के पाठ में बताया गया है। जिसके अनुसरण से मार्ग दर्शन प्राप्त किया जा सकता है इससे पहले हम अपनी बात आगे बतायें तो ज्योतिष के द्वारा यह देख लें की हमारे भाग्य में मकान, दुकान है की नहीं।

लग्नेश व सप्तमेश चतुर्थ भाव में हो तो बिना प्रयास के मकान की प्राप्ति होती है। स्वगृही चतुर्थेश हो तो भी भवन प्राप्ति योग बनता है। चतुर्थेश यदि दशम में हो तो पुराने माकन की प्राप्ति होती है। धनेश, लग्नेश, लाभेश की युति चतुर्थ भाव में हो तो अनेक मकान मिलता है।कर्क लग्न में गुरु हो तो भवन प्राप्ति होती है। चतुर्थ में शनि या राहु हो तो पुराने भवन प्राप्ति का योग बनता है। वृष लग्न में यदि चतुर्थ भाव में सूर्य हो तो अस्थायी मकान मिलता है। अगर चतुर्थेश अष्टम भाव में हो तो भी भवन प्राप्ति होता है। अगर चतुर्थेश सप्तम भाव में गया हो तो, स्त्री द्वारा भवन मिलने के योग होते है। लग्नेश स्वगृही हो तो जमीन मिलता है। चतुर्थेश एवं दशमेश एक-दुसरे के घर में हो तो भूमि वाला होता है। चतुर्थेश पंचम भाव में हो तो भी जमीन का स्वामी होता है। चतुर्थ एवं छठवें भाव का स्वामी स्वगृही हो तो शत्रु से भूमि प्राप्त होता है। अगर चतुर्थेश केन्द्र त्रिकोण में बली हो और मंगल भी बली हो तो भूमि योग बनता है। अगर चतुर्थेश, व्ययेश, अष्टमेश के साथ ट्रिक स्थान में हो तो जातक का घर अग्नि से जल जाता है। ‘ जातकाऽलंकार श्लोक संख्या 9 ’।

इन मासों में गृह प्रवेश करना चाहिए – पौष, फाल्गुन,वैशाख, माघ, श्रावण, कार्तिक इन मासों में नवीन घर में प्रवेश करे तो लाभ प्राप्त होगा। अन्य मास में मुहूर्त सामान्य होता है। गृहारम्भ में तिथि 3,4,5,6,7,10,11,12,13,15, श्रेष्ट है।

प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में अच्छे से अच्छा कार्य करने का प्रयत्न करता है। अधिकांश लोग इस जीवन में धन कमाने की होड़ में लगे हुए है और मानसिक शान्ति के लिए उपाय चाहते है। लगभग सभी लोग अपने- अपने संतान के उज्जवल भविष्य की कामना करते है सभी यही चाहते है कि उनका संतान मेघावी हो एवं भविष्य में धन-सम्मान एवं यश कमाए। संतान के उज्जवल भविष्य के लिए आवश्यक है की आपके निवास की वास्तु व्यवस्था वास्तुशास्त्र के अनुसार हो। हालाँकि वास्तु का क्षेत्र बहुत विशाल है इसलिए यहाँ पर कुछ सूक्ष्म बातों को ही लिखा जा रहा है – भवन निर्माण का विचार आते ही सबसे पहले यह विचारणीय है की घर किस ग्राम में,किस नगर में अथवा किस क्षेत्र में बनाया जाए क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक नगर या ग्राम में घर शुभदायक नहीं होता है। अतः कोण से ग्राम या नगर में घर का निर्माण कराया जाए जो सुख-समृधी तथा शांतिकारक हो इस विषय में सर्वप्रथम अपने अजन्म स्थान का ज्ञान आवश्यक है जो की जन्म कुण्डली से ज्ञात किया जा सकता है। जन्म कुण्डली ना होने पर अपने प्रचलित नाम के आधार पर अपना नक्षत्रा जानना चाहिए। इस प्रकार जिस ग्राम या नगर में मकान बनाने के इच्छुक हो उसके प्रथम अक्षर से उस ग्राम या नगर का नक्षत्र भी जानकारी कर ले। मकान बनाने से पूर्व से निश्चित कर लें की आपको मकान कब और कैसा बनाना चाहिए ? वास्तुशास्त्र में इन विषयों पर जैसे प्लाट का आकार कैसा हो, मकान का मुख्य द्वार कैसा हो ? किस दिशा में हो तथा मकान बनाने के नियमों का पूर्व के पाठो में वर्णन किया गया है अब यहाँ पर नक्षत्रों के अनुसार ग्राम नाम एवं गृह स्वामी के नाम नक्षत्र से संख्या के अनुसार फल समझना चाहिए। अन्य नियम है की ग्राम या नगर का क्या नक्षत्र है, यह जानकारी कर लें, उस संख्या से अपने नक्षत्र की संख्या तक गिने, जो संख्या शेष आवे,

उसका फल इस प्रकार समझना चाहिए। जैसे – ग्राम या नगर के नक्षत्र से गृह स्वामी का नक्षत्र 1,2,3,4,5, 21वा नक्षत्र है तो शुभ है शेष संख्यक नक्षत्रों में अशुभ समझना चाहिए। अन्य मतानुसार –

ग्राम या नगर के नक्षत्र से, अपने नक्षत्र तक गिने, जो संख्या प्राप्त हो, उसका फल इस प्रकार जानना चाहिए – 1 से 7 तक धन-सम्पति व मान-सम्मान दायक है। 8 से 14 तक धन हानि कारक है । 15 से 21 तक शुख-शान्ति एवं समृद्धि। 22 से 28 तक सुख की हानि और भटकाव समझना चाहिए।

अन्य मतानुसार – ग्राम या नगर का नक्षत्र क्या है, इसको जान लें, इस संख्या से अपने नक्षत्र संख्या तक गिने, जो संख्या आवें उसका फल इस प्रकार जानना चाहिये– 1 से 5 तक लाभकारी श्रेष्ट, 6 से 8 तक धन हानि, 9 से 13 तक धन-धान्य की वृद्धि, 14 से 19 तक दाम्पत्य सुख का अभाव स्त्री कष्ट, स्त्री हानि, 20 अंक आने पार पैर टूटने का भय। 21 से 24 तक संपत्ति वृद्धि, 25 अंक कष्ट तथा भय कारक, 26 अंक आने पर कष्ट व शोक प्रद, 27 अंक आने पर ग्राम एवं नगरवासियों से शत्रुता इस प्रकार विचार कर के रहने योग्य स्थान का निर्धारण करना चाहिए। परन्तु यहाँ पर हम चर्चा कर रहे है व्यवसाय के लिए शहर स्थान का चुनाव परन्तु प्रसंगवश रहने योग्य ग्राम या नगर का चर्चा कर दिया गया।

धन प्राप्ति के लिए किसी भी शुभ तिथि एवं शुभ दिन में प्रातः कल उठ कर ‘ ॐ ऐ श्रीं क्लीं ’ का ग्यारह हजार बार जाप करें। अपने घर का निर्माण होगा ज्योतिषीय सिद्धान्तो के अनुरूप ही वास्तुशास्त्र के सिद्धान्तों को जातक विशेष पर लागु करना चाहिये। अक्सर देखने को मिलता है की वास्तु निर्मित प्रमुख ज्योतिषीय सिद्धान्तों की अवहेलना कर वास्तु परक सिद्धान्तों को एक सामान ही सभी जातको पर लागु करने से अपेक्षित अनुकूलता की स्थिति नहीं आ पाती है और कभी- कभी तो लाभ के स्थान पर प्रतिकूल स्थितियां बनने लगती है। अतः इस दोष से बचने के लिए वास्तु शास्त्री को वास्तु निर्मित ज्योतिष ज्ञान के प्रमुख सिद्धान्तों को अवश्य ही अपना कर लागु कराना चाहिए। ज्योतिषीय सिद्धान्तों को वास्तुशास्त्र से अलग नहीं किया जा सकता है। एक वास्तुकार को ज्योतिष के सिद्धान्तों की जानकारी होना अति आवश्यक है। किसी क्षेत्र में यदि भूखण्ड खरीदने से पहले यह जानकारी ले लेना अधिक लाभकारी होगा की उस स्थान में ख़रीदे जाने वाले स्थान में लाभ होगा या नहीं । इस बात की जानकारी निम्नलिखित तालिका से प्राप्त कर सकते है।

गृह \ व्यापार स्थल के स्वामी की राशि के अनुकूल एवं शुभफलप्रद शहरों \ स्थानों की राशियां

क्र.सं.	गृह \व्यापार स्थल के स्वामीकी राशि	सफल एवं शुभदायक शहरों की राशि
1.	मेष	वृष, सिंह, धनु, मकर और कुम्भ
2.	वृष	मिथुन .कन्या, मकर .कुम्भ और मीन
3.	मिथुन	कर्क, तुला, कुम्भ, मीन और मेष
4.	कर्क	सिंह, वृश्चिक, मीन, मेष और वृष
5.	सिंह	कन्या, धनु, मेष, वृष और मिथुन
6.	कन्या	तुला, मकर, वृष, मिथुन, और कर्क

7.	तुला	वृश्चिक, कुम्भ, मिथुन, कर्क और सिंह
8.	वृश्चिक	धनु, मीन, कर्क, सिंह और कन्या
9.	धनु	मकर, मेष, सिंह, कन्या और तुला
10.	मकर	कुम्भ, वृष, कन्या, तुलाऔर वृश्चिक
11.	कुम्भ	मीन, मिथुन, तुला वृश्चिक और धनु
12.	मीन	मेष, कर्क, वृश्चिक, धनु और मकर

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि जातक की नाम राशि से दूसरी, पांचवीं, नवीं, दशवीं एवं ग्यारहवीं नाम राशि यदि क्षेत्र की हो तो यह शुभ है और अगर इसी क्रम में व्यक्ति की जन्म राशि से ग्राम सम्बन्धी राशि पहला, तीसरा, चौथा या सातवीं पडती है तो यह मध्यम फलदायी है। तथा स्थान या क्षेत्र की राशि अगर जातक की नाम राशि से छठें, आठवें, बारहवें आती है तो ऐसे अशुभ कहा गया है। भवन निर्माण हेतु उपयुक्त शहर के चयन के उपरान्त उस ग्राम –शहर के मध्य भाग को आधार मानते हुए उपयुक्त एवं अनुकूल दिशा का निर्धारण किया जाना भी आवश्यक है जो पहले बताया जा चुका है फिर भी आप नियमानुसार शहर का चुनाव कर के अपना व्यवसाय स्थान का चयन उक्त नियमानुसार करके लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

5.4 सारांश

भारतीय वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्त और उसकी गहराई, विशाल लहराते हुए समुद्र के समान है। इसमें लौकिक समुन्नति के वे सभी साधन उपलब्ध है, जिनमें सामान्य बुद्धि वाले गृहस्थ तथा शास्त्रों के मर्मज्ञ दोनों ही अपनी –अपनी रूचि के अनुसार भवन निर्माण में मार्ग निर्देश प्राप्त कर सकते हैं। वास्तुशास्त्र का महत्व अब किसी से छुपा नहीं है। सम्पूर्ण रूप से सोच –समझकर बनवाया हुआ भवन गृहस्वामी के लिए वरदान सिद्ध होता है, जब कि थोड़ी सी त्रुटी या दोष गृह स्वामी के परिवार के लिए समृद्धि और शान्ति नष्ट कर देती है। चूँकि शुद्ध और मंगलकारी मार्ग का अनुसरण करते हुए गृह -निर्माण के पथ को प्रशस्त करने के इच्छुक गृह स्वामी इस पाठ के आधारभूत सिद्धान्तों के अनुसार भवन निर्माण करके अवश्य लाभ उठा पायेंगे, किन्तु यह अवश्य ध्यान रहे कि भारतीय स्थापत्य कला में वास्तुशास्त्र की महत्ता स्वत:सिद्ध है। एक प्रकार से यह भवन –निर्माण कला का ऐसा जीवनोपयोगी अंग है, जिसे आज व्यापक वनाने की आवश्यकता है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में वस्तुशास्त्र के विषय में बहुत ही विवेचन मिलता है। भारत में ही वास्तुशास्त्र का विकास हुआ। वास्तुविदों द्वारा वर्तमान में जो उल्लेख मिलता है इसके आधार पर यह कहना सर्वथा उचित है कि प्राचीन काल में भारतवर्ष में ही स्थापत्यशैली का विकाश हुआ था।वर्तमान समय में आधुनिक प्रकार के मकान, दुकान,घर, चेम्बर्स, मन्दिर आदि का निर्माण हो रहा है, लेकिन प्राचीन शैलियों का प्रयोग किया जाय तो यह स्थापत्य वर्धक, समृद्धि वर्धक और ऐश्वर्यवर्धक हो सकता है। वास्तुशास्त्र के अध्ययन के लिए प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा दिए गये नियमों का अध्ययन करना परम आवश्यक है। न्यायशाला के जनक महर्षि गौतम ने कहा है कि शौच कर्म सदैव पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुख करके ही करना चाहिए। वास्तुशास्त्र के अनुसारशौचालय या मूत्रालय का निर्माण नैऋत्य दिशा में ही होना चाहिए, क्योंकि एसी स्थिति में मुख पूर्व अथवा उत्तर की ओर होगा। वास्तुशास्त्र ज्योतिष का ही एक अंग है आज जो भवन निर्माण हो रहे हैं।

वे अपरिहार्य दशाओं और अज्ञानतावश हो रहे हैं। आज भवन निर्माण में केवल सुविधा का विचार किया जाता है अत: उपरोक्त आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर अगर यदि भवन निर्माण किया जाय तो निश्चित ही समाज को लाभ प्राप्त होगा तथा आप यश के भागी बनेंगे मुझे आशा है कि यह पाठ आप सभी को पसन्द आएगा एवं उत्साह के साथ सबको आपलोग बतायेंगे।

5.5 शब्दावली

विश्रामस्थल = ठहरने का स्थान, परिदृश्य = चारों ओर दिखने वाला दृश्य, वैकल्पिक = ऐच्छिक,

तिजोरी = लोहे की छोटी सी मजबूत आलमारी, प्रतिपादित = निर्धारित निश्चित, निरन्तर = हमेशा

प्रदक्षिणा= परिक्रमा, अनहोनी = अचानक, निरापद = बिना संकट के,

पंचतत्व = आकाश – वायु – अग्नि – जल – पृथ्वी,

सारगर्भित = प्रभावकारी .

शुद्धता = शुद्ध होने का प्रभाव, निर्दिष्ट = निर्देश किया गया, रेखंकित = रेखाओं से बना हुआ, भीरु = डरा हुआ,

अविश्वास = जो किसी पर विश्वास नहीं करता हो, भयानक = डरावना,

संवेदना = सहानुभूति, प्रचुर = पर्याप्त, अप्रत्याशित = आकस्मिक, यथार्थवादी = यथार्थ सम्बन्धी,

शक्तिपुंज = शक्ति का श्रोत, वृक्षसम्पदा = वृक्ष से ऐश्वर्य वैभव की प्राप्ति, दो मंजिल = एक भवन के उपर दूसरा घर बनवाना, तकनीकी = प्राविधिक शिल्पक, सद्भावना = किसी के प्रति अच्छा भाव, संवेदनशील = भावुक –सहृदय, शिवत्व = कल्याण प्राप्ति उपाय (कल्याण प्राप्त कराने वाला, करने वाला), समावेश = व्याप्त होना,

लग्नेश = लग्न का स्वामी, धनेश= धन भाव के स्वामी, चतुर्थेश = शुखभाव का स्वामी

5.8 उपयोगी पुस्तकें

1. गृहवास्तुप्रदीप, डॉ. (श्री मती) शैलजा पाण्डेय, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वास्तुदोष कारण और निवारण, लेखक – शशिमोहन बहल, प्रकाशन – 20 अक्टूबर 2020, प्रकाशक – राधा पाकेट बुक्स 33 हरी नगर, मेरठ 25002
3. वृहद्वास्तुमाला, सम्पादक – डॉ.ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, डॉ. रवि शर्मा, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन
4. वास्तुसारसंग्रह, लेखक – आचर्य श्री कमलाकान्त शुक्ल, सम्पूर्णा नन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी
5. भवनभास्कर, लेखक – राजेन्द्र कुमार धवन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी संबत 2057, गीता प्रकाशन गोरखपुर

6. वास्तुचिन्तामणि, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बड़जात्या, श्री प्रज्ञाश्रमण दिगम्बर जैन संस्कृति न्यास, ज्योति निलय गरुड़ खाम्ब चौक इतवारी नागपुर

7. शिल्पदीपक, सम्पादक – डॉ. श्री कृष्ण जुगनु, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी

8. देव शिल्प (मन्दिर वास्तु एवं स्थापत्य), रचयिता –सिद्धान्त रत्नाकर, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बडजात्या छिंदवाड़ा, वर्ष –सिद्ध क्षेत्र नैनागिरी 15 /07 / 2000

5.7 बोध प्रश्न

1. वास्तुशास्त्र के आधारभूत सिद्धान्तों को लिखिए ?
2. शुभ वास्तु के प्रभाव को लिखिए ?
3. अशुभ वास्तु के प्रभाव को लिखिए ?
4 . वास्तुदोष और शयन कक्ष पर प्रकाश डालिए ?
5. व्यापार की सफलता के लिए राशियों के अनुसार शहर का चुनाव कीजिए ?

इकाई 6   वास्तुशास्त्र एवं ज्योतिष का अन्त:सम्बन्ध

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- ज्योतिष और वास्तु का अन्त: सम्बन्ध समझेंगे और बतायेंगे।
- गृहारम्भ में राशि एवं मास फल को बतायेंगे।
- ग्रामवास विचार ज्योतिष के अनुसार करेंगे।
- गृह आयु विचार, एवं मुख्यद्वार कथन राशि –लग्न के अनुसार करेंगे।
- गृह प्रवेश में लग्नफल एवं कलश चक्र विचार करके बतायेंगे।
- वास्तु से गणित ज्योतिष के अन्त : सम्बन्ध को भी बतायेंगे।
- क्षेत्रफल दिशा इत्यादि के बारे में भी बतायेंगे।

- नक्षत्र वैर भवन राशि स्वामी विचार भी करेंगे।
- गृह नाम का प्रथम अक्षर ,तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करन आदि को बतायेंगे।
- ज्योतिष के वर्ग और तत्व का विचार भी वास्तु में कर पायेंगे ।

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई संस्कृत विभाग, मानविकी विद्यापीठ, इन्दिरागांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में संचालित वास्तुशास्त्र में स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के अंतर्गत, वास्तुशास्त्र के स्वरूप एवं इतिहास नामक पाठ्यक्रम की खण्ड 1 "वास्तुशास्त्र का स्वरूप" नामक उपशीर्षक के अंतर्गत यह छठवीं इकाई है । इस इकाई का नाम है "वास्तुशास्त्र एवं ज्योतिष का अन्त:सम्बन्ध" ज्योतिष और वास्तु का अन्त : सम्बन्ध बहुत पुराना है आज भी वास्तुशास्त्र में भवन निर्माण के अंतर्गत पूर्वदिशा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है, चूँकि दिशाओं का ज्ञान ज्योतिष के अनुसार ही किया जाता है। एवं सूर्य की किरन भवन के अन्दर अधिक मात्रा में आने से भवन निवासी का स्वास्थ्य उत्तम होता है एवं मानसिक दृष्टी कोण से भी सफलता प्राप्त करता है।अत: हम कह सकते हैं कि वास्तु और ज्योतिष एक सिक्के के दो पहलू हैं, जैसे किसी जातक के जन्म कुण्डली के विश्लेषण में उसके भवन या घर वास्तु सहायक हो सकता है उसी प्रकार किसी के घर के विश्लेषण में भी उसकी जन्मकुंडली सहायक हो सकती है। वास्तुशास्त्र एक विलक्षण शास्त्र है इसमें इक्यासी पदों में पैतालीस देवतओं का समावेश है और विदिशा समेत आठ दिशाओं को जोडकर तिरपन देवता होते हैं। इसी प्रकार, जन्मकुडली में बारह भाव और नव ग्रह होते हैं, बिना ज्योतिष ज्ञान के वास्तु का प्रयोग अधुरा है। इसलिए वास्तुशास्त्र का उपयोग करने से पूर्व ज्योतिष को भी ध्यान रखना अति आवश्यक है, वास्तु में ज्योतिष का विशेष स्थान इसलिए है क्योंकि ज्योतिष के अभाव में ग्रहों के प्रकोप से हम नहीं बच सकते, हमारे ऊपर ग्रहों की स्थिति क्या है, हमें उनके कुप्रभावों से बचने के लिए क्या उपाय करने चाहिए, हमारा पहनावा, आभूषण, घर की दीवारें, वाहन दरवाजे आदि का आकार और रंग कैसा होना चाहिए, इसका ज्ञान हमें ज्योतिष तथा वास्तु के द्वारा ही हो सकता है, वास्तु का आशय केवल घर से ही नहीं बल्कि मनुष्य की सम्पूर्ण जीवनशैली से है । हमें कैसे रहना चाहिए, किस दिशा में शिर करके सोना चाहिए किस दिशा में बैठकर भोजन करना करना चहिए इत्यादि बहुत से प्रश्नों के ज्ञान की अनुभूति होती है। अगर यदि कोई परेशानी हो तो उस समस्या का निराकरण भी वास्तु और ज्योतिष के संयोग से आसानी से किया जा सकता है। प्रस्तुत पाठ में विभिन्न पहलुओं से वास्तु और ज्योतिष का अन्त : सम्बन्ध बताया गया है मुझे आशा है कि आपलोगों को पसन्द आएगा तथा इसके अनुसार आप अन्य लोगों को भी बतायेंगे।

6.2 ज्योतिष और वास्तु का अन्त: सम्बन्ध

इस बात का सबसे बड़ा जीवन्त उदाहरण आप को इससे समझना चाहिए कि जो भी ज्योतिष शास्त्र के ग्रन्थ हैं उनमें वास्तु की चर्चा की गयी है – मुहुर्तचिंतामणि में भी वास्तु प्रकरण है, वृहत्संहिता, वस्तुमाला, वास्तु प्रवन्ध, गृहभूषण, वास्तुप्रवन्ध, मुहूर्तमार्तण्ड, मुहूर्तगणपति, आदि ग्रन्थों में वास्तु की चर्चा की गयी है । इससे साबित हो रहा है कि वास्तुशास्त्र और ज्योतिष का अन्त : सम्बन्ध चिरकाल से ही चली आ रही है, और भी विशेष बात यह है कि

घर आदि के आरम्भ में वृषवास्तु चक्र का विचार किया जाता है जोकि यह चक्र ज्योतिष में सूर्य के राशि पर आधारित है लेकिन इसका उपयोग वास्तु में किया जाता है, ग्राम आदि वास में राशियों के अनुसार ग्राम में अलग – अलग दिशाओं तथा स्थानों में निवास करने का निर्देश किया गया है वस्तुतः किसी भी भूखण्ड या वास्तु में 9 ग्रहों का स्वामित्व होता है जो कि अलग –अलग दिशाओं एवं कोणों के अनुसार आधारित होता है। हर एक स्थान के देवता भिन्न – भिन्न होते हैं। तथा गृह निर्माण कार्य वास्तु नियमानुसार होने से सुख की वृद्धि होती है तथा इनके विपरीत होने पर अशुभ फल की प्राप्ति होती है, एवं वास्तु दोष भी लगता है जिसके फलस्वरूप अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है इसलिए इस बात को जानना आवश्यक है कि ज्योतिष से सम्बन्धित इन 9 ग्रहों का भवन पर किस प्रकार का प्रभाव होता है त्तथा इनका सम्बन्ध क्या है। वास्तुशास्त्र में पूर्व दिशा के स्वामी ग्रह सूर्य है तथा इस दिशा के देवता इन्द्र हैं, अगर यदि इस दिशा का वास्तु निर्माण कार्य निर्दोष हो तो उस भवन के निवासी उत्तम गुणों से युक्त और स्वस्थ होंगे इस स्थिति में गृह स्वामी को मान –सम्मान की प्राप्ति होगी, चूँकि पूर्व दिशा को वास्तु के अनुसार खुला रखने का नियम है, ताकि शुद्ध एवं प्रसस्थ गुणों से युक्त सूर्य की किरणे घर में प्रवेश करने से भवन में स्वस्थ वातावरण का संचार होता रहे तथा इस दिशा में अधिक निर्माण न करने की सलाह दी जाती है एवं इस दिशा को खुला रखना चाहिए।

इस बात को निम्लिखित चक्र के अनुसार समझ सकते हैं।

		पूर्व		
	दिशा – ईशान ग्रह – बृहस्पति देवता –शिव तत्व – जल	दिशा – पूर्व ग्रह - सूर्य देव –इन्द्र	दिशा – आग्नेय ग्रह - शुक्र देव – अग्निदेव तत्व – अग्नि	
उत्तर	दिशा – उत्तर ग्रह – बुध देवता –कुबेर	दिशा – मध्य ब्रह्म तत्व – आकाश	दिशा – दक्षिण ग्रह – मंगल देव - यमराज	दक्षिण
	दिशा – वायव्य ग्रह – चन्द्रमा देवता – वायु तत्व – वायु	दिशा – पश्चिम ग्रह - शनि देवता - वरुण	दिशा – नैऋत्य ग्रह - राहु देव – निऋती (राक्षस) तत्व – पृथ्वी	
		दक्षिण		

आग्नेय कोण के स्वामी ग्रह शुक्र है तथा इस दिशा के देवता अग्निदेव है चूँकि शुक्र ग्रह एश्वर्य के अधिपति भी हैं अत:जिस घर में आग्नेय कोण की स्थिति शुभ हो या वास्तु के अनुकूल निर्माण किया गया हो तो भवन स्वामी के लिए स्वास्थ्य उत्तम होगा एवं सम्पदा से परिपूर्ण होगा साथ ही इस दिशा में भोजनालय तथा विद्युत बोर्ड इत्यादि होना वास्तु के अनुरूप माना गया है। दक्षिण दिशा के स्वामी ग्रह मंगल हैं तथा इस दिशा के स्वामी देवता यम हैं चूँकि मंगल

सेनापति है, तथा युद्ध, झगड़ा, क्रोध इत्यादि का भी संचालन करते हैं, दक्षिण दिशा विधि, न्याय, मुकदमेबाजी, आराम जीवन और मृत्यु से सम्बन्धित भी है फलत: इस दिशा में शयन कक्ष तथा भण्डार गृह रखना चाहिए। दक्षिण पश्चिम दिशा या नैऋत्य कोण के स्वामी राहु ग्रह हैं इस दिशा में तामसी तत्व सबसे अधिक होता है इसलिए वास्तुशास्त्र में इस दिशा को सबसे अधिक निर्माण करके भारी रखना शुभ बताया गया है। गृह में भूलकर भी इस दिशा को खुला नहीं रखना चाहिए, इस दिशा में बैडरूम, आफिस बाथरूम या स्टोर रूम बनवाना उत्तम होता है। पश्चिम दिशा के स्वामी ग्रह शनि होते हैं तथा देवता वरुण है, शनि ग्रह नौकरी प्रदाता ग्रह भी कहे जाते हैं तथा भाग्य, कर्म, यश, एवं पौरुष पर भी इनका स्वमित्व है साथ ही पश्चिम दिशा भी लाभ एवं प्रसन्नता की दिशा है। इस दिशा को हमेशा साफ –सुथरा रखना चाहिए इस दिशा में ड्राइंगरूम, वेडरूम, एवं पुस्तकालय होना शुभ माना गया है।वायव्य कोण का स्वामी ग्रह चन्द्रमा हैं एवं इस दिशा के देवता वायुदेव हैं, चन्द्रमा शान्त चित्त एवं भाग्योदय के प्रतीक हैं साथ ही यह मन, चित्तवृति ,शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य, सम्पत्ति एवं माता के कारक भी है, चूँकि सामाजिक जीवन एवं व्यापार मनुष्य का मूल आधार है अत: इस दिशा में भोजन कक्ष, अतिथिकक्ष, विवाह योग्य कन्याओं का कमरा एवं बिना टायलेट का बाथरूम बनवाना शुभ होता है।उत्तर दिशा के स्वामी ग्रह बुध है तथा इस दिशा के देवता कुवेर देव हैं बुध वाणी के कारक एवं विद्वत्ता के प्रतीक हैं, जिस गृह में उत्तर दिशा शुभ होती है वह के लोग अत्यन्त बुद्धिमान, विद्वान, लेखन एवं कविता में रूचि रखने वाले अध्यापक इत्यादि बनकर सेवा करते हैं इसलिए इस दिशा में वास्तु के अनुसार अध्ययन कक्ष, तिजोरी और पुस्तकालय बनवाना शुभ होता है। ईशान कोण के स्वामी ग्रह बृहस्पति हैं एवं भगवान विष्णु इस दिशा के देवता हैं इस दिशा पूजन गृह एवं योग कक्ष का निर्माण करना शुभ फल का द्योतक है इश्वर की कृपा बनी रहती है तथा व्यक्ति को प्रसिद्धि प्राप्त होता है इस प्रकार आप को वास्तुशास्त्र तथा ज्योतिष का अन्त; सम्बन्ध समझना चाहिए।

6.2.1 गृहारम्भ में ज्योतिष के अनुसार राशि एवं मास फल

मुहूर्तचिंतामणि के अनुसार देवालय का आरम्भ करते समय राहू (नाग) का मुख मीन ,मेष और वृष का सूर्य हो तो ईशान कोण में, मिथुन ,कर्क, और सिंह राशि का सूर्य हो तो वायु कोण में, कन्या, तुला, और वृश्चिक का सूर्य हो तो नैऋत्य कोण में तथा धन ,मकर, और कुम्भ राशि के सूर्य हो तो अग्निकोण में रहता है।

घर का आरम्भ करते समय राहु का मुख सिंह, कन्या, और तुला राशि के सूर्य में ईशान कोण में, वृश्चिक ,धनु और मकर राशि के सूर्य में वायव्य कोण में ,कुम्भ मीन और मेष राशि के सूर्य में नैऋत्य कोण में तथा वृषभ मिथुन और कर्क राशि के सूर्य में अग्निकोण में रहता है।

तालाब आदि जलाशय का आरम्भ करते समय राहू का मुख मकर ,कुम्भ और मीन के सूर्य में ईशान कोण में, मेष ,वृष, और मिथुन के सूर्य में वायव्य कोण में ,कर्क ,सिंह और कन्या के सूर्य में नैऋत्य कोण में तथा तुला ,वृश्चिक, और धनु के सूर्य में अग्निकोण में रहता है।

मुख के पीछे भाग में खात करना चाहिए, मुख ईशान कोण में हो तो अग्निकोण में खात करना चाहिए, मुख वायव्य कोण में हो तो खात ईशान कोण में, मुख नैऋत्य कोण में हो तो खात वायव्य कोण में और मुख अग्नि कोण में हो तो खात नैऋत्य कोण में करना चाहिए। अन्यमतानुसार - विवाह आदि के समय जो वेदी बनाई जाती है उसके उसके प्रारम्भ में वृष

आदि, देवालय के आरम्भ में मीन आदि, घर के आरम्भ में सिंह आदि, जलाशय के आरम्भ में मकर आदि और किले के आरम्भ में कन्या आदि तीन – तीन संक्रांतियों में राहू का मुख ईशान आदि कोण में विलोम क्रम से रहता है। घर आदि के आरम्भ में वृषवास्तुचक्र कहलाता है, घर और प्रसाद आदि के आरम्भ में यह वृषवास्तु चक्र देखा जाता है सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उस नक्षत्र से चन्द्रमा के दिन नक्षत्र तक गिनें। इसमें प्रथम तीन नक्षत्र वृषभ के मस्तक पर समझें। इन नक्षत्रों में घर आदि का आरम्भ किया जाय तो अग्नि का भय होता है, चार से सात नक्षत्र में अगले पैर पर समझना चाहिए, इन नक्षत्रों में घर बनाना आरम्भ किया जाय तो घर शुन्य रहता है अर्थात उसमे कोई निवास नहीं करता, आठ से ग्यारह नक्षत्र पीछे के पैरों पर समझें, इन नक्षत्रों में गृहरम्भ करने से गृहस्वामी का वास स्थिर रहता है। 12 वें से 14 नक्षत्र पीठ पर समझें, इन नक्षत्रों में गृह का आरम्भ करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।15 से 18 नक्षत्र दाहिनी कोख में समझें जिसमें गृहारम्भ करने से अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं। 19 से 21 नक्षत्र पूंछ पर समझें इसमें गृहारम्भ करने से स्वामी का नाश होता है, 22 से 25 नक्षत्र बाई कोख पर समझें इस समय गृहारम्भ करने से गृहस्वामी दरिद्र होता है। 26 से 28 नक्षत्र का स्थान मुख पर समझना चाहिए जिसमें गृहारम्भ करने से निरन्तर कष्ट बना रहता है। इस प्रकार से देखें तो सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनने से प्रथम सात नक्षत्र अशुभ है, आठ से अट्ठारह नक्षत्र शुभ हैं, उन्नीस से अट्ठाईस नक्षत्र अशुभ हैं।

राशि फल – धनु, मीन, मिथुन, और कन्या इन चार राशियों में जब सूर्य स्थित हों तब कभी भी गृह निर्माण का कार्य आरम्भ नहीं करना चाहिए। तुला, वृश्चिक, मेष और वृष इन चार राशियों में सूर्य हो तो कभी भी पश्चिम दिशा के द्वार वाला घर न बनावें लेकिन दक्षिण अथवा उत्तर दिशा द्वार वाले घर का निर्माण आरम्भ किया जा सकता है। कर्क, सिंह ,मकर और कुम्भ इन चार राशियों में जब सूर्य हो तो दक्षिण और उत्तर दिशा द्वार वाला घर नहीं बनाना चाहिए, परन्तु पूर्व अथवा पश्चिम दिशा के द्वार वाले घर के निर्माण का कार्य आरम्भ कर देना चाहिए। मुहूर्त चिंतामणि के अनुसार जब कर्क, मकर सिंह और कुम्भ राशि का सूर्य हो तब पूर्व या पश्चिम दिशा के द्वार वाले घर का निर्माण किया जा सकता है। तुला, मेष, वृष, और वृश्चिक राशि के सूर्य हो तो दक्षिण अथवा उत्तर दिशा के द्वार वाले घर का आरम्भ किया जाता है। इसके विपरीत करने से अथवा मीन ,धनु, मिथुन, और कन्या राशि के सूर्य में गृह निर्माण करने से व्याधि और शोक होते हैं तथा धन का नाश होता है।

मास फल – गृह निर्माण कार्य अगर चैत्र मास में किया जाय तो शोक, वैशाख में किया जाय तो धन प्राप्ति, ज्येष्ठ मास में किया जाय तो मृत्यु कारक, आषाढ़ में किया जाय तो हानि और श्रावण में किया जाय तो धनप्राप्ति होती है, भाद्रपद में निर्माण करने से घर शुन्य रहता है। आश्विन में गृहारम्भ करने से क्लेश, कार्तिक में आरम्भ करने से घर वीरान रहता है, मार्गशीर्ष में करने से सम्मान प्राप्त होता है, पौष में करने से सम्पत्ति प्राप्त होती है। माघ में अग्निभय तथा फाल्गुन में आरम्भ करने से सुख की प्राप्ति होती है। अन्य मतानुसार वैशाख, मार्गशीर्ष, सावन, फल्गुन और मतान्तर से पौष इन महीनों में शुक्ल पक्ष में शुभ दिन देखकर निर्माण कार्य किया जाय तो सुख – सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। परन्तु ये सभी विचार पत्थर, ईट, के मकान बनाने में करना चाहिए, घास और लकड़ी के मकान बनाने में ए सभी विचार नहीं किए जाते हैं इसी प्रकार नक्षत्र और तिथि फल भी बताये गये हैं। मित्रों ज्योतिष और वास्तु का इतना घनिष्ट सम्बन्ध आप को इस प्रकार समझना चाहिए कि शुभ लग्न और चन्द्रमा की प्रबलता को देखकर अधोमुख संज्ञक नक्षत्र में खात मुहूर्त करना चाहिए तथा शुभ लग्न एवं चन्द्रमा बलवान

हो तो उर्ध्वमुख संज्ञक नक्षत्र में शिला का स्थापना करके मकान बनाना चाहिए ऐसा निर्देश किया है।

6.2.2 ग्रामवास में ज्योतिष और वास्तु के अनुसार निवास विचार

जिस प्रकार वास्तुशास्त्र में सर्वप्रथम घर बनाने में द्वारशुद्धि इत्यादि का विचार करते हैं तो उसमें वृष वास्तु चक्र के अनुसार नक्षत्र शुद्धि इत्यादि का विचार देखा जाता है जैसा कि पूर्व में कहा भी गया है तथा उसी क्रम में लग्न शुद्धि भी देखी जाती है आशय यह है कि हर एक जगह वास्तु में ज्योतिष का अन्त: सम्बन्ध है।

ग्रामवास में भी सर्वप्रथम नक्षत्र से ही आरम्भ होता है ग्राम के नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक नराकृति चक्र का विचार किया जाता है। नक्षत्रों की गणना मनुष्य के सिर से किया जाता है तथा हर एक अंग पर नक्षत्रों को बैठाया जाता है तथा उसका फल अलग –अलग होता है। ज्योतिष के अनुसार ही वास्तुशास्त्र में वर्ग के ज्ञान का फल बताया गया है ,ये आठ वर्ग निम्नलिखित है – अ, क, च, ट, त, प, य, श तथा इन वर्गो के स्वामी गरुड़, विडाल, सिंह, स्वान, सर्प, मूषक, मृग और मेष हैं। तथा अपने से पाचवां शत्रु होता है, इस तरह ग्रामवास में वर्ग विचार किया जाता

है। ठीक इसी प्रकार ग्रह मेलापक भी विचार किया जाता है अत: हम यह कह सकते हैं कि वास्तु और ज्योतिष का अन्त:सम्बन्ध बहुत ही सारगर्भित है। इसी प्रकार काकिणी का विचार भी विचार किया जाता है, जो कि ग्रह मत्री, वस्तु खरीदने –वेचने में, ग्रामादिवास में तथा इससे भी सम्बन्ध प्रदर्शित होता है। वृहद्वास्तुमाला में भी राशियों के अनुसार ग्रामवास का विचार किया गया है, जिसमें वृष, मिथुन, सिंह, मकर राशि के लोगों को गांव के मध्य में तथा पूर्व, अग्नेय, दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम ,वायव्य ,उत्तर ईशान से क्रमशः वृश्चिक, मीन, कन्या, कर्क, धनु, तुला, मेष, कुम्भ राशि वालों को निवास नहीं करना चाहिए, तथा अकारादि वर्ग उपर्युक्त दिशाओं में क्रमशः बलवान होते हैं। जैसे – अवर्ग नाम वाले मानवों को पश्चिम दिशा में निवास करना चाहिए या पश्चिमाभिमुखी द्वार रखना चाहिए।

वास्तुशास्त्र में दिग्दशा के अनुसार ग्रह एवं उनके वर्षादि का निर्णय निर्णय होता है वह भी ज्योतिष शास्त्र से ही सम्बन्धित है। दिग्दशा जानने के लिए नियम यह है कि गृहस्वामी के नाम वर्ग, दिशा वर्ग, ग्राम वर्ग के अंकों को जोड़ने से जो योगफल आवे उसमें 9 का भाग देने से जो शेष बचे उसके अनुसार दशाफल समझना चाहिए। इसमें मुख्य बात यह है कि शुभ ग्रहों की दशा में शुभ फल प्राप्त होता है तथा अशुभ ग्रहों की दशा में अशुभ फल मिलता

है। जैसे- सूर्य की दशा में गृह सम्बन्धित कार्य करने से उद्वेग होता है ,चन्द्रमा की दशा धन युक्त बनाती है। मंगल की दशा भय दायक होती है,राहु दशा काल ज्वर पीड़ा देने वाली होती है, गुरु में सुख –सम्पदा की प्राप्ति होती है, शनि में रोग होता है, बुध में सुख, केतु में दुःख, शुक्र में आनन्द की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार मुहूर्त ज्योतिष के बिना वास्तुशास्त्र अधुरा है, जिस प्रकार ज्योतिष शास्त्र में विवाह मेलापक का विचार है उसी प्रकार वास्तुशास्त्र में देश ,ग्राम, गृह ज्वर, व्यवहार, द्युत आदि में काकणी विचार वर्ग शुद्धि आदि मेलापक राशि नाम से करने का ही विचार है। वास्तुशास्त्र में पिण्ड आदि द्रव्यों का आनयन दोनों में समान रूप से होता है, साथ ही ऋण – लाभ नक्षत्रानयन ,नक्षत्र शुद्धि विचार के उपरान्त गृहारम्भ व गृह प्रवेश कालिक ग्रहों के स्थिति अनुसार फल होता है। इससे स्पष्ट होता है कि ज्योतिष और वास्तु का

अन्त: सम्बन्ध है और भी विशेष बात यह है कि ज्योतिष में जब हम कुण्डली देखते हैं तो उसमें चतुर्थ भाव से भूमि – भवन इत्यादि का विचार किया जाता है तथा इस भाव की ग्रह स्थिति के अनुसार यह पता लगाया जा सकता है कि मुझे किस प्रकार की वास्तु प्राप्त होगी तथा इसमें क्या सावधानियां बरतनी चाहिए, इसी प्रकार वास्तु से भी इस बात का पता लगाया जा सकता है कि इस वास्तु में निवास का मुझे क्या फल होगा अत: इससे भी स्पष्ट होता है कि ज्योतिष और वास्तु का अन्त: सम्बन्ध बहुत ही सारगर्भित है।

6.2.3 मण्डलेश फल एवं मुख्यद्वार विचार

चूँकि भवन निर्माण से पूर्व भूमि चयन से लेकर गृह प्रवेश तक विधिवत विचार किया जाता है भूमि चयन से पूर्व जिस ग्राम नगर आदि में भूमि लेना हो उसके साथ गृह स्वामी को ज्योतिषीय अनुकूलता आवश्यक मानी गयी है। इसके लिए वर्ग मैत्री काकिणी, वर्ग एवं राशि के अनुसार ग्राम या नगर की दिशा एवं दशा विचार, वर्णानुसार भूमि चयन, चयनित भूमि के निकट वृक्ष एवं कुपादि का विचार किया जाता है। मण्डलेश बनाने की प्रक्रिया ज्योतिष से सम्बन्धित है परन्तु इसका प्रयोग वास्तु में यहां पर किया गया है – यहां पर आप को मण्डलेश का आशय उस भूभाग से समझना चाहिए जहां पर आप भवन निर्माण कर रहे हैं। मण्डलेश आनयन की विधि यह है कि – गृहस्वामी के हाथ से जिस भूमि पा घर बनवाना है उसकी लम्बाई –चौड़ाई नाप लेकर दोनों को आपस में गुना करें फिर जो अंक आवे उसमें 2 से गुणा करें और उस गुणनफल में 8 का भाग दें तथा शेषफल के अनुसार मण्डलेश को समझें। 1 शेष बचे तो इन्द्र, 2 में विष्णु ,3 में यम, 4 में वायु, 5 में कुबेर, 6 में शिव, 7 में ब्रह्मा, 8 में गणेश, मण्डलेश होते हैं, इनका फल आप को निम्नलिखित चक्र से समझना चाहिए। मण्डलेश फल चक्र –

शेष संख्या	1	2	3	4	5	6	7	8
मण्डलेश	इन्द्र	विष्णु	यम	वायु	कुवेर	शिव	ब्रम्हा	गणेश
फल	सौख्य	यश	दु:ख	उत्पादक	धनलाभ	कलह	सुखलाभ	सर्वसिद्धि

मित्रों भू स्वामी के हाथ से लम्बाई – चौड़ाई की नाप को आपस में गुणा करके 9 से भाग देकर जो शेष आवे उसके अनुसार भी यह समझा जा सकता है कि यहाँ निवास करने पर क्या फल होगा – जैसे – 1 शेष बचे तो वहां पर निवास करने वाला दानी होगा, 2 शेष बचे तो बुद्धिमान होगा, 3 शेष बचे तो भीरु होगा, 4 शेष बचे तो वहां निवास करने वाले के साथ कलह होगा, 5 शेष बचे तो राजा के समान होगा, 6 शेष बचे तो दानवी प्रवृति का होगा, 7 शेष बचे तो उसमें नपुंसकता आयेगी, 8 शेष बचे तो वह गृह वासी धनी होगा ऐसा जानना चाहिए।

द्वार विचार – अब तो आप को पूर्णतया ज्ञात हो गया होगा कि वास्तु और ज्योतिष का अन्त:सम्बन्ध बहुत ही महत्वपूर्ण क्योंकि द्वार के निर्णय में भी दोनों के अनुसार बताया गया है।इसलिए सर्व प्रथम राशियों वर्ण को जानना आवश्यक है, कर्क –वृश्चिक –मीन राशियों का ब्राह्मण वर्ण है, मेष – सिंह –धनु इन राशियों का वर्ण क्षत्रिय है, वृष –कन्या– मकर राशियों का वर्ण वैश्य है, तथा मिथुन – कुम्भ एवं तुला शुद्र वर्ण की राशियां हैं। इस प्रकार ब्राह्मण वर्ण राशि वालों के लिए अपने गृह का द्वार पूर्व दिशा में रखना चाहिए। क्षत्रिय वर्ण राशि वाले को उत्तर गृह द्वार बनाना चाहिए, वैश्य वर्ण राशि वालों को दक्षिण द्वार, एवं शुद्र वर्ण राशि वालों को पश्चिमाभिमुख द्वार बनाने क विधान है। मार्तण्ड के अनुसार – घर के दीर्घ – विस्तार के योग में 9 का भाग देकर अगर यदि पूर्व की ओर द्वार बनाना हो तो बायीं ओर से दो हिस्सा

भूमि छोड़कर तीसरे या चौथे अंश में, दक्षिणाभिमुख द्वार बनाना हो तो चौथे – पाचवें भाग में, और उत्तराभिमुख द्वार करना हो तो चौथे – पाचवें भाग में ही द्वार निर्माण करना चाहिए। अन्यमतानुसार – घर के जिस भाग में द्वार बनाना हो उस भाग की लम्बाई –चौड़ाई को जोड़कर उसमें 9 का भाग देना चाहिए। उसमें 5 भाग दक्षिण और तीन भाग उत्तर की ओर छोड़कर शेष भाग में द्वार बनाना चाहिए। मकान का दक्षिण- वाम भाग का विचार घर से बाहर निकलते समय का समझें।इस प्रकार आपको वास्तु एवं ज्योतिष का सम्बन्ध समझना चाहिए।

6.2.4 गृह प्रवेश में लग्न फल तथा कलश चक्र विचार

आप को इस बात को जानना आवश्यक है कि पुराने समय में राजा लोग जब यात्रा करके आते थे उस समय भी गृह प्रवेश होता था, लेकिन वर्तमान समय में गृहस्वामी अपने भवन निर्माण पूर्ण हो जाने पर गृह प्रवेश करते हैं।इसमें निम्नलिखित विषयों को ध्यान रखना चाहिए – उत्तरायण सूर्य के रहने पर ज्येष्ठ, माघ, फल्गुन एवं वैशाख मास में द्वार की दिशा में स्थित नक्षत्र, मृदु एवं ध्रुव नक्षत्रों में, जन्म राशि या लग्न से उपचय (3, 6, 10, 11) राशि स्थिर लग्न में, राजा को यात्रा से आने पर एवं नवीन गृह में प्रवेश करना चाहिए।

जन्मलग्न की पहली राशि में गृह प्रवेश करने पर आरोग्य, दूसरी में दरिद्रता, तीसरी में सम्पदा, चौथी में वन्धुघात, पाचवीं में पुत्र –नाश, छठीं में पुत्र –नाश, सातवीं में पत्नी –नाश, आठवीं में गृहस्वामी के प्राणों का नाश, नवीं में कलह, दसवीं में सिद्धि, ग्यारहवीं में अर्थलाभ, एवं बारहवीं में भय प्रदान करनेवाला होता है।

गृह कर्ता के जन्मलग्न एवं जन्मराशि गृह प्रवेश काल में प्रवेश लग्न गत हो तो गृह – प्रवेश शुभ होता है, ऐसा मत शौनक आदि ऋशियों का है।

(1, 8, 5, 2, 11,) वें भाव में सूर्य के रहने पर पूर्व आदि दिशा के गृह में प्रवेश करने के लिए सूर्य वाम कहे जाते हैं)।

सूर्य के वाम होने पर पूर्वादि मुख वाले गृहों में प्रवेश का फल मृत्यु, सुत, अर्थ एवं लाभ होता है। पूर्व द्वार वाले गृह में पूर्ण तिथि, दक्षिण में नंदा तिथि, पश्चिम में भद्रा एवं उत्तर में जया तिथि में प्रवेश करना चाहिए।

विशाखा नक्षत्र में गृह प्रवेश करने पर स्त्री नाश, कृतिका नक्षत्र में प्रवेश करने पर गृह का नाश, आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्टा, अथवा मूल नक्षत्र में प्रवेश करने पर पुत्र का विनाश, भरणी, तीनों पूर्वा अथवा मघा में प्रवेश करने पर गृहस्वामी का नाश होता है।

मेष, कर्क, मकर, एवं तुला लग्न में, चैत्र मास में, रिक्ता तिथि (4, 9, 14,) मंगलवार, रात्रि एवं अधिक मास में गृह प्रवेश प्रशस्त नहीं होता है।

कलश चक्र – गृह प्रवेश के समय सूर्य संक्रांति जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र को कलश के मुख पर रखना चाहिए।उस नक्षत्र में गृह प्रवेश करने पर अग्निदाह होता है, इसके बाद उस चार नक्षत्र से आगे के चार नक्षत्र कलश के पूर्व भाग में रखें जाते हैं। उन नक्षत्रों में गृह प्रवेश करने पर गृह स्वामी का अपने गृह से उद्वास होता है। इसके आगे चार नक्षत्र कलश के दक्षिण भाग में रखें जाते हैं। उनमें गृह प्रवेश करने पर गृहस्वामी को लाभ होता है। आगे के चार नक्षत्र पश्चिम भाग में होते हैं, इनमें गृह प्रवेश से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। आगे चार नक्षत्र उत्तर भाग में रखे

जाते हैं, जिनमें गृह प्रवेश से कलह होता है। अगले चार नक्षत्र कलश के गर्भ में, पुन: तीन नक्षत्र गुद में, एवं तीन नक्षत्र कंठ में, स्थापित करना चाहिए । गर्भस्थ नक्षत्रों में गृह प्रवेश करने पर विनाश, गुदस्थ नक्षत्रों में स्थिरता एवं कंठस्थ नक्षत्रों में भी स्थिरता की प्राप्ति होती है।

अन्य मतानुसार सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र पर्यन्त नक्षत्रों में 3 नक्षत्र सूर्य के, 3 बुध के, 3 शुक्र के, 3 शनि के, एवं 3 चन्द्रमा के नक्षत्र होते हैं।पुनः 3 नक्षत्र मंगल, 3 वृहस्पति, 3 राहु, एवं 3 केतु के नक्षत्र होतेहैं इनमें गृह प्रवेश नहीं करना चाहिए।

इसी प्रकार ज्योतिष और वास्तु का अन्त; सम्बन्ध आप इससे समझ सकते हैं कि गृहप्रवेश में हवन चक्र का विचार किया जाता है वह भी ज्योतिष के अनुसार ही होता है।इसका नियम यह है कि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से प्राप्त तिथि संख्या में 1 जोडकर उसमें रविवार से वर्तमान वार की संख्या जोड़ दे एवं उसमें 4 का भाग दें। शेष 3 (एवं 0) शेष होने पर भूमि पर अग्निवास होता है। उस दिन होम शान्ति करने से सुख और शान्ति मिलती है। 1 शेष होने पर आकाश में, 2 शेष होने पर पाताल में अग्नि का वास होता है, इसमें होम करने पर प्राण एवं धन की हानि होती है। इस प्रकार आप ने समझा कि ज्योतिष और वास्तु एक दुसरे के पूरक हैं।

6.3 वास्तु से ज्योतिष गणित का सम्बन्ध

इस वर्ण्य विषय से आपको यह समझना चाहिए की वास्तु में जो भी आनयन की प्रक्रिया है वह सभी गणितज्योतिष पर आधारित है जैसे – देवताओं का घर अर्थात देवालय, भवन या गृह निर्माण करने से पूर्व निम्नलिखित अंगों का शुभाशुभ फल का आंकलन अवश्य ही कर लेना चाहिए तथा इसी को वास्तु में ज्योतिष का अन्त: सम्बन्ध भी समझना चाहिए। इन अंगों के नाम इस प्रकार है – 1 . क्षेत्रफल 2. आय 3. नक्षत्र 4. नक्षत्रगण 5. नक्षत्र दिशा 6. नक्षत्र वैर 7. व्यय 8. तारा 9. नाड़ी 10. राशि 11. राशि स्वामी 12. गृहनामाद्यक्षर 13. लग्न 15 . तिथि 16. वार 17. करन 18. योग 19. वर्ग 20. तत्व 21. आयु इस बात को उदाहरण के अनुसार इस प्रकार समझना चाहिए – यदि पांच हाथ पांच अंगुल लम्बा और इतना ही चौड़ा तथा 6 हाथ 1 अंगुल ऊँचा कोई वास्तु निर्मित करनी हो या बनानी हो तो सर्वप्रथम इनको अंगुलियों के मान में परिवर्तित करेंगे।

चूँकि 1 हाथ = 24 अंगुल, अतएव

लम्बाई (5 हाथ x 24) + 5 अंगुल = 125 अंगुल।

चौड़ाई (5 हाथ x 24) + 5 अंगुल = 125 अंगुल।

ऊंचाई (6 हाथ x 24) + 1 अंगुल = 145 अंगुल

इसी गणितीय नियम के अनुसार अग्रिम वर्ण्य विषय में क्षेत्रफल, आय आदि का आनयन किया जायेगा जो कि वास्तु के फल जानने में सहयोगी होगा –

6.3.1 क्षेत्रफल – आय –नक्षत्र – नक्षत्रगण- नक्षत्रदिशा विचार

1) चूँकि क्षेत्रफल का आशय आप को मकान के लम्बाई – चौड़ाई के अनुसार समझना चाहिए – जैसे –

   लम्बाई × चौड़ाई = क्षेत्रफल

अतएव 125 अंगुल × 125 अंगुल = 15625 वर्गफुट, इस प्रकार क्षेत्रफल 15625 वर्गफुट हुआ।

2) आय – वास्तु के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में 8 का भाग देने से जो शेष आवे वह प्रथम क्रम से आय होता है पूर्व उदाहरण क्षेत्रफल 15625 वर्गफुट है, अत: 15625 / 8 = 1953 लब्धि आई और शेष 1 बचा, अत: प्रथम ध्वज आय है और यह शुभ है।

3) नक्षत्र – वास्तु के कुल क्षेत्रफल में 27 का भाग देने से शेष राशि नक्षत्र की मूल राशि होती है, मुलराशि को 8 से गुनाकर 27 का भाग देने पर जो शेष आवे वही अंक नक्षत्र संख्या होगी। पूर्व उदाहरण के अनुसार क्षेत्रफल 15625

वर्गफुट है। अत: 15625 / 27 = 578 लब्धि आई, तथा शेष 19 बचा, अत: नक्षत्र की मूल राशि 19 हुआ। अब 19 × 8 = 152 लब्ध आया, अब इसमें 27 का भाग दिया, 152 /27 = 5 लब्धि आया तथा शेष 17 बचा यही नक्षत्र अंक है, अत: 17 वां नक्षत्र अनुराधा नक्षत्र हुआ।

4) नक्षत्रगण – अनुराधा नक्षत्र का देवगण है अत: भवन का भी देवगण होगा जो कि शुभ है।

5) नक्षत्र दिशा – अनुराधा नक्षत्र पर चन्द्र पश्चिम दिशा में रहते हैं अत:अनुराधा नक्षत्र की दिशा भी पश्चिम दिशा होगी।

6.3.2 नक्षत्र वैर, व्यय, तारा, नाड़ी ,राशि, राशिस्वामी विचार

6) नक्षत्र वैर – अनुराधा नक्षत्र का किसी नक्षत्र से वैर नहीं है।

7) व्यय – नक्षत्र की अंक संख्या में 8 का भाग देने पर जो शेष अंक रहता है वही व्यय की संख्या होती है ,पूर्व उदाहरण में नक्षत्र का अंक 17 है इसमें 8 का भाग दिया, 17 / 8 = 2 लब्धि आया तथा शेष 1 बचा यह व्यय का अंक है।

8) तारा – गृह स्वामी के नक्षत्र से गृह तक गिने, जो अंक आवे उसमें 9 से भाग देने पर जो शेष आवे वह इस वास्तु का तारा होगा। इस बात को आप को इस प्रकार समझना चाहिए –

वास्तु अजित कुमार की है अत: वे ही इस वास्तु के गृहस्वामी हुए। चूँकि इनका जन्म नक्षत्र उत्तराषाढ़ा है अत: उत्तराषाढ़ा से अनुराधा नक्षत्र तक गिनने पर नक्षत्र क्रम 25 वां हुआ, इस नक्षत्र क्रम में 9 का भाग देने से –

25 / 9 = 2 लब्धि आई तथा शेष 7 बचा यही अंक तारा का अंक है। ताराओं में 4, 6, 9 शुभ है।

1, 2, 8 मध्यम फल समझना चाहिए, तथा 3, 5, 7 को अशुभ समझना चाहिए।

9) नाड़ी – गृहपति अजित कुमार के उतराषाढा जन्म नक्षत्र की नाड़ी अन्त्य हुआ तथा वास्तु के अनुराधा नक्षत्र की नाड़ी मध्य है, तथा इन दोनों की नाड़ी में प्रीति है अत: ये शुभ है।

10) राशि – नक्षत्र के क्रमांक में 60 का गुना करके 135 का भाग देने से जो लब्धि आवे उसमें एक और जोड़ दें वही राशि की संख्या होगी। जैसे – उक्त उदाहरण में नक्षत्र का क्रमांक 17 है।

अत: 17 × 60 = 1020 गुणनफल आया

अब नियमानुसार 1020 / 135 = 7 लब्धि आया, अत: इसमें 1 जोड़ा ,

7 + 1 = 8 यह राशि का क्रमांक है, अतएव 8 वीं राशि हुई

11) राशिस्वामी – इस उदाहरण में भवन की राशि वृश्चिक हुआ, तथा इस राशि के स्वामी मंगल है, गृह स्वामी की राशि धनु है ,एवं इस राशि के स्वामी गुरु हैं। चूँकि बृहस्पति और मंगल में मित्रता है अत; यह भी शुभ हुआ।

6.3.3 गृह स्वामी का नामाद्यक्षर, अंशक, लग्न ,तिथि ,वार ,करण, योग आदि विचार

12) गृहस्वामी का नामाद्यक्षर – क्षेत्रफल में 4 का गुणा कर 16 का भाग दें। शेष अंक ध्रुव आदि से प्रारम्भ करके गृह का होगा। अब इसको इस प्रकार समझना चाहिए उदाहरन में क्षेत्रफल 15625 वर्गफुट है, इसमें 4 का गुणा करके तथा लब्धि में 16 का भाग देने से जो शेष आएगा वही गृह का नाम होगा।

जैसे - 15625 x 4 = 62500 गुणनफल आया, इसमें 16 का भाग दिया ,

62500 / 16 = 3906 लब्धि आई तथा शेष 4 बचा, यही गृह का नामाद्याक्षर होगा, चौथा गृह नन्द है। यह नन्द वास्तु का नाम है तथा यह शुभ भी है।

13) अंशक – नक्षत्र की मूल राशि में व्यय अंक तथा नामाद्यक्षर को आपस में जोड़े। उसमें 3 का भाग दें तो शेष राशि अंशक होगा। पूर्वोक्त उदाहरण में नक्षत्र की मूल राशि अंक 19 है ।व्यय अंक 1 है, एवं गृह का नामाद्यक्षर 4 है। अत: 19 + 1 + 4 = 24 योगफल , इस योगफल में 3 का भाग दें।

24 / 3 = 8 लब्धि आया तथा शेष 0 रहा अत: यह राज अंशक होगा, यह शुभ है।

14) लग्न – (आय अंक + नक्षत्र अंक + व्यय अंक + तारा अंक + अंशक अंक) इनके योग में 12 का भाग देने पर जो शेष आयेगा वही अंक लग्न होगा।

उदाहरण के अनुसार आय अंक + नक्षत्र अंक +व्यय अंक +तारा अंक +अंशक अंक इन सबको जोड़ा

1 + 17 + 1 +1 + 3 =23

योगफल 23 में 12 का भाग दिया

23 / 12 = 1 लब्धि आया तथा शेष 11 रहा यही अंक लग्न का अंक होगा।

अत: 11 वां लग्न कुम्भ हुआ।

15) तिथि – लग्न संख्या में 15 का भाग दें शेष अंक त्तिथि होगी इसको नन्दा को प्रथम मानकर गणना करनी चाहिए ।यहाँ पर उदाहरण में लग्न संख्या 23 है, इसमें 15 का भाग देने पर 23 / 15 = 1 लब्धि आई तथा शेष बचा 8 यह तिथि का अंक होगा, अर्थात आठवीं तिथि जया है।

अत: यह शुभ है।

16) वार – क्षेत्रफल में 11 का गुणाकर 7 का भाग देने पर जो शेष आएगा वही अंक वार

संख्या होगी इसमें वार की गणना रविवार को 1 मानकर करना चाहिए।

उदाहरन में क्षेत्रफल 15625 है इसमें 11 का गुणा किया ,

15625 × 11 = 171875 गुणनफल आया ,इस गुणनफल में 7 का भाग दिया

171875 / 7 = 24553 लब्धि आई तथा शेष 4 बचा यह वार का अंक है ,

अत: चौथा वार रविवार से गिनने पर बुधवार हुआ यह शुभ है।

17) करण – क्षेत्रफल को 9 से गुना कर 11 से भाग देने से जो शेष आवे वही करण होता है।

उदाहरण में क्षेत्रफल 15625 है इसमें 9 का गुना किया ,

15625 × 9 = 140625 गुणनफल आया इसमें 11 का भाग दिया ,

140625 / 11 = 12784 लब्धि आया और शेष 1 बचा यह करण का अंक है

अत: प्रथम करन बव है ।

18) योग – क्षेत्रफल में 13 का गुणा करके 27 से भाग देने पर जो शेष आवें वही अंक योग होता है।

उदाहरण में क्षेत्रफल 15625 है इसमें 13 से गुणा किया ,

15625 × 13 = 203125 गुणनफल प्राप्त हुआ इस गुणनफल में 27 का भाग दिया ,

203125 / 27 = 7523 लब्ध आया तथा शेष 4 बचा यही योग का अंक है अत: चौथा योग सौभाग्य है जो की शुभ है।

6.3.4 वर्ग एवं तत्त्व वास्तु में ज्योतिषीय विचार

19) वर्ग – क्षेत्रफल में ऊंचाई जोडकर उसमें 8 का भाग दें जो शेष आएगा वही वर्ग होगा। यहाँ पर क्षेत्रफल 15625 है तथा ऊंचाई 145 है इन दोनों को जोड़ने से

15625 + 145 = 15770 योगफल हुआ, इस योगफल में 8 का भाग देने पर ,

15770 / 8 = 1971 लब्ध आया तथा शेष 2 आया, सम संख्या शेष आने पर शुभ है 2 सम संख्या है अत: शुभ हुआ।

20) तत्व – क्षेत्रफल में 8 का गुणा कर 60 का भाग दें तथा जो शेषफल आवे उसमें भी 5 का भाग देने पर जो शेष बचे उसे तत्व कहते हैं।

उदाहरण के अनुसार क्षेत्रफल 15625 है इसमें 8 का गुना किया, 15625 × 8 = 125000 गुणनफल आया इस गुणनफल में 60 का भाग दिया, 125000 / 60 = 2083 लब्ध आया तथा 20 शेष बचा इस शेशांक में 5 का भग दिया, 20 / 5 = 4 लब्ध आया तथा शेष 0 बचा अत: भवन का तत्व आकाश हुआ इस प्रकार आप ज्योतिष और वास्तु का सम्बन्ध समझ सकते हैं कि कितना महत्वपूर्ण है।

चूँकि इसके अनुसार आप वास्तु का आसानी से आयु निकाल सकते हैं।आयु निर्धारण करने के लिए शास्त्रों में अनेक विधियां उल्लिखित है इसमें सर्वप्रथम (मिट्टी की वास्तु की आयु निकलने के लिए वास्तु का क्षेत्रफल निकालकर उसमें 8 से गुणा कर के गुणनफल में 60 का भाग देने पर जो शेष बचे वही वास्तु की आयु होती है। उदाहरण - वास्तु की लम्बाई 5 हाथ

5 अंगुल है तथा चौड़ाई 5 हाथ 5 अंगुल है अत:

लम्बाई × चौड़ाई = क्षेत्रफल

5 हाथ 5 अंगुल लम्बाई × 5 हाथ 5 अंगुल चौड़ाई

125 अंगुल × 125 अंगुल = 15625 वर्गफुट, इस उदाहरण में क्षेत्रफल 15625 वर्गफुट है इसमें 8 से गुणा किया।

15625 × 8 = 125000 गुणनफल, इसमें 60 का भाग दिया

125000 / 60 = 2080 लब्ध आया और शेष 20 बचा यही वास्तु की आयु है, अर्थात वास्तु की आयु 20 वर्ष निर्धारित किया जा सकता है।

अर्थात मिट्टी की वास्तुआयु के 10 गुना चुने के वास्तु का आयु होती है इसके अनुसार यहां पर चुने के वास्तु की आयु 200 सौ वर्ष समझना चाहिए।

मिट्टी के घर के आयु के 30 गुना चुने और पत्थर से बनी वास्तु का आयु समझना चाहिए, इसलिए यहां पर इस वास्तु की आयु 600 सौ वर्ष निर्धारित किया गया है।

मिट्टी की वास्तु की आयु के 90 गुना सीसे और पत्थर से बने वास्तु की आयु होती है इसलिए यहां पर इस गृह की आयु 1800 सौ वर्ष की होगी ऐसा समझना चाहिए।

धातु से बनाये गये गृह की आयु मिट्टी की वास्तु की आयु से 370 गुना होता है अत: इसकी आयु 7400 सौ वर्ष समझना चाहिए।

वर्तमान समय में लोहा – सीमेन्ट – रेत- पत्थर से भवन आदि निर्माण किये जाते हैं, इसकी आयु चुने के मकान के बराबर ही आयु जानना चाहिए।

इस पाठ में आयु और आय दोनों विषयों को सामान्यतया बताने का प्रयास किया गया है जिससे को आप ज्योतिष और वास्तु के अन्त: सम्बन्ध से परिचित हों चूँकि कुल आय 8 प्रकार के होते हैं,अब यहां पर आय को समझते हैं –

क्रम संख्या	आय का नाम	दिशा	फल
1 पहला	ध्वज	पूर्व	शुभ
2 दूसरा	धूम्र	आग्नेय	अशुभ
3 तीसरा	सिंह	दक्षिण	शुभ
4 चौथा	श्वान	नैऋत्य	अशुभ
5 पांचवां	वृष	पश्चिम	शुभ
6 छठवां	खर	वायव्य	अशुभ
7 सातवां	गज	उत्तर	शुभ
8 आठवां	ध्वांक्ष	ईशान	अशुभ

चारों ओर नीव की भूमि (अर्थात दिवार करने की भूमि) को छोड़कर मध्य में जो भूमि है उसकी लम्बाई – चौड़ाई गृहस्वामी के हाथ से नापकर उसका आपस में गुणाकर क्षेत्रफल निकालना चाहिए, इसमें आठ का भाग देने पर जो शेष आवे उसे ध्वज आदि से आय समझना चाहिए। इसकी उपयोगिता मुख्यरूप से द्वार निर्धारण में किया जाता है

साथ ही वास्तु स्वामी के आय का भी विचार किया जाता है चूँकि स्थान के अनुसार आय का विभाजन इस प्रकार समझना चाहिए, ध्वज –गज –सिंह ये तीनों आय उत्तम स्थानों में देना चाहिए। ध्वज आय सर्वत्र देना चाहिए, गज – सिंह –तथा वृष आय गाँव – किला आदि स्थानों में देना चाहिए ,वापी –कूप –तालाब शैया में गज आय श्रेष्ठ है, सिंहासन आदि आशन में आय श्रेष्ठ है, भोजनपात्र में वृष आय, तथा छत्र –तोरण आदि में ध्वज आय श्रेष्ठ है, नगर –प्रसाद – देवालय सब प्रकार के घर में वृष, गज एवं सिंह ये तीनों आय दे सकते हैं। स्वान आय म्लेक्ष्छों के घरों में तथा ध्वांक्ष आय तपस्वियों के उपाश्रम ,मठ ,कुटी आदि में देना चाहिए। भोजन बनाने के कक्ष में तथा अग्नि से आजीविका करने वाले, रसोईया, लोहार आदि के घर में धूम्र आय देना उपयुक्त होता है। ब्राह्मण के घर के लिए ध्वज आय, क्षत्रिय के घर के लिए सिंह आय, वैश्य के घर के लिए वृष आय शुद्र तथा म्लेक्ष्छों के घर में स्वान आय तथा मुनि –साधू –सन्यासी के आश्रम में ध्वाक्ष आय ग्रहण करना चाहिए।

अब यहां पर आय के अनुसार गृह स्वामी के लिए कैसा रहेगा उसका गृह इस बात को समझते हैं, निम्नलिखित सरणी के अनुसार मनुष्य के नाम का प्रथम अक्षर जिस अंक में हो उस अंक में मनुष्य के नाम का प्रथम अक्षर की संख्या का गुनाकर 8 का भाग दे शेष जो आएगा उसको ध्वज आदि आय समझना चाहिए।

14	27	2	12	15	8	4	3	5	6 9
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ अं
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प फ
ब	भ	म	य	र	ल	च	श	ष	स ह

उदाहरण – शीतल चन्द्र के लिए श के खाने में 3 अंक प्राप्त हो रहा है, शीतल चन्द्र की नाम राशि का प्रथम अक्षर संख्या 5 है इनका आपस में गुना करने पर 3 x 5 = 15 गुणनफल आया तथा शेष 7 रहा यही ध्वज आदि क्रम से 7 वीं आय गज आय होगी यह आय शीतल चन्द्र की है। अब यहां मुख्य बात यह है कि वास्तु की आय के साथ मनुष्य के आय को मिला कर देखना चाहिए कि वह शुभ है या अशुभ है इसलिए अब यहाँ शीतलचन्द्र के भवन की आय का विचार करना आवश्यक है।

इनके मकान की लम्बाई है 9 हाथ और चौड़ाई है 3 हाथ, नियमानुसार, लम्बाई x चौड़ाई = क्षेत्रफल 9 हाथ × 3 हाथ = 27 वर्ग हाथ क्षेत्रफल हुआ, इस क्षेत्रफल में 8 का भाग देने से शेष 3 रहा अर्थात तीसरी आय सिंह है। यह आय गृहपति के आय का भक्ष्य है अत: मृत्यु कारक होने के कारण अशुभ है। अब यही मकान यदि एक- एक अंगुल अधिक कर दिया जाय तो शीतल चन्द्र के मकान की आय का आकलन इस प्रकार करना चाहिए –

शीतल चन्द्र के मकान की लम्बाई = 9 हाथ 1 अंगुल

शीतल चन्द्र के मकान की चौड़ाई = 3 हाथ 1 अंगुल, लम्बाई x चौड़ाई = क्षेत्रफल

(9 हाथ + 1 अंगुल) x (3 हाथ + 1 अंगुल)= 217 x 73 = 15841 गुणनफल आया, इसमें 8 का भाग देने पर लब्धि 1980 आया तथा शेष 1 बचा यह शीतल चन्द्र के मकान का प्रथम आय ध्वज आय हुआ यह आय भक्ष्य नहीं है शुभ तथा श्रेष्ठ फलदायक है इसी तरह सब जगह समझना चाहिए।

6.4 सारांश

चूँकि वास्तुशास्त्र और ज्योतिष का आरम्भ काल से ही अनन्य सम्बन्ध रहा है एवं वैदिक साहित्य का अभिन्न अंग होने के साथ अथर्व वेद के उपवेद के रूप में भी (स्थापत्य वेद) को जाना जाता है। एवं वेद के षडंगों में ज्योतिष का भी महत्वपूर्ण स्थान है, इन दोनों विषयों की विश्वसनीयता प्रचुर मात्रा में समाज में ब्याप्त है। और भी विशेष बात यह है कि वास्तुशास्त्र और ज्योतिष के अन्त: सम्बन्ध से जिसमें गृह, प्रसाद, महल, देवालय, उद्यान, वापी विविध मण्डप नगर इत्यादि के निर्माण का इस पाठ में चर्चा किया गया है।चूँकि गृहारम्भ काल से ही ज्योतिष के अनुसार किस मास में घर बनाना आरम्भ करेंगे तो क्या शुभाशुभ फल होगा इत्यादि अनेक विषयों का सम्बन्ध यहां पर आपको देखने को मिलेगा, ग्रामवास, काकिणी विचार, मण्डलेश एवं मुख्य द्वार आदि विचार गृह प्रवेश में लग्नफल एवं कलश चक्र विचार आदि, क्षेत्रफल, नक्षत्र दिशा, नक्षत्र वैर, व्यय, तारा, नाडी, राशि, राशिस्वामी, गृह का नामाद्याक्षर, अंशक, लग्न, तिथि,वार, करण, योग आदि विचार, वर्ग एवं तत्व आदि वास्तु में ज्योतिषीय विषयों के अन्त: सम्बन्ध को समझाते हुए समाज को अवगत करायेंगे तथा मुझे आशा है कि यह पाठ आप सभी को सनातन परम्परा एवं ज्ञान विज्ञान की धारा सहित वास्तु एवं ज्योतिष का महत्वपूर्ण हिस्सा होगा जिससे कि आप मूल तथ्यों को समझ कर दिशा निर्देश करेंगे।

6.5 शब्दावली

चिरकाल	=	पुराने समय से
मण्डलेश	=	का सम्बन्ध उस भूमि से है जहां पर आप घर बनाने जा रहें हैं।
वृषवास्तु चक्र	=	सूर्य के नक्षत्र से 7 नक्षत्र अशुभ ,8 से 18 नक्षत्र शुभ उसके बाद 19 से 28 नक्षत्र तक अशुभ होता है जिसे वृषवास्तु चक्र कहते हैं।
वर्ग	=	अ – क –च – ट –त – प –य –श
स्वामी	=	गरुड़, विलाव, सिंह, स्वान, सर्प, मूषक, मृग और मेष
काकिणी	=	अंक विशेष (शेशांक)
पश्चिमाभिमुखी	=	पश्चिम की ओर मुख
द्वार	=	दरवाजा
पूर्वाभिमुख	=	पूर्व की ओर मुख वाला
अवर्गादि	=	8 वर्ग
गृह स्वामी	=	घर का स्वामी
द्युत	=	जुआ
भूस्वामी	=	जमीन का मालिक

ब्राह्मण वर्ण राशि	=	कर्क- वृश्चिक – मीन
क्षत्रिय वर्ण राशि	=	मेष – सिंह – धनु
वैश्य वर्ण राशि	=	वृष – कन्या – मकर
वाम सूर्य	=	1, 8, 5, 2, 11वें भाव में सूर्य के रहने पर पुर्वादि दिशा के गृह में वाम सूर्य कहे जाते हैं।

6.6 उपयोगी पुस्तकें

1. गृहवास्तुप्रदीप, डॉ. (श्री मती) शैलजा पाण्डेय, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. वृहद्वास्तुमाला, सम्पादक – डॉ.ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, डॉ. रवि शर्मा, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन
3. वस्तुसारसंग्रह, लेखक – आचर्य श्री कमलाकान्त शुक्ल, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी
4. भवनभास्कर, लेखक – राजेन्द्र कुमार धवन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी संबत 2057, गीता प्रकाशन गोरखपुर
5. वास्तुचिन्तामणि, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बड़जात्या, श्री प्रज्ञाश्रमण दिगम्बर जैन संस्कृति न्यास, ज्योति निलय गरुड़ खाम्ब चौक इतवारी नागपुर
6. शिल्पदीपक, सम्पादक – डॉ. श्री कृष्ण जुगनु, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी
7. देव शिल्प (मन्दिर वास्तु एवं स्थापत्य), रचयिता –सिधान्त रत्नाकर, सम्पादक – नरेन्द्र कुमार बडजात्या छिंदवाड़ा, वर्ष –सिद्धान्त क्षेत्र नैनागिरी 15 /07 / 2000

6.7 बोध प्रश्न

1. वास्तु और ज्योतिष का अन्त: सम्बन्ध प्रस्तुत कीजिए ?
2. गृहारम्भ में मास एवं राशिफल को लिखिए ?
3. ज्योतिष और वास्तु के अनुसार ग्राम वास विचार लिखिए ?
4. भवन में मुख्यद्वार विचार कीजिए ?
5. वर्ग और तत्व का विचार करके लिखिए ?
6. क्षेत्रफल, आय, नक्षत्रगण, तथा नक्षत्र दिशा का विचार कीजिए ?